प्रकाशक—

। पुस्तक-भण्डार,

दरीबा कलाँ,

दिल्ली।



मुद्रक

भारत प्रिंटिंग वर्क्स,

बाज़ार सीताराम,

दिल्ली।

प्रेमोपहार

श्री———————————————

हिन्दी की सब प्रकार की उत्तमोत्तम
पुस्तकें मंगाने का पता—
सस्ता-साहित्य-मण्डल
अजमेर.



इस पुस्तक की भूमिका लिखने का, अपने मित्र श्री० श्रीगोविन्द हयारण जी का अनुरोध, मैंने बहुत संकोच के साथ तभी स्वीकार किया जब मुझे उन्होंने मुझे बतलाया कि बार-बार प्रार्थना करने पर भी अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने इसमें असमर्थता प्रकट की। मेरे संकोच का कारण यह था कि उन्होंने जो पुस्तक तैयार की है वह समाज में एक बम के धड़ाके का काम करेगी। यह जहाँ पढ़ी जायगी वहाँ कुछ-न-कुछ हलचल मचे बिना न रहेगी। इसमें लिखी गई बातों के जानने के बाद किसी भी व्यक्ति के लिये आश्चर्य और संतोष के भावों को रोक सकना असम्भव हो जावेगा। अनेक पाठक तो शायद पुस्तक में लिखी गयी बातों की यथार्थता पर सहसा विश्वास भी न कर सकेंगे। परन्तु मैं ऐसे पाठकों को विश्वास दिला सकता हूँ कि जो इस में लिखा गया है उसमें झूठ तनिक भी नहीं है। हाँ,

इतना अवश्य हो सकता है कि किसी राजा में ये बुराइयाँ न हों और किसी में थोड़ी या बहुत हों। इस पुस्तक के लेखक श्री० हयारण जी को अनेक देशी रियासतों के हालात का सप्रमाण परिचय है और कई रियासतों में वह स्वयं रहकर विश्वस्त सूत्रों द्वारा उल्लिखित बातों की सचाई जान चुके हैं। इतना होने पर भी उन्होंने जो लिखा है वह बहुत क़लम थामकर लिखा है और अनेक प्रसङ्गों पर तो उन्हें विवशतः कानून के विचित्र बन्धनों और रियासती राजाओं की विशिष्ट सुरक्षित स्थिति का ध्यान रखते हुए ख़ून खौलाने वाली सचाइयों का भी ज़िक्र बहुत ही अर्थहीन से शब्दों में करना पड़ा है। इनमें से अनेक बातें तो ऐसी हैं जिनकी निदर्शक घटनायें महीनों तक समाचार-पत्रों में प्रकाशित हो कर आम लोगों की दिलचस्पी का विषय बन चुकी हैं, परन्तु लेखक ने उनका भी ज़िक्र प्रायः नहीं ही किया। क्योंकि श्री हयारणजी का उद्देश्य इस पुस्तक के लिखने में किसी राजा-विशेष को बदनाम करना नहीं है।

यह भी सम्भव है कि सत्साहित्य और सदाचार की परख खुरदबीन से करने वाले कोई कोई सज्जन इस पुस्तक का लेखन और प्रकाशन सुरुचि-पूर्ण न बतलावें। ऐसे महानुभावों की नाजुक तबियत बहाल रखने के लिये निवेदन है कि जिन बुराइयों का संग्रह इस पुस्तक में है,

वे बिना प्रकाशन की आँच के कभी भस्म हुआ ही नहीं करतीं। आज से १५-२० वर्ष पहिले तक संसार में और विशेषतः सभ्य कहलाने वाले यूरोप और अमरीका में स्त्रियों का गुप्त व्यवहार इतना अधिक और विभित्स रूप से प्रचलित था कि लण्डन, पेरिस, न्यूयार्क आदि नगरों की बात ही क्या, कलकत्ता, शंघाई, सिंगापुर आदि बन्दरगाहों तक में प्रति मास सैंकड़ों विदेशी स्त्रियां आकर इन्द्रिय-लोलुप धनिकों के हाथ बिका करती थीं। जब कुछ व्यक्तियों और संस्थाओं द्वारा इस व्यापार की बीभत्सता और भयंकरता प्रकाशित करके इसके विरुद्ध आन्दोलन हुआ तब आरम्भ में उसे कुरुचि-पूर्ण कहा गया, पर अन्त को इसी आन्दोलन का फल हुआ कि अनेक देशों में कठिन कानून बनें, पुलिस सर्वत्र सतर्क हुई और इस जघन्य व्यापार का अन्त हो सका। मैं इस पुस्तक को भी अपने देश की एक ऐसी अत्यन्त छिपी हुई और जघन्य बुराई का प्रकाशक समझता हूँ जिससे हजारों नहीं—लाखों व्यक्तियों की हानि हो रही है, न जाने प्रतिदिन कितनी अबलाओं का सतीत्व धूल में मिल रहा है, कितने युवक चरित्र-भ्रष्ट, स्वास्थ्य-भ्रष्ट और पथ-भ्रष्ट हो रहे हैं और कितने ही परिवारों का उद्यान बियावान बन रहा है। यही कारण है कि मैं इस पुस्तक को समाज के लिये उपयोगी समझता हूँ।

इसकी भूमिका किसी प्रख्यात तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति-द्वारा लिखा जाना उचित था, जो न हो सकने पर ही मुझे यह काम निभाना पड़ा।

सब्जीमण्डी, दिल्ली
शरद् पूर्णिमा, १९८८ वि० | रामगोपाल, विद्यालंकार

लेखक का वक्तव्य

अवध के नवाबों को विलास प्रिय बतलाया जाता है। इतिहासकारों ने भी उन्हें विलासी सिद्ध किया है। उनकी विलास-लीला की कहानियाँ सुनकर लोग आश्चर्य करने लगते हैं, पर आजकल के कुछ भारतीय नरेशों की विलास-लीला ने तो उन कहानियों पर धूल झोंक दी। अवध के नवाब विलासप्रिय थे पर अमानुषिक अत्याचारी न थे। वह अपने मनोविनोद के लिये, अपने ऐशो-आराम के लिये अनेक बेगमें रखते थे पर ऐसा अमानुषिक एवं हृदय दहला देने वाला व्यभिचार न करते थे जैसा आजकल के कुछ देशी नरेश कर रहे हैं। इन नरेशों की विलास-लीला कहानियाँ सुनकर हृदय थर्रा जाता है, कलेजा काँप उठता है, शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। उन कहानियों पर सरल स्वभाव एवं साधु प्रकृति के मनुष्यों को तो विश्वास भी न होगा पर जिनको दुर्भाग्य से देशी नरेशों के सम्पर्क में रहने का अवसर मिला है अथवा जो देशी राज्यों में रहते हैं वे जानते हैं कि इन नरेशों के राजमहलों में किसी भी नारकीय घटना का होना असम्भव नहीं है। यदि यह नरेश अपनी काम पिपासा शान्त करने के लिये वेश्यायें रखते हों या अनेक रानियां रखते हों तब भी गनीमत, पर वह तो अपने आनन्द के लिये सभ्यता असभ्यता का विचार नहीं

करते, वह मदमस्त हो प्राकृतिक या अप्राकृतिक का ध्यान नहीं रखते और उचित अनुचित को तिलाञ्जलि दे बैठते हैं। वह विलास-लीला के लिये नित नये अविष्कार सोचा करते हैं। उन अविष्कारों में वह प्रजा की गाढ़ी कमाई का पैसा पानी की तरह बहा देते हैं। वह अपनी इच्छापूर्ति के लिये अथवा मनोविनोद के लिये रानियों, महारानियों, सुन्दर वेश्याओं, प्रजा की बहू बेटियों, नौजवान अर्दलियों, तरुण दासियों, एवं सुन्दर 'चाकलेटों' से व्यभिचार करने अथवा बलवान अफ़सरों, दरबारियों, मित्रों एवं अर्दलियों से पापाचार कराने में भी नहीं शरमाते, संसार उनकी विलास-लीला की कहानियों को सुनकर भले ही शर्मा जावे पर उन्हें लज्जा नहीं आती। वह इस मनोविनोद के लिये भारी से भारी अमानुषिक अत्याचार कर डालते हैं पर 'सर्वाधिकारी' होने के कारण उनकी ओर कोई उँगली भी नहीं उठाता। उनके व्यभिचार को यदि 'पाशविक अत्याचार' के नाम से भी पुकारा जाय तो अत्युक्ति नहीं है।

भारत के सभी देशी नरेश ऐसे नहीं हैं। जहाँ कुछ घोर व्यभिचारी, अत्याचारी और विलासी हैं वहाँ कुछ धर्मात्मा भी हैं। वह ऐसे हैं जिन्हें सच्चे अर्थ में 'नरेश' कहा जा सकता है। वह अपना धर्म पहचानते हैं, कर्म को समझते हैं। वह दूसरे की इज्जत को अपनी इज्जत मानते हैं। वह किसी दूसरे की ओर आँख उठाकर देखना भी पाप

समझते हैं । वह अपनी महारानियों से ही संतुष्ट हैं।

इस पुस्तक में न कुछ नयी बातें हैं और न अत्युक्ति का समावेश है। सम्पादकों एवं आलोचकों की कृपा से सभी बातें समय समय पर प्रकाश में आ चुकीं हैं । मैंने तो केवल संग्रह मात्र कर दिया है जिसमें हिन्दी के अनेक पत्र अदालतों की रिपोर्ट; देशी राज्यों के सम्वन्धी कुछ अन्य कागजात, और गुजराती एवं अंग्रेज़ी के कुछ पत्रों से सहायता लेनी पड़ी है । मैंने अपना नमक मिर्च नहीं मिलाया है।

इस पुस्तक के लिखने में मेरा उद्देश्य क्या है? इस सम्वन्ध में कोई भ्रम न फैले, इसलिये मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैं किसी नरेश या नरेश-समुदाय को बदनाम नहीं करना चाहता. मैंने पुस्तक में हर प्रकार से किसी व्यक्ति विशेष या किसी विशेष नरेश को वदनाम न करने का प्रयत्न किया है।

मैं उन व्यक्तियों में से नहीं हूँ जो देशी राज्यों को अच्छी दृष्टि से नहीं देखते अथवा देशी राज्यों को ही मिटा देने के पक्षपाती हैं। मैं देशी राज्यों का पक्षपाती हूँ, मुझे उनके अस्तित्व पर भारतीय होने के कारण अभिमान है, मैं उनकी उन्नति चाहता हूँ, मुझे देशी राज्यों में रहने तथा नरेशों के सम्पर्क में रहने के कारण वास्तविक स्थिति का अधिक बोध हुआ और इससे देशी राज्यों के प्रति प्रेम

और भी बढ़ गया। उसी प्रेम ने केवल सुधार की दृष्टि से इस पुस्तक के लिखने को मुझे बाध्य किया है। मैं चाहता हूँ कि ऐसी घटनायें विशेष प्रकाश में आ जावें जिससे समाज की आँखें खुलें। जब तक समाज की आँखें नहीं खुलती तब तक तो अन्धकार में अनर्थ होता ही रहता है।

मेरी आदिक इच्छा है कि देशी नरेश सच्चे अर्थ में नरेश बनें और भारतीय भारत (Indian India) में सच्चा राम राज्य स्थापित हो तभी भारत के नकशे में चित्रित पीला रंग शोभायमान होगा।

मुझे यहाँ पर पत्र-सम्पादकों, नेताओं एवं पाठकों से एक प्रार्थना कर देनी है, वह इसे 'घासलेटी साहित्य' समझ-कर रद्दी की टोकरी में न डाल रखें। मैंने जो कुछ लिखा है उस पर गंभीरता पूर्वक विचार कर। मुझे विश्वास है कि यदि उन्होंने मेरी यह प्रार्थना स्वीकार करली तो उन्हें अपने समाज को (क्योंकि देशी राज्य भारतीय समाजसे पृथक नहीं है) इस दशा पर चार आँसू अवश्य ही बहाना पड़ेंगे।

भगवान्, दया करो! इन देशी नरेशों, उनके मुसाहिबों, स्वार्थी अधिकारियों और पापी कर्मचारियों को सद्बुद्धि दो जिससे वह सुधार करके सच्चे प्रजा-पालक बनें।

दिल्ली,
श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
१९३१ ई०

श्रीगोविन्द हयारण।

विलासी नरेशों से

राजन् !

लीजिये, यह पुस्तक आपकी सेवा में ही समर्पित है। आपको खिजाने के लिये नहीं, आपको बदनाम करने के लिये नहीं, आपकी खिल्लियाँ उड़ाने के लिये नहीं, केवल सुधार की दृष्टि से और श्रद्धा एवं प्रेमपूर्वक ! इसे पढ़िये, एक बार शान्त चित्त से विचार कीजिये कि आपका क्या कर्त्तव्य है ? आप क्या कर रहे हैं ? प्रजा—जिसके प्रतिपालक आप हैं—किस दशा में है ? यह वीसवीं शताब्दी है, संसार में सभ्यता का प्रकाश फैल रहा है, भारत स्वाधीनता की ओर अग्रसर हो रहा है और अपने प्राचीन गौरवपूर्ण पद को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा है। जागिये, अब तक हुआ सो हुआ, पर अब कलङ्क को मिटाइये और भारतीयों के श्रद्धाभाजन बनिये।

—लेखक



और भी बढ़ गया। उसी प्रेम ने केवल सुधार की दृष्टि से इस पुस्तक के लिखने को मुझे बाध्य किया है। मैं चाहता हूँ कि ऐसी घटनायें विशेष प्रकाश में आ जावें जिससे समाज की आँखें खुलें। जब तक समाज की आँखें नहीं खुलती तब तक तो अन्धकार में अनर्थ होता ही रहता है।

मेरी आर्दिक इच्छा है कि देशी नरेश सच्चे अर्थ में नरेश बनें और भारतीय भारत (Indian India) में सच्चा राम राज्य स्थापित हो तभी भारत के नकशे में चित्रित पीला रंग शोभायमान होगा।

मुझे यहाँ पर पत्र-सम्पादकों, नेताओं एवं पाठकों से एक प्रार्थना कर देनी है, वह इसे 'घासलेटी साहित्य' समझकर रद्दी की टोकरी में न डाल रखें। मैंने जो कुछ लिखा है उस पर गंभीरता पूर्वक विचार करें। मुझे विश्वास है कि यदि उन्होंने मेरी यह प्रार्थना स्वीकार करली तो उन्हें अपने समाज को (क्योंकि देशी राज्य भारतीय समाजसे पृथक नहीं है) इस दशा पर चार आँसू अवश्य ही बहाना पड़ेंगे।

भगवान्, दया करो! इन देशी नरेशों, उनके मुसाहिबों, स्वार्थी अधिकारियों और पापी कर्मचारियों को सद्‌बुद्धि दो जिससे वह सुधार करके सच्चे प्रजा-पालक बनें।

दिल्ली,

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

१९३१ ई०

श्रीगोविन्द हयारण।

विलासी नरेशों से

राजन् !

लीजिये, यह पुस्तक आपकी सेवा में ही समर्पित है। आपको खिजाने के लिये नहीं, आपको बदनाम करने के लिये नहीं, आपकी खिल्लियाँ उड़ाने के लिये नहीं, केवल सुधार की दृष्टि से और श्रद्धा एवं प्रेमपूर्वक! इसे पढ़िये, एक बार शान्त चित्त से विचार कीजिये कि आपका क्या कर्त्तव्य है? आप क्या कर रहे हैं? प्रजा—जिसके प्रतिपालक आप हैं—किस दशा में है? यह बीसवीं शताब्दी है, संसार में सभ्यता का प्रकाश फैल रहा है, भारत स्वाधीनता की ओर अग्रसर हो रहा है और अपने प्राचीन गौरवपूर्ण पद को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा है। जागिये, अब तक हुआ सो हुआ, पर अब कलङ्क को मिटाइये और भारतीयों के श्रद्धाभाजन बनिये।

—लेखक



हमारा निवेदन

बा० श्रीगोविन्द ह्यारणजी को देशी राज्यों का अच्छा अनुभव है। वह कई देशी राज्यों में रह चुके हैं, कई नरेशों से उनका घनिष्ट सम्बन्ध भी रहा है। उन्होंने देशी राज्यों-सम्बन्धी ख़ासा मसाला संग्रह किया है। प्रस्तुत पुस्तक उनके कई वर्ष के परिश्रम का फल है। इस बीसवीं शताब्दी में भी यदि ऐसी घटनायें हों—जैसी पुस्तक में दी गयी हैं—तो यह हमारे लिये लज्जा की बात है। हमने इस पुस्तक को केवल सुधार की दृष्टि से प्रकाशित करने का आयोजन किया है। चाहे हिन्दी-प्रेमी अपनावें या न अपनावें, पर यदि इसे पढ़कर एक भी राज्य में कुछ सुधार हुआ तो हम अपने परिश्रम और व्यय को सफल समझेंगे।

—प्रकाशक



विषय-सूची

रनवासों में

(१)

जिन देशी नरेशों के यहाँ केवल एक ही रानी है उनकी संख्या बहुत थोड़ी है। अधिकांश नरेश एक से अधिक विवाह करना या अनेक रानी बना लेना राज्य की शान समझते हैं। बहुत से राज्यों में अनेक महारानियाँ हैं। कुछ-कुछ राज्यों में तो रानियों की संख्या सौ से भी अधिक पहुँच गयी है। उन राज्यों में व्यभिचार का आधिक्य होना कितना स्वाभाविक है, यह सहज में ही अनुमान किया जा सकता है। एक व्यक्ति सैकड़ों विवाहित अथवा रखेली स्त्रियों की काम-लिप्सा कहाँ तक शान्त कर सकता है, यह सोचने की वात है। प्रायः देखा गया है कि सैकड़ों महारानियों में से दो-चार ही ऐसी सौभाग्यशालिनी होती हैं जिन्हें पति-प्रेम प्राप्त हो जाता है। उनमें भी स्थायी प्रेम नहीं होता। राजा साहब कुछ दिन तो एक रानी के प्रेम-पाश में बँधते हैं, और कुछ दिन दूसरी के। थोड़े दिनों बाद वह भी सूखी-माला की भाँति त्याज्य हो जाती है और

फिर तीसरी की तक़दीर खुलती है। शेष रानियाँ राज-महलों में बन्द अपनी तक़दीर ठोंका करती हैं। वह प्रकृति के विरुद्ध 'सती' बनकर कैसे जीवन व्यतीत कर सकती हैं जब कि वह दूषित वायु-मण्डल में रहती हों, विलास-लीला के सभी साधन प्राप्त हों और शिक्षा का अभाव हो अथवा विलास-लीला की तालीम दी जा चुकी हो ?

सभी रानियाँ स्वेच्छा से रानी बनती हों, यह बात नहीं है। कुछ के माता-पिता धन के प्रलोभन से और कुछ के राज्य-भय से अपनी बेटियाँ राजा को विवाह देते हैं। राजा की दृष्टि जिस सुन्दर कन्या पर पड़ती है, उसके माता-पिता को भारी प्रलोभन दिये जाते हैं अथवा पर्याप्त धन दिया जाता है जिससे वह अपनी बेटी को 'रानी' बना देते हैं। राजा सुन्दर स्त्रियों को रानी बनाने के लिये साम, दाम, दण्ड, भेद आदि सभी प्रकार की नीति से काम लेते हैं। कहीं-कहीं तो ऐसा भी देखा गया है कि किसी सुन्दर स्त्री पर राजा की दृष्टि पड़ी या किसी मुसाहिब ने किसी स्त्री के सौन्दर्य की प्रशंसा की तो झट उसी स्त्री को रानी बनाने की ठान ली गयी। वह स्त्री विवाहित है, उसका पति मौजूद है, पति अपनी स्त्री नहीं देना चाहता, प्रलोभन-राज्यभय आदि उसे नहीं झुका सकते तो राजा साहब ने किसी न किसी प्रकार उसकी स्त्री छीन ली, उसके पति को यमपुर पहुँचवा दिया और उस स्त्री को रानी बना लिया।

ऐसी रानियों का जीवन सुख से व्यतीत नहीं होता। राजा साहब एक-दो बार उससे अपनी काम-पिपासा शान्त करके फिर ध्यान नहीं देते। वह फिर उसी प्रकार राज-महलों में पड़ी रहती हैं जिस प्रकार सूंघे हुए पुष्प फेंक दिये जाते हैं। वह रानी या महारानी समझी जाती हैं पर उनकी दशा पशुओं से भी बदतर होती है। वह महलों में पड़ी रहें पर किसी से बातचीत न करें। उनको एक प्रकार से क़ैद तनहाई (Solitary confinement) हो जाती है। वह अपने जीवन में दाम्पत्य-प्रेम या गार्हस्थ-जीवन का अनुभव नहीं कर पातीं। उनका जीवन साधारण दासी के समान भी नहीं होता। वह सांसारिक सुखों के लिये तड़पती रहती हैं पर ओफ़् तक नहीं कर पातीं। एक बार एक महा-रानी ने बम्बई के एक सुप्रसिद्ध दैनिक-पत्र में अपनी दुःख-पूर्ण कथा इस प्रकार प्रकाशित करवाई थी—

"मुझ सरीखी स्त्री का, एक दैनिकपत्र के ज़रिये सार्व-जनिक सहानुभूति प्राप्त करने का प्रयत्न करना विचित्र मालूम होगा परन्तु मानवी दुःख, वेदनाओं और सहन-शीलता की भी हद होती है। जन्म भर इसी प्रकार के दुःख और कष्ट सहना असम्भव है। एक साधारण कीड़े की भी प्राण-रक्षा का प्रयत्न किया जाता है परन्तु राज-घराने की, हमारी जैसी अनेक हिन्दू महिलायें, इन कीड़ों से भी अधिक बदतर जीवन व्यतीत कर रही हैं परन्तु अब समय

ने पलटा खाया है और पर्दानशीन स्त्रियों ने नये युग में प्रवेश किया है। स्त्रियाँ समझती हैं कि दुःख हमारे भाग्य के साथ लगा है, उसे भोगना वह अपना धर्म समझती हैं। और कुत्ते के समान दुतकारी जाने पर भी वे दुःख का घूंट पी जाती हैं, उनके दुःख की पराकाष्ठा हो चुकी है। हम भी मनुष्य हैं, हमें थोड़ी बहुत शिक्षा मिली है और मस्तिष्क में नवीन कल्पनाओं का प्रादुर्भाव हो गया है। हम स्वयं-निर्णय के स्वप्न भी देखने लगी हैं।

"मेरी जैसी स्थिति में रहने वाली स्त्रियों की शादी बहुत कम उम्र में हो जाती है। हमें उस समय का कुछ भी ख्याल नहीं रहता। मेरा मायका साधारण स्थिति का है। मेरी शिक्षा मेरे भाई के साथ हुई। मेरे माँ-बाप अपने को सुधारक समझते हैं। मेरी शादी के समय मेरे पतिदेव को यथाशक्ति अच्छी-अच्छी वस्तुएँ भेंट की गयीं और धन भी दिया गया। धन शायद इस अभिप्राय से दिया गया हो कि उसका मैं भी उपयोग कर सकूं पर उस पर मेरा कुछ भी अधिकार नहीं है। विवाह के विषय में मेरी इतनी ही धारणा थी कि दूसरे के घर में सुख से रहूँगी। मेरा सम्बन्ध राजघराने में हुआ है अतः नित्य नयी उमंगें मेरे मन में हिलोरें भरती थीं। जब मैं ससुराल गयी तो मेरी नौकरानी मेरे ही साथ जाने को थी पर वह न गयी। मेरी व्यवस्था अच्छी थी, मुझे वस्त्राभूषण भी अच्छे मिले थे

और मुझ से व्यवहार भी प्रेम का किया जाता था।

"एक दिन मुझे मालूम हुआ कि मेरे पति की दो स्त्रियाँ और हैं, इस पर अन्य स्त्रियों के सहवास में उनको कई सप्ताह बीत जाते हैं। इस बात ने मेरे हृदय पर गहरी चोट पहुँचाई और लज्जा ने मुझे विस्मित कर दिया। जब मेरे पति मेरे पास आते तो मैं सम्मान के साथ उनसे व्यवहार करती थी किन्तु उन पर इस व्यवहार का असर नहीं होता था। मुझसे वह मनमानी बातें करते थे। मुझे विश्वास नहीं होता था कि मनुष्य भी इतना घृणात्मक और पशुओं जैसा व्यवहार करते हैं।

"मैंने मायके जाने की ठानी पर उस समय मेरी मौसी ने मुझे समझा बुझाकर रोक लिया, मैं ससुराल में ही रही। कुल की मर्यादा और वैवाहिक चरित्र की पवित्रता की कल्पना मेरे मन से बिलकुल विलीन हो गयी। मैंने देखा कि किसी मनुष्य के राजा होने पर उसमें पवित्रता नहीं रहती। मैंने अनुभव किया कि सामान्य मनुष्यों के गुण भी पतिदेव में नहीं हैं। मुझे निश्चय हो गया कि जीवन-पर्यन्त पतिदेव की इच्छा पर ही निर्भर रहना पड़ेगा। पूरी रियासत का जवाहर-खाना मेरे आधीन था पर वास्तव में उसकी एक भी चीज़ पर मेरा अधिकार न था। इसी प्रकार मेरे कपड़े, घोड़ा, गाड़ी, मोटर, नौकर आदि पर भी मेरा कोई अधिकार न था। निजी ख़र्च के लिये रक़म मञ्जूर

की जाती थी पर उसमें से पति की आज्ञा बिना एक पाई भी व्यय करने का मुझे अधिकार न था। इस प्रकार की पराधीनता मुझ पर सोच समझ कर लादी गई थी। हर प्रकार से मुझे अपमान सहना पड़ता था और मुझ से कहा जाता था कि देशी रजवाड़ों में स्वाभिमान नहीं होता। इन सब बातों पर मैंने अत्याचार सहे। मैंने उनके लिये कभी-कभी शिकायत भी की पर फल कुछ नहीं हुआ।

"मेरी अवस्था स्वर्ण के पिंजड़े में बन्द कैदी के समान है। अपने सन्निकट लोगों के सिवा दूसरों से मिलने का मुझे काफ़ी अवसर नहीं मिलता। इसलिये न किसी से अपने दुखों का निवेदन ही कर सकती हूँ, और न किसी से सलाह ही ले सकती हूँ। एक बार अपने बच्चों पर होने वाले अन्याय के लिये मैं पतिदेव से लड़ पड़ी तब से मैं उनसे दूर ही रहती हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि ईश्वर ने हिन्दू-नरेशों को ऐसी बुद्धि क्यों दी है?

"मेरे समान हतभागिनी मेरी अन्य बहिनों की तरफ से मैं लड़ना चाहती हूँ, क्यों कि उनकी दशा रास्ते के भिखारी से भी अधिक कष्टकर है। हमारे साथ गुलामों जैसा व्यवहार किया जाता है। ईश्वर ने हमें हमारे पतिदेव के सुख-उपयोग के लिये ही पैदा किया है। हमारा स्वाभिमान नष्ट कर दिया जाता है। यदि हम अपने अधिकारों की आवाज़ उठाती हैं तो हमारे पतिदेव हमारी बुरी हालत करते हैं,

दण्ड देते हैं और हमारे जीवन का अन्त कर देने को धमकी देते हैं।

"हम उतारी हुइ माला के समान हैं। हम अपने पतिदेवों के खिलौना हैं। वे हमें सजाते हैं, नचाते हैं, इच्छानुसार वस्त्रों से विहीन भी कर देते हैं और दूसरे इष्ट मित्रों द्वारा व्यभिचार कराने को मजबूर करते हैं। पूर्व समय के रशियन मुसलमानों को अपेक्षा हमारी स्थिति कहीं अधिक कष्टप्रद है।"

इससे सहज में ही प्रकट हो जाता है कि देशी नरेश अपनी विवाहित रानियों तक को दरबारियों, आफीसरों, सरदारों एवं इष्ट मित्रों से, अपनी आँखों के सामने, व्यभिचार करने को मजबूर करने में भी नहीं शरमाते। कितना अधःपतन है? कैसा नारकीय जीवन है? इस नारकीय जीवन से ऊब कर अनेक स्वाभिमानी रानियाँ आत्म-हत्या तक कर डालतीं हैं। देश में न जाने कितनी हतभागिनी देवियों ने इस नारकीय जीवन से अपनी संसार-यात्रा समाप्त कर डाली है क्यों कि ऐसी घटनायें प्रायः सार्वजनिक प्रकाश में नहीं आतीं।

राजपूताने के एक देशी नरेश के सम्बन्ध में—ऐसी ही कहानी—सुनी जाती है। कहा जाता है कि वह स्वयं तो चाकलेट हैं (यद्यपि उनकी आयु ५० वर्ष से अधिक ही होगी) पर पापाचार देखकर उनका विशेष मनोरञ्जन

होता है। प्रायः नौजवान हट्टे-कट्टे व्यक्तियों को ही अपना ए० डी० सी० बनाते हैं। जब राज्य में कोई स्थान रिक्त होता है तब समाचार-पत्रों में आवश्यकता प्रकाशित करवाई जाती है। उस आवश्यकता में यह अवश्य लिखा होता है कि Aply with photo अर्थात् अपने चित्र के साथ प्रार्थना-पत्र भेजें! प्रार्थी फोटो देखने पर यदि वलवान हट्टा कट्टा मालूम हुआ तो उसे—चाहे योग्यता हो न हो—भारी वेतन पर बुला लिया जाता है। प्रायः रात्रि के समय भोजन के अवसर पर ऐसे सभी अफ़सर, इष्टमित्र, ए० डी० सी० आदि महल में हाज़िर होते हैं। नाच-गाना एवं भोजन के पश्चात् राजा साहब अपने साथियों सहित 'महल की सैर' करने को जाते हैं। महल की वासिनी रानियाँ अथवा रखेली प्रेमिकायें एक एक कमरे में आराम करती हुई होती हैं। सैर-पार्टी के अन्दर पहुँचने पर विजली का बटन दवा दिया जाता है जिससे सभी कमरों में अन्धकार छा जाता है। राजा साहब अपने प्रत्येक साथी को एक एक कमरे में जाने की आज्ञा देते हैं। जब वह सभी पापाचार में लिप्त हो जाते हैं तो राजा साहब बड़े अभिमान के साथ बिजली का बटन दबा देते हैं जिससे सभी कमरों में प्रकाश हो जाता है। उस समय राजा साहब सभी कमरों में घूमते हैं और पापाचार अपने नेत्रों से देखकर अपने को धन्य समझते हैं। वह किसी किसी का मज़ाक भी उड़ा देते हैं कि "आप तो विल-

कुल ही ठण्डे पड़ गये।" ओफ़! पाठक अनुमान लगा सकते हैं कि ऐसी रानियों का जीवन कितना लज्जापूर्ण एवं घृणित हो जाता होगा?

ऐसी सैर का परिणाम भी एक बार भयङ्कर हुआ। एक रानी ने अपने घृणित जीवन से ऊब कर आत्महत्या कर डाली। इस आत्महत्या का कारण यह बतलाया जाता है कि एक बार राजा साहब के साले—जो एक दूसरे राज्य के युवराज थे—आये। नित्य की भाँति रात्रि के समय नाच-गाना एवं भोजन के उपरान्त 'सैर' की व्यवस्था हुई। वह युवराज भी साथ गये। महल में घोर अन्धकार था। उसी अन्धकार में एक कमरे में साले साहब को भी जाने की आज्ञा हुई। बड़ी प्रसन्नता से गये और वहाँ आराम करने वाली स्त्री के साथ पापाचार करने लगे। राजा साहब ने बिजली का बटन दबा दिया। प्रकाश होते ही उस रानी ने देखा कि मैं अपने सहोदर के ही साथ...... । राजा साहब खिलखिला कर हँस पड़े और भाई बहिन का संयोग देख-कर खूब मज़ाक उड़ाने लगे। साले साहब बड़े ही लज्जित हुए और नाराज़ होकर उसी समय चल दिये पर रानी ने लज्जावश रात्रि में आत्महत्या करली। यह समाचार सर्व साधारण के पास तक नहीं पहुँचा पर कुछ दिनों के बाद समय ने अन्त में सारी पोल खोल दी। उस समय सम्वाद-पत्रों में खूब इसकी चर्चा चली पर अब क्या हो सकता था?

राजा साहब ने समाचार-पत्रों को झूठा कह दिया और रानी को मृत्यु का कारण हृदय की गति रुक जाना बतलाया। इन्हीं राजा साहब की एक रखेली रानी ने एक ए० डी० सी० को—जो कुछ दिनों नौकरी करके दूसरे राज्य में चला गया था—एक दूसरे ए० डी० सी० द्वारा अपना सन्देशा इन शब्दों में भेजा था—"जब से गये तब से कुछ सुधि भी न ली। यों तो यहाँ अपनी काम पिपासा शान्त करने के लिये रोज़ ही कोई न कोई मिल जाता है पर तुम जैसा मस्त कोई नज़र नहीं आता। प्यारे! क्या एक बार को ही·········की दोस्ती थी? मैं तो समझती थी कि अब मुझे अपना दिलवर मिल गया पर वह आशा व्यर्थ ही गयी। यदि तुम चाहो और प्रबन्ध कर सको तो मुझे भी यहाँ से निकाल लो। रोज़ रोज़ दिल बेचने में तो मैं परेशान हो गयी। लिखो, क्या कहते हो? × × × ×।" ओफ़! हद हो गयी।

एक दूसरे राज्य के सम्बन्ध में एक पत्र में एक कहानी इस प्रकार प्रकाशित हुई थी "······के राजा साहब स्वयं शराब पीकर मस्त हो जाते हैं। इष्ट-मित्रों को तथा राज्य के अफ़सरों को भी शराब पिलाकर मस्त कर दिया जाता है। जब सब पर शैतान अपनी सवारी गाँठ लेता है तब राजा साहब बहादुर अपनी तीन-चार चुनी हुई रानियों को बुलवाकर उन्हें पारी-पारी अफ़सरों तथा मित्रों की काम-लिप्सा शान्त करने की आज्ञा देते हैं। आप स्वयं एक

ऊँची कुर्सी पर बैठकर इस अमानुषिक दुराचार का दृश्य आशापूर्ण नेत्रों से देखते और आनन्दित होते हैं। कुछ ही दिनों की बात है, इस नारकीय जीवन से दुखी होकर एक अभागिनी रानी ने विलास-भवन में प्रवेश करते ही तमञ्चे से एक ऐसे अफ़सर को मार डाला था जो उसे अपने बाहु-पाश में लेने को आगे बढ़ा था। बाद में राजा साहब को तमञ्चे का निशाना बनाते हुए कहा था—'मैं सदा आप की कृपा पर निर्भर थी पर आज आपका जीवन मेरी कृपा पर निर्भर है। यदि मैं चाहूँ, आपकी हरकतों के लिये, आपको मार कर प्रजा का तथा बहिनों का उपकार और पृथ्वी का बोझ बात की बात में हलका कर सकती हूँ पर ऐसा करना नहीं चाहती। आपके सौभाग्य से मैं हिन्दू-स्त्री हूँ और जिस वातावरण में पड़ी हूँ वह मुझे ऐसा करने से रोकता है। यही कारण है कि मैं आप पर हाथ नहीं छोड़ रही हूँ पर साथ ही मैंने भी इस नारकीय जीवन से छुटकारा पाने की शपथ खाली है।' इतना कहने के बाद उस रानी ने उसी विलास-भवन में अपने ही तमञ्चा मार कर अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दी। व्यभिचार के कीड़े मंत्र-मुग्ध की भाँति खड़े यह सारा दृश्य देखते रहे। किसी को भी आगे बढ़कर रानी को आत्म-हत्या करने से रोकने का साहस न हुआ। जब सब को नशा उतरा तो उन्हें अपने पतन का होश आया पर अब क्या हो सकता था?

प्रातःकाल यह खबर फैला दी गयी कि हृदय की गति रुक जाने से एक रानी की मृत्यु हो गयी।"

एक रियासत की एक रानी ने ब्रिटिश सरकार के एक अफ़सर के पास गुप्त रूप से एक दरख्वास्त भेजी थी। उस में उसने अपनी आत्मकथा लिखते हुए उस अफ़सर से सहायता की प्रार्थना की थी। उस दरख्वास्त का सार इस प्रकार था—"सम्भवतः आप जानते होंगे कि राजमहलों में रानियां बहुत ही सुखी होंगी पर वस्तुतः इसके विपरीत ही है। जितना कष्ट हम राजमहलों में क़ैद रानियां उठाती हैं उतना कष्ट एक भिखारिणी भी न उठाती होगी। हमारा स्वाभिमान, सतीत्व तथा सदाचार बिल्कुल ही नष्ट कर दिया गया है। मैं तो अपने को एक वेश्या से भी बदतर समझ बैठी हूँ। वेश्या यदि व्यभिचार में लिप्त होती है तो धन के लिये, पर उसे अधिक समय के लिये न सही, थोड़े ही समय के लिये सही—पति-प्रेम का रस-स्वादन भी मिल जाता है। वह कुछ न कुछ समय एक व्यक्ति की अङ्कशायिनी बन कर रहती है पर मेरी दशा तो उससे भी अधिक पापपूर्ण है। मुझे तो अपने पतिदेव की कृपा से रोज़ाना एक न एक गँवार, उजड्ड ए० डी० सी० की काम-पिपासा शान्त करनी पड़ती है। आज कोई अफ़सर आकर अपनी इच्छा पूर्ति करता है तो कल कोई ए० डी० सी० आकर। आज यदि राजा साहब का कोई मित्र आता है

तो कल कोई सरदार ! मानों हम रानियां उनके मनो-रञ्जन एवं व्यभिचार के लिये ही बनायी गयी हैं । पति-प्रेम का तो मैं नाम भी नहीं जानती । मैं इस नारकीय जीवन से ऊब गयी हूँ पर मुझे कोई साधन नहीं मिलता कि मैं इससे छुटकारा पा लूँ । दिन-रात हम सब रानियों पर क़ैदियों जैसी निगाह रखी जाती है । यदि आप मुझे इस नारकीय जीवन से छुटकारा पाने में सहायता दे सकें तो बड़ी कृपा होगी ।" पर इस प्रार्थना का कोई फल न हुआ । वह ब्रिटिश-अफ़सर राजा साहब के व्यक्तिगत मामले में हस्त-क्षेप न कर सका । उसने रानी साहिबा के प्रति सहानुभूति प्रकट की तथा सहायता करने में अपने को असमर्थ बतलाया ।

राजपूताने की एक रियासत की विलासलीला का वर्णन एक पत्र ने इन शब्दों में किया है—"राजपूताने के एक रियासत की विलासलीला तो अपनी चरमसीमा लांघ चुकी थी । सौभाग्य से वे राजा साहब अब इस क्षणभङ्गुर संसार में नहीं हैं, पृथ्वी उनके बोझ से हल्की हो चुकी है, पर अन्य तरीक़ों द्वारा उनकी स्मृति अन्य रूपों में अब तक क़ायम है । उन नारकीय राजा साहब के जीवनकाल में—जिसे अभी बहुत दिन नहीं हुए—कैसा अमानुषिक व्यभि-चार होता था, उसका एक उदाहरण यहां दे देना पर्याप्त होगा, जो हमारे एक परम प्रतिष्ठित और आदरणीय मित्र ने हमें बतलाया है ।

"राजा साहब नपुन्सक थे, पर चाहते थे समस्त सांसारिक सुखों का उपभोग करना। आपने अपनी नपुन्सकता के इलाज का जो आविष्कार किया था, वह उन्हीं के उपयुक्त था। आपने एक भवन ऐसा बनवाया था जिसके बीच में २० सीटों का आमोद चक्र (Joy Wheel) लगाया गया था और ऊपरी भाग में एक रत्नजटित कुर्सी लगाई गई थी। 'आमोदचक्र' का ब्योरा इस प्रकार था। चारों ओर बीस रेल के सेकेण्डक्लास जैसे बर्थ (Birth) बने थे। सब पर बिजली की बत्तियाँ फिट थीं और इन सभों के बटन (Switch) ऊपर रत्न-जटित कुर्सी के पास लगे थे। जब महाराजा साहब की इच्छा प्रज्वलित होती, वे तुरन्त मुसाहिबों को इसकी सूचना देते। तुरन्त बीस स्त्री पुरुषों के जोड़े इस विलास-भवन में बुलाये जाते और घण्टी बजाते ही स्त्री पुरुषों का एक एक जोड़ा 'आमोदचक्र' में एक एक खाने में लेट जाता और महाराजा साहब ऊपरकी रत्न-जटित कुर्सी पर विराजमान होकर बत्तियाँ गुल कर देते। दूसरी घण्टी बजते ही सब सम्भोग आरम्भ कर देते। बीच बीच में बत्तियाँ जला और बुझाकर महाराजा साहब आनन्द लाभ करते। फिर जोश में आकर वे नीचे उतर आते और बड़े गौर से इन स्त्री-पुरुष रूपी कल पुर्जों का निरीक्षण करते। जब उनकी काम-पिपासा पूर्ण रूपेण जाग्रत होती तो [illegible] भी पुरुष को हटाकर स्वयं × × × ×।"

राजपूताने की एक रियासत के महाराजा ६५ वर्ष की उम्र में मरे। इनके रनवास में सात-आठ सौ स्त्रियाँ थीं। ये महाराज ख़ूब शराब पीते थे। महाराज १०-१५ स्त्रियाँ प्रतिदिन अपने लिये चुनते थे। सप्ताह में एक वार ज़नाना दरवार होता उसमें सव स्त्रियाँ एकत्रित होतीं, महाराज उनमें से सप्ताह भर के लिये चुन लेते थे। राज्य की राजधानी से तीन-चार मील दूर एक गाँव है। वहां एक वड़ा भारी हौज़ था। उस हौज़ में वहुत सी मश्कें छोड़ी जातीं और उन पर नङ्गी स्त्रियां वैठाई जातीं। महाराज भी नंगे होकर घुस पड़ते और न वर्णन करने योग्य कुचेष्टायें करते। रनवास में जो स्त्रियां थीं उनके कई विभाग थे जिन्हें अखाड़ा कहा जाता था। प्रत्येक विभाग में ५०-६० स्त्रियां होती थीं। प्रत्येक पर एक प्रधान स्त्री होती थी। महाराज अपनी इच्छानुसार चाहे जिस अखाड़े की स्त्रियां वुला लिया करते थे। महाराज प्रायः एक स्त्री का एक वार ही 'इस्तेमाल' करते थे फिर उन वेचारियों को पुरुषों के दर्शन भी नहीं होने पाते थे। यह अपने मुसाहिवों द्वारा राज्य की सुन्दर-सुन्दर स्त्रियों और लड़कियों को किसी न किसी प्रकार वुलवा लेते और अपनी रानी वना लेते थे।

इसी प्रकार एक राज्य के सम्बन्ध में कहा जाता है कि उसके महाराज ने आवू में अपनी एक रानी को एक ए० डी० सी० की सेवा में जाने की आज्ञा

दी। वह रानी इस आज्ञापालन करने में आनाकानी करने लगी तो उसे ऊपर से गिरा कर मार दिया जब नरेशगण स्वयं अपनी उपस्थिति में रानियों के सतीत्व का सर्वनाश कर देते हैं तो उनकी अनुपस्थिति में रानियों का सदाचार पूर्वक रहना सम्भव नहीं है। जब ऐसे नरेश दो दो एक एक वर्ष के लिये यूरोप-यात्रा में चले जाते हैं तब उनकी रानियां क्या करती हैं यह निम्न घटना से पता। चल जावेगा।

बम्बई प्रान्त के एक देशी नरेश प्रायः यूरोप ही रहा करते हैं और अपना अधिकांश समय यूरोपीय ललनाओं के साथ क्रीड़ा करने में व्यतीत करते हैं। इनकी महारानी गर्मी में संयुक्तप्रान्त के एक पहाड़ी मुक़ाम पर रहती हैं। पति देव की कृपा से महारानी साहिबा शराब पीने, अंग्रेजी नाच नाचने तथा अन्य प्रकार की विलास-लीला में निपुण हैं। एक बार यूरोप के दो यात्री इस पहाड़ी मुक़ाम पर आये। वह पैदल ही संसार-यात्रा कर रहे थे। वे हर मुक़ाम पर प्रसिद्ध प्रसिद्ध व्यक्तियों के हस्ताक्षर लेते थे। इस पहाड़ी मुक़ाम पर भी उन्होंने ऐसा ही किया। वह महारानी साहिब की कोठी पर पहुँचे। महारानी से भेंट की और अपना उद्देश्य बतलाया। महारानी ने देखा कि यह यात्री तरुण एवं सुन्दर हैं तो कह दिया कि इस समय अवकाश नहीं, रात्रि के समय आओ। वह सन्ध्या के

पश्चात् महारानी की कोठी पर पहुँचे। महारानी ने भोजन एवं शराब में रात्रि के १२ बजे तक उन्हें लगाया। १२ बजे के बाद महारानी साहिबा एक यूरोपियन यात्री को अपने सोने के कमरे में ले गयीं। वहाँ महारानी ने उस यूरोपियन यात्री के साथ अपनी काम-पिपासा शान्त की। उस पहाड़ी मुक़ाम से जब वह यूरोपियन यात्री दिल्ली आये तो उन्होंने एक पत्र सम्पादक से सारी घटना कह सुनाई।

ऐसी घटनायें प्रायः होती ही रहती हैं पर सार्वजनिक प्रकाश में नहीं आतीं। जब कभी एक दो घटनाओं का भण्डा फूट जाता है तब समाचार पत्रों में खूब चर्चा चलती है और सभ्य संसार रनवासों की विलास-लीला सुनकर दाँतों तले उँगली दबाने लगता है।

कहीं कहीं ऐसा भी होता है कि महाराज की अनुपस्थिति में—यूरोप यात्रा अथवा मृत्यु के बाद—उनकी रानियाँ जो महाराज के सामने सदाचारिणी बनी रहती हैं—राज्य के उच्च कर्मचारियों अथवा निज सेवकों के साथ व्यभिचार-लीला में फँस जाती हैं। मध्य भारत के एक बड़े राज्य के सम्बन्ध में आजकल ऐसा ही कहा जाता है। उस राज्य के राजा साहब अन्य राजाओं की भाँति विलासी न थे। वह दुराचार को पसन्द न करते थे इसलिये उनकी रानियाँ भी नारकीय जीवन से दूर रहीं पर जब राजा सा० का स्वर्गवास होगया तो रानियों ने एक-एक उच्च अफ़सर

से अपना सम्बन्ध कर लिया । कहा जाता है कि एक निकट सम्बन्धी ने राज्य, कुल और महाराज की इज़्ज़त के नाम पर एक महारानी से अपील की कि आप·········को त्याग दें पर महारानी साहिबा ने एक न सुनी । वह अपने प्रेमी को साथ लेकर भ्रमण को निकल पड़ीं और दो वर्ष तक भारत के अनेक शहरों में रह कर अपने प्रेमी उच्च अफ़सर के साथ अठखेलियाँ करती रहीं ।

अन्य घटनाओं को देखते हुए उपरोक्त घटना बहुत ही साधारण है और उसमें कोई विशेषता नहीं है पर है वह भी व्यभिचार ही । अब एक और हृदय दहला देने वाली घटना सुनिये । यह घटना कुछ पुरानी है ।

एक राजा साहब कुछ समय के लिये यूरोप-यात्रा के लिये गये । रानी साहिबा को यहीं छोड़ गये । उनके एक पटरानी तथा कई रखेली रानियाँ थीं एक अफ़सर पर राजा सा० की बड़ी कृपा थी । अपनी पटरानी तथा अन्य रखेली रानियों के साथ विलास-लीला करने में उस अफ़सर को भी सम्मिलित कर लेते थे । एक केमरा साथ रहता था । वह अफ़सर राजा सा० की आज्ञा से उनकी विलास-लीला के फ़ोटो लिया करता था । स्वयं भी कभी-कभी उस लीला में भाग ले लेता था । राजा सा० यूरोप जाते समय उस अफ़सर को इञ्चार्ज पेलेस (Incharge Palace) बना गये । रानी साहिबा, रखेली रानियों तथा बाल-बच्चों

की देखभाल उसी अफ़सर के अधीन कर गये। उस अफ़-सर को विलास-लीला का मजा आ चुका था। राजा सा० की अनुपस्थिति में उसने भी वैसी ही लीला रचाना आरम्भ की, रखेली रानियाँ तो राजा साहब के सामने से ही उस अफ़सर से लिप्त थीं अतः उन्हें इसमें कोई आपत्ति न हुई। वे रात्रि-समय रासलीला रचाने लगीं पर पटरानी साहिबा ने उसमें सम्मिलित होने से इनकार किया। उस अफ़सर ने बहुत आग्रह के साथ रानी साहिबा को विलास-भवन में बुलाया पर वह न आईं। अन्त में एक दिन उस अफ़सर ने वह फोटो—जो राजा साहब की आज्ञा से रानी-राजा सम्भोग के दृष्य के लिये थे—रानी साहिबा को दिखलाये और उन चित्रों को अन्य लोगों पर प्रकट कर देने की धमकी दी। रानी सहम गयी और अपनी बदनामी एवं लोकलज्जा के लिये डरी। वह अफ़सर की बात मानने को तैयार हो गयी पर वह अफ़सर नर-पिशाच था। राजा साहब के मुँह लगे रहने के कारण उसका दिमाग़ आसमान पर चढ़ चुका था। उसने अपने अन्य दो अफ़सरों को निमन्त्रित किया। रात्रि को महल में ही दावत देने के बाद उन्हें विलास-भवन में ले गया और पटरानी साहिबा के साथ सभी दुष्टों ने पारी-पारी काम-पिपासा शान्त की। रानी युवती थी। वह इस अत्याचार को सह न सकी। दूसरे ही दिन वह स्वर्ग सिधारी! उस अफ़सर ने राजा

साहब को तार द्वारा सूचना दे दी कि हृदय की गति ब
हो गई थी। राजा साहब को भी विश्वास हो गया प
राज्य में कानाफूंसी होने लगी। जब राजा साहब यूरोप
यात्रा से वापिस आये तो उन दो साथी अफ़सरों में से ए
ने सारी पोल खोल दी और अपना भी अपराध स्वीकार कर
लिया। राजा साहब ने अपने मुँहलगे अफ़सर को रियासत
से निकाल दिया।

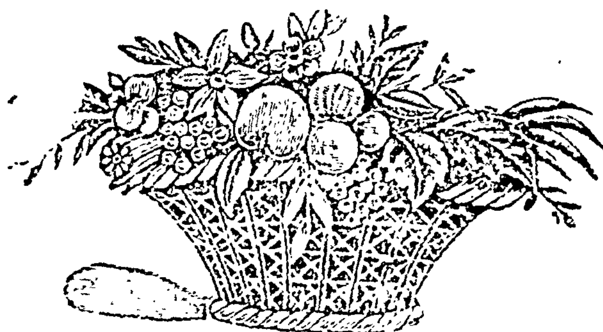
विलास-लीला के प्रेमी नरेशों में दया भी नहीं रहती।
वह अपनी रानियों को उनकी इच्छानुसार कार्य करने से
इनकार करने पर मनमाना दण्ड देते हैं। एक रानी को
इसी प्रकार आजन्म एकान्त-वास को सज़ा मिली थी। एक
सिपाही ने—जो राजा साहब का पुराना नौकर था और
निर्वासित रानी साहिबा पर पहरेदार नियुक्त किया गया
था—उस दुःखित रानी की कहानी इस प्रकार सुनाई थी।

"मैं राजा साहब का पुराना नौकर था। मेरे ऊपर
राजा साहब का भारी विश्वास था। मैं ही राजा साहब की
अरदली में रहता था अतः अन्तःपुर को खबर थोड़ी बहुत
मुझे मालूम हो जाती थीं। राजा साहब की विलास-लीला
की चर्चा हम सब सिपाही आपस में किया करते थे। एक
दिन मालूम हुआ कि छोटी रानी साहिबा को पृथक एक
सुनसान महल में रखने की आज्ञा हुई है। राजा साहब का
छोटी रानी साहिबा पर बड़ा प्रेम था। वह सुन्दर भी थीं।

उनके पृथक रक्खे जाने की आज्ञा सुनकर सब को आश्चर्य हुआ पर ज़बान तक तो कोई हिला ही नहीं सकता था। रानी साहिबा को पृथक रखने के लिये एक ऐसे महल की तजवीज़ हुई जो बहुत ही प्राचीन था, खाली पड़ा हुआ था, छोटा था, हवादार भी अधिक न था, उसमें कभी कभी अरदली लोग रहने लगते थे। रानी साहिबा उसमें भेज दी गयीं, मैं वहाँ पहरेदार नियुक्त किया गया क्यों कि राजा-साहब का मुझपर अधिक विश्वास था। केवल एक दासी निर्वासित रानी के साथ रक्खी गयी। रानी साहिबा का अपराध क्या था यह पहिले किसी को पता न चला, पर बाद में दासी से मुझे मालूम हुआ कि रानी साहिबा ने राजा का हुक्म न माना था। हुक्म क्या था? यह कहते हुए मुझे शर्म आती है पर क्या करूं—सभी कहना सुनना पड़ता है। अपने मालिक की बात मैं किसी से कहना नहीं चाहता था पर राज-महलों के अत्याचार देखकर मेरा हृदय भर आया है इसी लिये मैं नौकरी से पृथक भी हो गया हूँ।

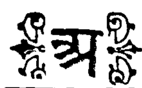
"राजा साहब का हुक्म यह था कि मेरे समान मेरे मित्र……को भी समझो अर्थात् उसे भी अपना पति मानो। राजासाहब में और………में गहरी मित्रता है। समस्त प्रजा इससे असन्तुष्ट है क्योंकि वही मित्र राजा सा० का पतन करा रहा है। बड़ी रानी साहिबा ने सरकार का हुक्म मान लिया पर छोटी रानी साहिबा ने इनकार कर दी

इस पर ही उन्हें निर्वासित होना पड़ा। बड़ी रानी साहिबा राजासाहब के मित्र के साथ खूब रास-लीला रचती हैं पर स्वाभिमानी छोटी रानी सुनसान महल में पड़ी सड़ रही है। उन्हें अनेक प्रकार की यातनायें दी जा रही हैं। मैं उन यातनाओं को नहीं देख सका। उन पर दबाव डाला जा रहा है कि वह अब भी सम्भल जावें अर्थात् बड़ी रानी का अ-करण करें पर वह अपने धर्म से विचलित नहीं होतीं। सरकार (राजासाहब के स्व० पिता) के समय में ऐसा अधर्म कभी नहीं होता था पर अब नया ज़माना है, नयी नयी बातें हैं।"



दुखी-दासियाँ

(२)




भी तक ऐसी ही व्यभिचार-लीलाओं पर प्रकाश डाला गया है जिनका सम्बन्ध रानियों से है। देशी नरेश अन्य प्रकार से भी कुकर्म करते हैं जिनमें दासियों के साथ रास-लीला करना भी सम्मिलित है। प्रायः ऐसा होता है कि प्रत्येक महारानी के साथ—दहेज में कुछ दासियाँ भी आती हैं, वे दासियाँ भिन्न २ राज्यों में भिन्न भिन्न नामों से प्रसिद्ध हैं। कहीं बाँदी कहलाती हैं तो कहीं लौंडी, कहीं लाली के नाम से पुकारी जाती हैं तो कहीं दासी। ये अविवाहिता होती हैं और कुमारी-अवस्था में ही दहेज में दे दी जाती हैं। इनका जीवन महाराजा और महारानी की कृपा पर निर्भर होता है। कभी कभी महारानी किसी किसी दासी को अपने ही नौकरों के साथ विवाह करने की आज्ञा दे देती हैं, नहीं तो सभी आजन्म 'वाल-ब्रह्मचारिणी' रहती हैं। वे विना महारानी की आज्ञा न कहीं आ-जा सकती हैं और न किसी से वातचीत ही कर सकती हैं। कुछ देशी नरेश तो स्वयं इनके साथ व्यभिचार करने लगते हैं। कहीं कहीं ऐसा भी होता है कि इन दासियों

को रानी-राजा के सम्मिलन के समय रूमाल लिये उपस्थित रहना पड़ता है। ओफ़! कैसा घृणित कार्य है? सभ्य संसार तो ऐसी बातों को सुनने में भी शर्मा जावेगा पर ये देशी नरेश ऐसा घृणित कार्य करने तक में नहीं लज्जित होते। करौली के स्वर्गीय कुं० मदनसिंह ने दासियों के साथ होनेवाली व्यभिचार-लीला का अच्छा भण्डाफोड़ किया था पर नरेश क्यों ध्यान देने लगे। आश्चर्य तो यह है कि महाराजा जब स्वयं दासियों को इस नारकीय जीवन में प्रवेश करने के लिये मजबूर करते हैं तब भी उनसे (दासियों से) सदाचारिणी रहने की आशा करते हैं। वह कैसे? सुनिये, जब महारानी अथवा राजा साहब किसी दासी की यह शिकायत सुनते हैं कि वह अमुक व्यक्ति के साथ हँस रही थी अथवा अमुक व्यक्ति से बातचीत कर रही थी तो उस पर मार पड़ती है। सरल हृदय पाठक क्या इन दासियों के घृणित जीवन का अनुमान लगा सकते हैं?

एक बात और है. इन दासियों के प्रायः सन्तान नहीं होती। पाठक आश्चर्य करेंगे कि वह जब ऐसे दूषित वायुमण्डल में रहती हैं फिर भी सन्तान क्यों नहीं होती? कारण यह है कि यदि ऐसी दासियों के सन्तान उत्पन्न होने लगे तो राज-महलों के व्यभिचार का भण्डा ही फूट जावे। भला? 'बाल-ब्रह्मचारिणियों' के सन्तान कहाँ? अपनी शान बनाये रखने एवं बदनामी के भय से प्रायः

राजा साहब, ऐसी दासियों के गर्भिणी होने पर कुछ न कुछ प्रबन्ध करवा देते हैं जिससे सन्तान नहीं उत्पन्न होती। यह कितना भारी अपराध है ? यह कैसा भीषण पाप है ? एक बार एक देशी राज्य में एक दासी की मृत्यु ऐसे ही 'कुछ न कुछ प्रबन्ध' होते समय हो गयी थी, पर ख़बर यह फैला दी गयी कि वह ज्वर में पीड़ित थी।

इन दासियों की दशा इतनी कष्ट-प्रद है कि लेखनी से तो पूरा वर्णन नहीं हो सकता और न लेखकों को दशा का पूरा ज्ञान ही प्राप्त हो सकता है क्यों कि रानी महारानियों की घटनायें तो कभी कभी प्रकाश भी पा जाती हैं पर इन बेचारी दासियों की—राजमहलों की छोटी छोटी—घटनाओं पर न कोई ध्यान देता है और न अधिक उनकी चर्चा ही होती है। इनके सम्बन्ध में बहुत कम घटनाएं हमारे सुनने में आईं पर वे हैं दिल को दहला देने वाली!

एक बार सुना कि किसी राजा साहब ने अपनी महा-रानी के साथ विलास-लीला करते समय एक दासी को रूमाल लिये अपनी ड्यूटी पर हाज़िर रहने की आज्ञा दी। वह दासी हाज़िर तो बराबर रही पर लज्जा के मारे अथवा अन्य किसी कारण से अपना 'कर्त्तव्य' पालन करते समय चूक गयी जिससे राजा साहब के किसी वस्त्र पर धब्बा आ गया। राजा साहब बड़े ही क्रोधी हैं। झट उनके दिमाग़ का पारा चढ़ गया और दो फौज़ी सिपाहियों को बुलवाकर

उस दासी को, उनके सुपुर्द कर दिया। उन्होंने राजा साहब की आज्ञा पाकर पारी-पारी से अपनी काम-पिपासा शान्त की और दासी को इतना परेशान किया कि वह बेहोश हो गयी। जब राजा साहब ने यह समाचार सुना तो बड़े ही प्रसन्न हुए और आज्ञा दी कि होश में आने पर मेरे सामने पेश की जावे। जब वह पुनः सामने लाई गई तो अन्य दो फौजी सिपाहियों को—राजा साहब के ही सामने—पहिली सज़ा की पुनरावृत्ति करने की आज्ञा हुई, दासी तरुण थी। वह 'सज़ा' को न सह सकी और दूसरे दिन उसकी मृत्यु हो गयी। आह! कैसा अमानुषिक अत्याचार? कितना भीषण अपराध?! क्या समाज इन दासियों के उद्धार की ओर भी कभी ध्यान देगा?

एक घटना का विवरण और सुनिये। यह घटना बड़ी ही मर्मस्पर्शी है। एक राजा साहब की दृष्टि अपनी एक दासी पर पड़ी। वह दासी तरुण थी और थी सुन्दर भी। ईश्वर ने उसे अनुपम सौन्दर्य दिया था। रानी साहिबा कुछ चतुर थीं उनका, अपने पतिदेव—राजा साहब—पर कुछ असर था। इससे राजा सा० की हिम्मत, रानी साहिबा की इच्छा के विरुद्ध कार्य करने की, न थी। वह उस तरुण दासी को छिपे रूप में प्रेम करते पर रानी साहिबा दासी को ऐसा न करने की ताड़ना बराबर देती रहतीं। उसकी जान बड़ी आफ़त में पड़ गई। यदि राजा साहब की आज्ञा का

पालन न करे तो आफ़त और रानी साहिबा की बात न माने तो जान तक का भय ! एक बार अवसर पाकर राजा-साहब ने उसे अपने विलास-भवन में बुलवा लिया। जब राजा साहब अपनी काम-पिपासा शान्त करने में मस्त थे, रानी साहिबा आ पहुँची। उनकी फटकार सुनकर राजा सा० तो चलते बने पर बेचारी दासीके ऊपर क्रोध निकाला-जाने लगा। उसने बहुत कुछ विनय प्रार्थना की कि 'मेरा' अपराध नहीं है। मुझे तो राजा साहब ने ही बुलवाया था। मैंने तो प्रार्थना भी की पर न सुनी गयी।" पर उसकी कौन मानता है ? क्रोध में आकर तमञ्चा चला दिया और उसी विलास-भवन में उसके जीवन का अन्त होगया।

जिस समय करौली राज्य के सार्वजनिक कार्यकर्त्ता कुं० मदनसिंह ने सन् १९२२ या २३ में दुखी दासियों के सम्बन्ध में भारतीय समाचार पत्रों में चर्चा छेड़ी उस समय एक देशी राज्य की एक दासी ने अपनी करुण कहानी इस प्रकार बतलाई थी—

"मुझे ऐसा स्मरण आता है कि जब मैं ५-६ वर्ष की थी उसी समय मेरे माता-पिता ने मुझे राजमहल में रख दिया था। मैं बाई जी (महाराज की छोटी बहिन) के साथ रहा करती थी। वह दिन बड़े ही आराम से कटते थे। बाई जी के साथ खेलना, बाई जी के साथ भोजन करना और बाई जी के पास ही एक ही कमरे में सोना

बड़ा ही आनन्द मालूम होता था। अपने घर पर गुदड़ी पर सोती थी पर राजमहल में गद्दा मिलता था। नाना-प्रकार के खाद्य पदार्थ, नाना प्रकार के सुन्दर खिलौने मुझे इतने मोहित कर देते थे कि मैं अपने घर की भी याद न करती। कभी-कभी माँ के पास हो आती थी। मेरा पिता महाराज की अर्दली में रहता था इसलिये कभी-कभी महल में मिल जाता था। उस समय मैं अपने भाग्य की सराहना करती थी। कई वर्ष इसी प्रकार खेल-कूद में बीते। उस समय कभी स्वप्न में भी यह विचार नहीं आया कि मुझे कभी नारकीय जीवन भी व्यतीत करना पड़ेगा। जब मैं बड़ी हुई और सांसारिक बातों का कुछ ज्ञान हुआ तो हृदय में सन्देह होने लगा। महारानी साहिबा के पास जो दासियाँ रहती थीं—कभी-कभी उनसे बातचीत करने का अवसर मिल जाता था। वह मुझसे यही कहती थीं कि 'अभी क्या है? आगे तुम्हें पता चलेगा कि दासी-जीवन कितना कष्ट-प्रद है।' मैं उनकी इस बात पर विचार करती पर कुछ समझ नहीं पाती थी कि रहस्य क्या है? एक बार एक दासी को पिटते हुए देखा उस समय मेरा दिल धड़क उठा। मैं सोचने लगी कि क्या कभी मेरी भी यही दुर्दशा होगी? पर बाई जी के साथ आमोद-प्रमोद में लग जाने पर वह घटना भूल गयी। बाई जी का विवाह हुआ। बड़ी धूमधाम रही। मैं उस समय फूली नहीं समाती थी।

हाय! मुझे क्या पता था कि मैं अपने नर्क में जाने वाली हूँ।

"विवाह के वाद वाई जी की विदा हो गयी। मैं भी उनके साथ यहाँ भेजी गयी। उस समय मुझे अपने माँ-वाप के विछोह का कुछ रंज था पर वाई जी के साथ आने की खुशी भी थी। उस समय मेरी आयु १२-१३ वर्ष की थी और वाई जी की १५ वर्ष को। वाई जी की मुझ पर वड़ी कृपा थी। मैं भी उनसे अपनी वहिन के समान प्रेम रखती थी। दोनों में कभी झगड़ा नहीं हुआ था।

"यहाँ आने पर कुछ दिन तो मुझे विशेष कष्ट नहीं हुआ पर थोड़े समय के वाद ही मेरा दुर्भाग्य जाग उठा। महाराज नवयुवक थे। इंगलैंड-यात्रा भी कर चुके थे। वह शराव में मस्त हो महल में आया करते। महारानी (वाई जी को विवाह के वाद मैं भी महारानी ही कहने लगी थी) साहिवा के पास आते ही वह खूव अठखेलियाँ करते और कभी-कभी मुझे भी वुलाते। मैं लज्जा के मारे जाने में हिचकती पर क्या करती—विवश थी! पहिले तो एक-दो दिन महाराज के वुलाने पर मैं न गयी पर उससे मुझे खूव फटकार सहनी पड़ी। वाद में मैंने यही सोच लिया कि 'दासी हूं' आज्ञा का पालन करना ही होगा। जव महाराज ही ऐसे समय में मुझे वुलाने में नहीं शरमाते तो मैं ही क्यों सङ्कोच करूँ। इस प्रकार विचार करके एक दिन

महाराज के बुलाने पर मैं अन्तःपुर के खास कमरे में चली गयी। वहाँ प्रवेश करते ही मेरे सारे शरीर में रोमाञ्च हो गया, मैं अवाक् खड़ी रह गयी, मानों पैर के नीचे से जमीन खिसक गयी हो। मुझे अपनी जिन्दगी में ... दृश्य देखने का पहिला ही अवसर था। लज्जा के मारे ... आँखें बन्द कर लीं और चुपचाप खड़ी रही। महाराज ... में मस्त महारानी के साथ बिल्कुल नग्न होकर ... रहे थे।

"मैं युवावस्था में प्रवेश कर रही थी। यौव... चिह्न प्रकट होने लगे थे। दुर्भाग्य से ईश्वर ने मु... कुछ सौन्दर्य भी प्रदान किया था। बस, यही सौन्दर्य मुझे नारकीय जीवन में ले गया। महाराज ने मुझे खड़ा हुआ देख बड़ी कड़ी आवाज से कहा कि 'आँख क्यों बन्द करती है। तुझे जिस कार्य के लिये यहाँ बुलाया है वह समझ ले।' मैं सहम गयी। आँखें खोल दीं। लज्जा और भय से बड़ी धीमी आवाज से मैंने कहा—'जो हुक्म सरकार!'

"इसके बाद मुझे क्या करना पड़ा—यह सुनकर लोगों को आश्चर्य होगा पर रंगमहलों की लीला विचित्र है। मैं तो यह ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि चाहे वह कंगाल घर में जन्म दे पर इन राजमहलों में रहने का किसी को अवसर न दे।

"हाँ, तो बाद में मुझे रूमाल दिया गया। मैंने बड़े-ही

सङ्कोच से, पर भय के कारण—आज्ञा का पालन किया। उस दिन मेरे हृदय में बड़ी ग्लानि उत्पन्न हुई पर बाद में मुझे प्रतिदिन यही ड्यूटी मिलने लगी। मैं भी कुछ 'सँभल' गयी! संकोच दूर हो गया। मेरे हृदय में कामाग्नि अधिक प्रज्वलित होने लगी। आयु भी पूर्ण होरही थी। मेरा हृदय अधिक चञ्चल बन गया।

"अब मैं अपनी कामाग्नि को शान्त करने का उपाय ढूंढ़ने लगी पर मेरे ऊपर बड़ी कड़ी दृष्टि रखी जाती थी। मैं किसी नौकर से भी बातचीत नहीं कर पाती थी। जब अपनी ड्यूटी पर जाती तो मेरे हृदय में कामाग्नि अधिक प्रज्वलित हो उठती। मैंने एक बार बड़े ही संकोच से महारानी साहिबा से प्रार्थना की कि 'सरकार! मेरा भी कोई प्रबन्ध कर दिया जाय' पर इस प्रार्थना का उत्तर लात घूंसे से मिला। मुझे पिटवाया गया।

"एक दिन अवसर पाकर मैं भाग निकली। तभी से यहां (ब्रिटिश भारत में) आ गयी हूँ। मेरा सर्वनाश हो चुका है क्योंकि पहिले तो भगाने वाले व्यक्ति से यौवनावस्था का आनन्द लूटा पर बाद में वह भी छोड़ कर भाग गया। अब मेरी स्थिति एक 'वेश्या' से कम नहीं है।"

प्रारम्भ में ही यह बतलाया जा चुका है कि कभी-कभी नरेश अपनी किसी-किसी दासी का विवाह भी कर देते हैं पर उन विवाहित दासियों का जीवन भी सुखमय नहीं

होता। एक दरख्वास्त भारत-सरकार के अफ़सरों को अभी हाल में ही दी गयी है इससे विवाहित दासियों की दशा पर भी प्रकाश पड़ता है। दरख्वास्त में लिखा है—

"सम्भवतः श्रीमान् रियासत........की परिस्थिति से अनभिज्ञ नहीं हैं! हिज़ हाइनेस दी महाराजाधिराज......जी बहादुर ने अभी तक ९ शादियाँ की हैं जिनमें से पाँच रानियाँ अब भी मौजूद हैं। इनके अतिरिक्त अनेक पासवान भी हैं। फिर भी ८-९ स्त्रियाँ उनके यहां क़ैद हैं। अभी हाल में महाराज १६ वर्ष की एक लड़की दे......ढ़ से लाये हैं। महाराज की आयु ६२ वर्ष की है।

"मैं हिज़ हाइनेस की पासवान........बाई का नौकर था।........ता बाई जी की दासी थी। लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व मेरा उस दासी से विवाह करा दिया गया। बाद में वह मेरे साथ कई मास तक पत्नी बन कर रही।

"गत वर्ष बिना मेरी जानकारी के वह उड़ा दी गयी। मैं अनेक प्रकार के सन्देह करता रहा। अब मुझे विश्वस्त-सूत्र से पता चला है कि वह महाराज की हिरासत में है। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि उसके साथ पापाचार किया जाता है।

"मैं आपकी शरण में आता हूँ। मैं नहीं समझता कि जब महाराज के पास कई रानियाँ और पासवान हैं फिर मेरी स्त्री को-ही क्यों उड़ाया गया? मैं चाहता हूँ कि मेरी स्त्री दिलवा दी जाय।"

इन घटनाओं से सहृद पाठक समझ गये होंगे कि इन दासियों की दशा कितनी दयनीय है। बेगार प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन होता है, शर्त बन्द कुली प्रथा मिटाने का उद्योग किया जाता है, भारत की आज़ादी के गीत गाये जाते हैं पर क्या किसी ने दासी-प्रथा के विरुद्ध आवाज़ उठाई है? क्या किसी संस्था या नेता ने 'इन नर्क में सड़ने वाली' बेचारी दासियों के कष्टों पर विचार किया है? बाज़ार की वेश्याओं की दशा इन दासियों से कहीं अधिक अच्छी होती है पर इनकी दशा कीड़ों से भी बदतर है। यह मान भी लिया जाय कि देशी नरेश इनके साथ व्यभिचार नहीं करते अथवा राजा-रानी की देखभाल में वह व्यभिचारिणी नहीं बन पातीं पर क्या यह स्वाभाविक है कि ऐसे दूषित वायुमण्डल में—विलास-भवन में—दिनों रात रहती हुई भी वे आजीवन ब्रह्मचारिणी रह सकें? क्या साधारण ज्ञान की दासियाँ प्रकृति के विरुद्ध युद्ध करने में सफल हो सकती हैं? जहाँ की दासियाँ नरेश के कड़े प्रबन्ध के कारण खुले व्यभिचार में नहीं पड़ पातीं, क्या यह सम्भव नहीं कि वे अपनी कामाग्नि शान्त करने के लिये किसी अप्राकृतिक उपाय से काम लेती हों? यह भी तो अधर्म तथा नारकीय कृत्य है!

दासी-प्रथा वास्तव में समाज के लिये कलङ्क रूप है। कुछ नरेशों ने इस प्रथा को बन्द भी कर दिया है पर अभी

अधिकांश रियासतों में यह प्रथा अपना डेरा बनाये हुए है। जनता, देशी नरेश और ब्रिटिश सरकार सभी को इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। जिस दिन देशी राज्यों से यह प्रथा मिट जावेगी उस दिन रियासतें पवित्र हो जावेंगी। इस प्रथा से सैकड़ों 'होनहार माताओं' का जीवन नष्ट होता है और न मालूम, कितनी हत्याएं होती हैं। समाज में व्यभिचार बढ़ने का एक कारण यह प्रथा भी है जो देशी राज्यों में नहीं—वरन उड़ीसा जैसे पिछड़े हुए प्रान्त में बड़े बड़े ज़मींदारों में भी है। जौलाई सन् १९३१ में म० गान्धी ने अपने पत्र 'यङ्ग-इण्डिया' में उड़ीसा प्रान्त का एक पत्र प्रकाशित किया था उससे उपरोक्त कथन की पुष्टि हो जाती है।

क्या सभ्य समाज इस ओर ध्यान देगा ?



नरेशों का वेश्या-प्रेम

(३)

कुछ नरेशों में विलासिता इतनी अधिक बढ़ गई है कि वह अपनी सैकड़ों रानियों तथा दासियों से ही सन्तुष्ट नहीं होते वरन् अपनी काम-पिपासा शान्त करने के लिये वेश्याओं को भी रखते हैं। प्रायः राज्य में दरबार-नायिका के नाम से कुछ वेश्यायें मुलाज़िम होती हैं। दरबार में इनका नाच-गाना होता है। कुछ राज्यों में रात्रि के भोजन के समय इनका 'मुजरा' होता है। संसार के देखने में तो वे दरबार-नायिका होती हैं पर वास्तव में वे विलास-लीला के यन्त्र हैं।

इन्दौर के भूतपूर्व महाराजा सर तुकोजीराव को कौन नहीं जानता ? एक वेश्या के कारण ही उन्हें राज्य से हाथ धोना पड़ा था। पहिले मुमताज़ बेगम (बावला हत्याकाण्ड में ख्याति-प्राप्त वेश्या) की मां महाराज तुकोजीराव की 'सेवा' में थी पर जब मुमताज़ ने यौवनावस्था में प्रवेश किया तो महाराज की दृष्टि उस पर पड़ी। महाराज ने उसे भी अपनी 'सेवा' में रख लिया। बाद में महाराज से कुछ अनबन हो गयी और वह बम्बई में जाकर रहने लगी।

वहाँ मि० बावला से उसका सम्बन्ध हो गया। महाराज उसका वियोग सहन न कर सके। अब तो मुमताज़ को इन्दौर लाने के लिये बड़े-बड़े षड्यन्त्र रचे जाने लगे पर वह सफल न हुए। अन्त में मि० बावला की हत्या करवा दी गयी जिसके फलस्वरूप महाराज तुकोजीराव को गद्दी छोड़ देनी पड़ी और महाराज के कई अफ़सरों को फाँसी की सज़ा मिली। बावला-हत्या-काण्ड और तुकोजीराव-मुमताज़-प्रेम की कहानी इतनी लम्बी है कि एक बड़ा भारी ग्रन्थ तैयार हो सकता है पर वह घटना अभी ताज़ी है और समस्त संसार उसे जानता है, अतः उस पर अधिक लिखना व्यर्थ है।

बुन्देलखण्ड के एक नरेश ने एक वेश्या के प्रेम में हो एक नाटक मण्डली ख़रीद ली थी क्योंकि वह वेश्या उस नाटक कम्पनी में मुलाज़िम थी। उस वेश्या के पीछे काफ़ी धन बर्बाद हुआ। राजा साहब ने अपनी इच्छा पूर्ति करने के बाद वह नाटक कम्पनी फिर बेच दी। राजपूताना के एक नरेश ने वेश्याओं को आड़ में रखने के लिये एक नाटक कम्पनी बना ली थी। ऐसी नाटक कम्पनियों में जो वेश्यायें होती हैं वह दिखावे में एक्ट्रेस (Actress) होती हैं पर उनसे काम लिया जाता है राजा साहब की काम-पिपासा शान्त करने का।

इन वेश्याओं के जब गर्भ स्थिर हो जाता है तो इन्हें

गर्भपात के लिये मजबूर किया जाता है। देश में कितने ही शिशुओं की हत्या इस प्रकार इन व्यभिचारी नरेशों के द्वारा होती रहती है। एक राजा सा० ने एक नाटक कम्पनी बनाई। उसमें उस वेश्या का नाम भी एक्टरों में लिखा दिया जो उनकी 'सेवा' में मुलाजिम थी। संसार को दिखाने के लिये वह नाटक कम्पनी की 'मुलाजिम' हो गयी पर ड्यूटी रहती थी राजा साहब की 'निज-सेवा' में।

एक बार उस वेश्या के गर्भ स्थिर हो गया। उसने राजा साहब से कहा। राजा साहब को बड़ी चिन्ता हो गयी। चिन्ता का कारण बदनामी का भय न था, दूसरा ही था। राजा साहब समझते थे कि यदि पुत्र हुआ तो कोई चिन्ता की बात नहीं, बड़ा होने पर महाराजकुमार की सेवा में नौकर रख लिया जायगा पर लड़की हुई तो अच्छा नहीं। मैं न तो उसे राजकुमारी बना सकूंगा और न वेश्या रहने दूँगा। इसलिये गर्भ ही गिरा दिया जाय। उस वेश्या को गर्भपात के लिये बहुत मजबूर किया गया पर वह इस पर राज़ी न हुई। वह राज्य से अपने घर भाग गयी। बाद में राजा साहब ने उसे बुलाने के लिये बहुत प्रयत्न किया पर वह न आई। अन्त में नाटक कम्पनी के मैनेजर द्वारा कम्पनी के गहने लेकर भाग जाने का इस्तगासा अदालत में दायर करवा दिया गया। अदालत से वारण्ट जारी हुआ। जिस पड़ोसी राज्य में वह वेश्या रहती थी उसमें वारण्ट

वहाँ मि० बावला से उसका सम्बन्ध हो गया। महाराज उसका वियोग सहन न कर सके। अब तो मुमताज़ को इन्दौर लाने के लिये बड़े-बड़े षड्यन्त्र रचे जाने लगे पर वह सफल न हुए। अन्त में मि० बावला की हत्या करवा दी गयी जिसके फलस्वरूप महाराज तुकोजीराव को गद्दी छोड़ देनी पड़ी और महाराज के कई अफ़सरों को फाँसी की सज़ा मिली। बावला-हत्या-काण्ड और तुकोजीराव-मुमताज-प्रेम की कहानी इतनी लम्बी है कि एक बड़ा भारी ग्रन्थ तैयार हो सकता है पर वह घटना अभी ताज़ी है और समस्त संसार उसे जानता है, अतः उस पर अधिक लिखना व्यर्थ है।

बुन्देलखण्ड के एक नरेश ने एक वेश्या के प्रेम में ही एक नाटक मण्डली ख़रीद ली थी क्योंकि वह वेश्या उस नाटक कम्पनी में मुलाजिम थी। उस वेश्या के पीछे काफ़ी धन बर्बाद हुआ। राजा साहब ने अपनी इच्छा पूर्ति करने के बाद वह नाटक कम्पनी फिर बेच दी। राजपूताना के एक नरेश ने वेश्याओं को आड़ में रखने के लिये एक नाटक कम्पनी बना ली थी। ऐसी नाटक कम्पनियों में जो वेश्यायें होती हैं वह दिखावे में एक्ट्रेस (Actress) होती हैं पर इनसे काम लिया जाता है राजा साहब की काम-पिपासा शान्त करने का।

इन वेश्याओं के जब गर्भ स्थिर हो जाता है तो इन्हें

गर्भपात के लिये मजबूर किया जाता है। देश में कितने ही शिशुओं की हत्या इस प्रकार इन व्यभिचारी नरेशों के द्वारा होती रहती है। एक राजा सा० ने एक नाटक कम्पनी बनाई। उसमें उस वेश्या का नाम भी एक्टरों में लिखा दिया जो उनकी 'सेवा' में मुलाज़िम थी। संसार को दिखाने के लिये वह नाटक कम्पनी की 'मुलाज़िम' हो गयी पर ड्यूटी रहती थी राजा साहब की 'निज-सेवा' में।

एक बार उस वेश्या के गर्भ स्थिर हो गया। उसने राजा साहब से कहा। राजा साहब को बड़ी चिन्ता हो गयी। चिन्ता का कारण बदनामी का भय न था, दूसरा ही था। राजा साहब समझते थे कि यदि पुत्र हुआ तो कोई चिन्ता की बात नहीं, बड़ा होने पर महाराजकुमार की सेवा में नौकर रख लिया जायगा पर लड़की हुई तो अच्छा नहीं। मैं न तो उसे राजकुमारी बना सकूंगा और न वेश्या रहने दूँगा। इसलिये गर्भ ही गिरा दिया जाय। उस वेश्या को गर्भपात के लिये बहुत मजबूर किया गया पर वह इस पर राज़ी न हुई। वह राज्य से अपने घर भाग गयी। बाद में राजा साहब ने उसे बुलाने के लिये बहुत प्रयत्न किया पर वह न आई। अन्त में नाटक कम्पनी के मैनेजर द्वारा कम्पनी के गहने लेकर भाग जाने का इस्तग़ासा अदालत में दायर करवा दिया गया। अदालत से वारण्ट जारी हुआ। जिस पड़ोसी राज्य में वह वेश्या रहती थी उसमें वारण्ट

भेजा गया, वह वहाँ गिरफ़्तार कर ली गयी पर राज्य के अधिकारियों ने वारण्ट निकालनेवाले राज्य के सुपुर्द नहीं किया। इस पर दोनों राज्यों में काफ़ी लिखा-पढ़ी हुई, सन्धि की शर्तों की दुहाई दी गयी पर फल कुछ न निकला। उस वेश्या ने गिरफ़्तार होने पर अपने राज्य की रीजेन्सी कौंसिल के प्रेज़ीडेण्ट के सामने जो बयान दिया था वह बड़ा ही रोमाञ्चकारी है। नीचे उसी बयान का कुछ अंश दिया जाता है।

"× × × कोई तीन वर्ष हुए होंगे जब मुझे महाराजा साहब ने एक दावत में आगरा में देखा था। उस समय महाराज ने अपने यहाँ के एक विशेष दरबार में (विशेष शब्द उस त्यौहार के स्थान पर उपयोग किया गया है जिस त्यौहार पर वह दरबार होता है) उपस्थित होने का आग्रह किया। मैंने आग्रह स्वीकार कर लिया। मैं वहाँ गयी और दरबार में अन्य गायिकाओं की भाँति मैंने भी नाचा-गाया। चलते समय मुझे काफ़ी इनाम दी गयी और होली के दरबार में फिर उपस्थित होने का निमन्त्रण दे दिया गया। होली के दरबार में मैं गयी। दरबार की समाप्ति पर जब मैं विदा होने लगी तो दो सौ रुपये मासिक पर महाराज की 'प्राइवेट सेवा' में रहने की नौकरी का आग्रह किया गया। मैंने इसे स्वीकार कर लिया। मेरा नाम 'नाटक कम्पनी' की मुलाज़मत में लिखा दिया गया और वेतन भी वहीं से

मिलता था। एक बार बाँध में एक नाव पर हम लोग सैर कर रहे थे। बीच में सूखी जमीन पर उतरे। मुझसे 'एक साल की नौकरी का एग्रीमेण्ट' लिख देने को कहा गया। मैंने टालना चाहा पर मुझे बहुत मजबूर किया गया। अन्त में मैंने एग्रीमेण्ट पर हस्ताक्षर कर दिये। किसी प्रकार वह साल बीती। महाराजा ने समय-समय पर 'प्रेम-सम्मिलन' (व्यभिचार ?) के अवसर पर मुझे अनेक प्रकार के बहुमूल्य आभूषण भेंट किये। अब जिन आभूषणों को लेकर भाग आने का दोष मेरे सिर लगाया जाता है वे सभी आभूषण महाराज से 'मुलाक़ात' के समय इसी प्रकार भेंट में मिले हैं।

"एक वर्ष के पश्चात् एक दूसरी वेश्या ने—जो अब भाग गयी है और दिल्ली में अपना विवाह कर लिया है—महाराज की निगाह में अन्तर डाल दिया जिससे उनका प्रेम मुझ पर कुछ कम हो गया फिर भी एक वर्ष का नया एग्रीमेण्ट फिर लिखाया गया जो मैंने लिख दिया।

"कुछ दिन बाद मैं गर्भवती हुई। मैंने अपनी मूर्खता से महाराज से कह दिया। महाराज ने ऐसी औषधियाँ खाने की आज्ञा दी जिससे गर्भपात हो जावे पर मैंने अस्वीकार किया। इस पर उनकी दृष्टि में और भी अन्तर आगया। एक बार मैं ज्वर से पीड़ित हुई तो ४० टिकियाँ कुनैन एक साथ खिलाने की कोशिश हुई पर सौभाग्य से मैं बच गयी।

दूसरी बार मुझे एक हाथी पर बैठाया गया और शोर करके हाथी को बिगाड़ दिया गया जिससे उसने मुझे पटक दिया पर सौभाग्य से मैं बाल बाल बच गयी। एक बार शिकार-गाह में हाथी पर बैठा कर मुझे ऐसी घनी झाड़ियों में से निकाला गया जिससे बदन में कांटे चुभ गये और आगे चलकर चीता के मुख में जाने से बच गयी। जब किसी प्रकार भी मेरा अन्त न हुआ तो महाराज ने मुझ से कहा कि यदि लड़की होगी तो मार डाली जावेगी पर लड़का होगा तो महाराज कुमार की अर्दली में रख लिया जावेगा। इन सब घटनाओं से मुझे अपनी एवं अपने बच्चे की जान का भय हो गया। मैंने छुट्टी की दरख्वास्त दी और यहाँ चली आई। मेरे पास तीन तार (Telegrams) वापिसी के लिये आये पर मैं न गयी (वह तीनों तार भी प्रेजीडेण्ट के सन्मुख पेश किये गये थे)। क्वार के महीने में······ स्टेट का एक पुलिस सब-इन्सपेक्टर मेरे पास आया और कहा कि मेरे साथ चलो। मैंने उत्तर दिया कि मेरा छटवाँ महीना है इसलिये मैं चल नहीं सकती। पुलिस सब-इन्स्पेक्टर ने कहा कि तुम्हारी बीमारी के बहाने से महाराज बहुत नाराज़ हैं, अगर तुम न चलोगी तो गिरफ्तार हो जाओगी क्यों कि वारन्ट मेरे पास है। मैं वारन्ट का नाम सुनकर डर गयी और आने का वायदा कर दिया। दो तीन दिन बाद में वहाँ गयी। मेरी कुछ महीनों की तनख्वाह

बाक़ी थी। आठ हज़ार रुपये फीस के भी बाकी थे। मैंने महाराज से तनख्वाह और फीस के लिये अर्ज़ किया पर मुझ से कहा गया कि फ़ीस का आठ हज़ार रु० तो तुम्हारी चालबाज़ियों के कारण जुर्माने के रूप में ज़ब्त कर लिये गये पर तनख्वाह दे दी जावेगी। × × × × जैसे जैसे पूरे दिन होते गये, मेरी तबियत ख़राब होती गयी इस लिये फिर छुट्टी की दरख्वास्त दी। दो नवम्बर से फर्वरी अन्त तक की मुझे छुट्टी मिल गयी।

"छुट्टी पर आते समय मैंने तनख्वाह के लिये फिर अर्ज़ किया पर बाद में तनख्वाह भेज देने के लिये कहा गया। दिसम्बर में बीमा द्वारा पाँच सौ रुपये मेरी तनख्वाह के मिल गये। (बीमा का लिफ़ाफ़ा भी पेश किया गया) दिन पूरे होने पर मेरे लड़का उत्पन्न हुआ। जब महाराज को यह पता चला कि अब लड़की होने का भय जाता रहा तो मुझे बुलवाया पर मैं न गयी। मैं बीमारी का बहाना करके टालती रही। चार मास के बाद मेरा बच्चा भी मर गया। तब फिर बुलावा आया पर मैं न गयी। तब यह मामला बनाया गया × × × ×।"

इस बयान से यह अनुमान सहज में ही हो जाता है कि विलासी नरेश वेश्याओं के लिये कितने बेताब हो जाते हैं और किस प्रकार का व्यवहार करते हैं। जब वेश्यायें

उनकी इच्छानुसार कार्य नहीं करतीं तब उनके लिये कैसे कैसे षड़यन्त्र रचे जाते हैं।

जिन महाराज के वेश्या प्रेम का ऊपर जिक्र आ चुका है उन्हीं महाराज की एक कहानी और सुनिये। यह कहानी ऊपर की घटना से कुछ-कुछ सम्बन्धित है क्योंकि इस कहानी की प्रधान नायिका का ज़िक्र उपरोक्त बयान में आ चुका है।

"महाराज ने एक वेश्या को दिल्ली से बुलाया। उसे अपनी 'निज सेवा' में नौकर रख लिया गया। ५-६ मास ख़ूब ऐशो-आराम से बीते पर बाद में अनबन हो गयी। अनबन का कारण बड़ा ही घृणित था। महाराज, वह वेश्या और महाराज के एक कृपापात्र उच्च अफ़सर नग्न होकर कुत्सित चेष्टायें किया करते और उस आनन्द-काल के फ़ोटो लेते थे। वेश्या को यह स्वीकार न था। वह इसमें आनाकानी करती। बस, महाराज की दृष्टि में अन्तर आ गया। उसके साथ भी अत्याचार पूर्ण व्यवहार होने लगा। ज़रा-ज़रा सी बात पर कड़ा दण्ड मिलने लगा, दण्ड क्या था, घोर अत्याचार था। महाराज अपने अरदलियों को उससे व्यभिचार करने को कहते। एक-एक दिन में दस-दस बारह-बारह अरदलियों की काम-पिपासा शान्त करनी पड़ती। इससे वह बहुत दुखी होने लगी। किसी प्रकार अवसर पाकर वह भाग निकली और दिल्ली पहुँची। उसने

उस कुत्सित दृश्य का फ़ोटो एक मुसलमान मित्र के द्वारा एक मुसलमान नेता को दो हज़ार में बेचा। जब महाराज को यह पता चला तो बहुत चिन्तित हुए और वह चित्र पा लेने का उद्योग करने लगे। अन्त में २६ हज़ार रु० में उस मुस्लिम नेता ने उस फ़ोटो का कापी राइट महाराज़ को बेच दिया। उस वेश्या को महाराज का दुर्व्यवहार इतना खटका कि उसने दिल्ली में आकर वेश्या-वृत्ति त्याग दी और एक हिन्दू के साथ विवाह करके गृहस्थ-जीवन व्यतीत करने लगी।

मारवाड़ के एक युवक महाराज बड़े ही वेश्या-प्रेमी थे। वह दिन भर सोते और रात भर वेश्याओं के साथ अठ-खेलियां करते थे। वह भाग्यहीन महाराज एक वेश्या के कोठे पर पूना में एन्फ्ल्युन्जा से बीमार पड़े और अपने घर पर आकर चल बसे।

कुछ राजाओं में यह आदत होती है कि वह किसी एक वेश्या को अपनी 'सेवा' में मुलाज़िम नहीं रखते। वह अपने अफसरों द्वारा वेश्याओं को बुलवाते हैं। इससे व्यय कम होता है और नित नये स्वाद (?) चखने को मिलते हैं। जो अफसर सुन्दर सुन्दर वेश्यायें सप्लाई (Suply) करते रहते हैं वह बड़ी जल्दी तरक्क़ी पा जाते हैं। ऐसे नरेशों के शासन-काल में अयोग्य से अयोग्य व्यक्ति भी वेश्याओं की (Suply) सप्लाई के कारण ऊँचे

ऊँचे पद पा जाते हैं। कई एक राज्यों में यह रोग पाया जाता है। वहाँ आज भी अनेक अफ़सर ऐसे हैं जो इसी 'गुरु' क अपनाकर ऊँचे बढ़े। एक देशी राज्य के सम्बन्ध में कहा जाता है कि एक अफ़सर—जो इसी 'गुरु' के कारण अपने पद पर बना था—एक बार अपना कर्त्तव्य पालन करने में चूक गया। बस, महाराज का दिमाग़ आसमान पर चढ़ गया, उस अफ़सर को निकाल बाहर कर दिया।

ऊँचे ऊँचे पद ही नहीं वरन् न्याय भी वेश्याओं के मूल्य में बिक जाता है। इस सम्बन्ध में एक देशी राज्य के एक अफ़सर ने अपने एक मित्र से आप बीती इस प्रकार सुनाई थी।

"मैं एक बार ग़बन के मामले में फँस गया। महाराज के इजलास में मुझ पर मुकद्दमा चलाया गया। मेरे विरुद्ध अभियोग प्रमाणित हो गया। मुझे अपने बचने की आशा न रही। अभी फैसला नहीं सुनाया गया था। मुझे मेरे एक मित्र ने परामर्श दिया। मैं·······गया और एक वेश्या को ले आया। बस, सारा मामला पलट गया। फैसला मेरे अनुकूल हुआ। मैं निर्दोष घोषित कर दिया गया। इतना ही नहीं, मुझे फिर वही पद मिल गया।"

नरेशों का वेश्या प्रेम इतना विस्तृत है कि उसकी अनेक घटनायें दी जा सकती हैं पर इस प्रकरण को बढ़ाना व्यर्थ है। उपरोक्त घटनाओं से इस विषय पर काफ़ी प्रकाश पड़ जाता है।

———

प्रजा की इज्ज़त पर

केवल रानी महारानियों, दासियों तथा वेश्याओं तक ही, इन विलासी नरेशों की विलास-लीला सीमित नहीं है वरन् उस का विस्तार और भी खुला हुआ है। कुछ विलासी नरेशों की यह आदत हो गयी है कि वे अपनी काम-पिपासा शान्त करने के लिये अफ़सरों, सरदारों, जागीरदारों तथा प्रजा की बहू-बेटियों को प्रलोभन से अथवा राज्य-भय दिखलाकर बुलवाते हैं। इस सम्बन्ध में एक पत्र में एक घटना इस प्रकार प्रकाशित हुई थी—

".........राजा साहब बड़े विनोद प्रिय हैं और उन का सारा दिन आमोद-प्रमोद तथा शराब-कबाब में ही व्यतीत होता है। शिकार का भी बहुत शौक़ है। उनके विनोद का उदाहरण हमें इसी प्रान्त के एक पादरी साहब ने सुनाया था। प्रायः ऐसा होता है कि राजा साहब दीवान-ख़ाने में खूब सजकर बैठते हैं, शराब का दौर चलता है, प्रायः सभी इष्ट मित्र एवं सरदारों को शराब पिलाकर मस्त कर दिया जाता है। दोनों की आँखों पर काले कपड़े की

पट्टी बांध दी जाती है और उनकी बहू-बेटियों अथवा माँ-बहिनों को किसी प्रकार वहीं बुलवा लिया जाता है। उनकी भी आँखों में पट्टी बांध दी जाती है फिर दोनों से परस्पर सम्भोग करने को कहा जाता है।......के बाद उनकी पट्टी खोल दी जाती है और तब वह देखते हैं कि वहिन भाई के साथ पड़ी है और माता पुत्र के साथ। पुत्र-वधू ससुर की पर्यङ्कशायिनी है और पुत्री पिता की। इस पर खूब मखौल उड़ाया जाता है और उन्हें माँ-बहिन के शब्द लगाकर गालियां दी जाती हैं।" कैसा नारकीय दृष्य है ?

राजपूताने के एक बड़े राज्य के स्वर्गीय महाराजा ने अपनी ड्योढ़ियों (ज़नानख़ाना) में लगभग तीन हज़ार स्त्रियाँ रख छोड़ी थीं। वह सब राज्य की निवासिनी थीं और थीं प्रजा की बहू-बेटियां। महाराज अपने राज्य में जिस सुन्दर बहू-बेटी की ख़बर पाते उसे अपने आदमियों द्वारा बुलवा लेते और ड्योढ़ी में रख देते। ड्योढ़ी में रहने को एक कमरा मिलता था। महाराज दूसरे दिन उससे भेंट करते और एक बार 'उपयोग' करने के बाद उसे वहीं छोड़ देते फिर यदि आवश्यकता हुई तो अपने पास बुलवा लिया, नहीं तो ड्योढ़ी में ही सड़ती रहे। वह अन्य किसी पुरुष का दर्शन भी नहीं करने पाती।

राजपूताने के ही एक युवा महाराज—जिनका अभी हाल में युवावस्था में स्वर्गवास हो चुका है—एक बार दिन-

दहाड़े एक मुसलमान रंगरेज की सुन्दरी लड़की को उठाकर मोटर में ले गये। ५-६ दिन उसे अपने पास रख कर १५-२० हज़ार रुपये के साथ लौटा दिया।

पञ्जाब की एक रियासत के सम्बन्ध में भी ऐसी अनेक घटनायें सुनी गयी हैं। समाचार पत्रों में समय-समय पर उन घटनाओं की खूब चर्चा हुई है। इस राज्य के महाराज बड़े विलासी हैं। इस समय उनके महल में ३ सौ स्त्रियां हैं। ये प्रायः सभी प्रजा की बहू-बेटियां या अफ़सरों की स्त्रियां हैं। हिन्दू, मुसलमान, सिख, राजपूत, सभी जातियों की स्त्रियां हैं। उनमें से कुछ स्त्रियां तो ऐसी हैं जो प्रलोभन के वश आ गयीं, उनके पिता या पति को 'अच्छी नौकरी' का प्रलोभन दिया गया। वह उसमें फँस गये और अपनी पुत्री या स्त्री को महाराज की सेवा में भेज दिया। कुछ स्त्रियां ऐसी भी हैं जो बलपूर्वक 'उड़ाई' गयी हैं। एक बार महाराज की दृष्टि एक अफ़सर की स्त्री पर पड़ी। महाराज ने उसके लिये पैग़ाम पहुँचाये पर सफलता न मिली। अन्त में बलपूर्वक उसे उड़ा लिया गया। उसका पति भी बड़ा साहसी एवं स्वाभिमानी था। उसने इस जघन्य कार्य के विरुद्ध आवाज़ उठाई। महाराज ने उसे सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया। कई हज़ार रुपया देने का वचन दिया पर अफसर 'स्त्री बेचकर धन' संग्रह नहीं करना चाहता था। उसने वह हज़ारों रुपयों की भेंट ठुकरा दी

और आन्दोलन आरम्भ कर दिया पर "नगाड़खाने में तूती की आवाज" को कौन सुनता है ?

जब महाराज किसी स्त्री के पाने में असफल होते हैं तब उसके लिये अनेक प्रकार के षड़यन्त्र रचे जाते हैं। इन षड़यन्त्रों में दिन-दहाड़े स्त्री को पकड़वा लेना तथा उसके पति की हत्या करवा देना भी है। एक वार उपरोक्त महाराज के विरुद्ध आन्दोलन उठा था उस समय ऐसे काण्डों का भण्डाफोड़ हुआ था। मामला भारत-सरकार तक पहुँच चुका था पर दब गया। उस समय महाराज के विरुद्ध जो अभियोग सूची प्रकाशित हुई थी उसमें एक घटना इस प्रकार की थी—

"महाराज ने.........की स्त्री को बलपूर्वक पकड़वा लिया और अपने महल में बन्द करवा दिया। इसके लिये स०.........की हत्या भी महाराजा ने ही करवायी। वह स्त्री अपने पति की हत्या के कारण बहुत दुखी है।" ऐसी एक नहीं—कई घटनायें इसी प्रकार की दी गयी थीं। ओफ़्! कैसा अत्याचार! केवल अपनी काम-पिपासा शान्त करने के लिये दूसरों का खून !!

मध्यभारत के एक छोटे से राज्य में आज से लगभग २० वर्ष पूर्व यह नियम सा होगया था कि राजधानी में कोई नव-वधू आवे तो पहिले राजा साहब की भेंट को जाय। राजा सा० उस 'भेंट' को स्वीकार करें या लौटा दें यह उन-

की इच्छा पर निर्भर था पर कुछ समय के बाद इस नियम का भङ्ग होने लगा। राजा सा० उस समय राज्य-भय से काम लेने लगे। हर्ष है कि अब वहाँ इस अन्याय का अन्त हो चुका है।

मध्य भारत के ही एक दूसरे राज्य के सम्बन्ध में कहा जाता है कि राजा साहब ने अपने राज्य के एक दूसरे स्थान पर एक पुराने किले में वास आरम्भ किया। यह किला एक नदी के किनारे बना हुआ है। उस किले के पास ही एक क़स्बा है, क़स्बा से नदी के लिये आने जाने का मार्ग किला के सामने से है। राज्य के अन्य किसी स्थान से आने पर भी नदी को पार कर के किले के ही सामने से गुजरना पड़ता है क्यों कि नदी के इधर उधर पर्वत और घना जङ्गल है। राजा सा० ने अपनी बैठक किलेके ऊपर एक ऐसे स्थान पर बनवाई जहाँ से, रास्ते से निकलने वाले प्रत्येक व्यक्ति को देख सकें। प्रायः कस्बे की स्त्रियाँ नदी स्नान को उसी मार्ग से आया जाया करती थीं। जिस स्त्री पर राजा साहब की तबियत चल जाती उसे ही किले में बुलवा लेते। प्रजा ने इस अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाई। एजेन्ट साहब का दरवाज़ा खटखटाया। अन्त में राजा सा० का इलाज हो गया और प्रजा को इन अत्याचारों से न्याज़ मिल गयी।

रियासतों के अतिरिक्त छोटे छोटे ठिकानों (रियासतों के अन्तर्गत छोटी छोटी जमींदाराना रियासतें) में भी यह

रोग । कई ठाकुर साहबान (ठिकानाधिपति ठाकुर सा० कहलाते हैं) के विरुद्ध ऐसी शिकायतें हैं।

उपरोक्त घटनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि विलासी नरेश अपने 'मनोविनोद' के लिये प्रजा की माँ बहिनों तथा बहू बेटियों की इज्ज़त लेने में नहीं सकुचाते पर कभी कभी ऐसे स्वाभिमानी प्रजाजन अथवा अफ़सर भी देखने में आये हैं जो इन विलासी नरेशों की इच्छा के विरुद्ध भी अपने कुल की लाज बचा लेते हैं। ऐसी अनेक घटनायें हुई हैं।

......राज्य में एक प्रधान मुहकमे के उच्चतम पद पर भारत-सरकार से माँगे हुए एक अफ़सर की नियुक्ति हुई। नियुक्ति दो वर्ष के लिये की गयी। एक वर्ष कार्य करने के पश्चात् उन्हें कुछ रुपया नक़द महाराजा ने इनाम दिया पर दुर्भाग्य से इनाम पाने के कुछ दिन बाद उनकी एक लड़की अपने पिता से मिलने आई। वह........प्रान्त में विवाही थी, ईश्वर ने उसे अपूर्व सौन्दर्य दिया था। उस समय वह यौवनावस्था प्राप्त थी। वह सन्ध्यासमय मोटर में बैठ कर हवाखोरी को शहर से बाहर जाया करती थी, एक दिन महाराज भी घूमते हुए उधर ही निकल गये जिधर वह गयी हुई थी। मोटर में महाराज की दृष्टि पड़ी। दो एक दिन के बाद महाराज ने उस अफसर के पास अपना सन्देशा भिजवाया। उस स्वाभिमानी अफसर ने इसे अपना अपमान समझा और संदेशा ले जाने वाले को गहरी फटकार दी।

वह अपना सा मुँह लेकर लौट आया। उस दूत ने महाराजा को और भी नमक मिर्च लगाकर उत्तर दिया। बस, महाराज के दिमाग़ का पारा चढ़ गया, टेम्परेचर हाई हो गया, रात को १२ बजे ही उस अफसर को निकाल देने पर विचार किया गया। किसी भी कार्य के लिये बहाना ढूंढ़ना कोई कठिन कार्य नहीं। झट, एक अभियोग लगा दिया गया और उस अफसर को २४ घण्टे में राज्य से निकल जाने की आज्ञा दी गई। सम्भवत: यह सोचा गया हो कि इस आज्ञा से वह दब जावेगा और सर्विस जाने के भय से माफी मांग लेगा पर उस स्वाभिमानी अफसर ने सर्विस की परवाह नहीं की। उसने चार्ज दे दिया और चला गया। उससे दो साल की सर्विस का एग्रिमेण्ट था इसलिये उसने अपने बकाया दिनों के वेतन की माँग की जो महाराज को देना पड़ा। उसे घर बैठे रहने का १० मास का वेतन मुफ़् में मिल गया।

एक दूसरे राज्य की घटना है। एक ठाकुर साहब उस राज्य के एक उच्च पद पर थे। उनकी स्त्री रूप सम्पन्ना एवं यौवनावस्था प्राप्त थी। राजा साहब के मुसाहिब ने उसकी स्त्री के रूप की प्रशंसा की। राजा सा० ने अपने एक खास व्यक्ति द्वारा ठाकुर सा० से 'फरमाइश' की। ठाकुर सा० चुपचाप घर चले गये। अपनी स्त्री से परामर्श किया। उस वीर क्षत्राणी ने अपना सतीत्व बेचना स्वीकार न किया।

ठाकुर सा० ने अपने पद से त्याग-पत्र दे दिया और राज्य के बाहर चले गये।

राजपूताने के एक नरेश ने—जो इस समय इस संसार में नहीं हैं—एक बार अपने नगर की एक स्त्री के सौन्दर्य की प्रशंसा सुनी। उन्होंने उसके पति को बुलवाया और एक अरदली द्वारा अपनी इच्छा प्रकट की। उसे बड़े बड़े प्रलोभन दिये गये और राज्य का भय भी दिखलाया गया। वह बेचारा 'हाँ' कह कर चला आया। घर आते ही उसने राज्य से बाहर अपनी ससुराल चले जाने की व्यवस्था की। रात्रि समय एक मोटर उसके द्वार पर उस स्त्री को लेने आई पर उस व्यक्ति ने बहाना करके टाल दिया और दो दिन बाद आने को कह दिया। दूसरे दिन वह वहाँ से चल दिया और जब तक महाराज जिन्दा रहे, अपने घर लौट कर नहीं गया। उसके सौभाग्य से कुछ ही दिनों में महाराजा का शरीरांत होगया तब वह अपने घर गया।

इस प्रकार न जाने, कितने ही नागरिकों एवं अफ़सरों को अपनी इज्ज़त बचाने के लिये अपना घरबार तथा अपना पद छोड़ना पड़ा है। कितने ही अफ़सर पतित भी होगये हैं और कितने ही नागरिकों ने अपनी स्त्री के सतीत्व को बेचकर धन और राज्य में मान पाया है।

पापी-मुसाहिब

(५)

यह बात नहीं है कि देशी नरेश स्वयं ही विलास-प्रिय हों और वह अपनी इच्छा से ही विलासता में लिप्त रहते हों पर इनके स्वार्थी मुसाहिबों का भी इस पाप में काफ़ी हाथ होता है। कहीं-कहीं तो ऐसे पापी लोग देशी राज्यों में पहुँच जाते हैं जो नरेशों को विलासता में फँसा कर अपना उल्लू सीधा करते हैं।

कहा जाता है कि मध्यभारत के एक उन्नतिशील राज्य में एक बहुत बड़े अफ़सर ऐसे ही पापाचार द्वारा बढ़े। उनकी दो पुत्रियों को भगवान् ने अपूर्व सौन्दर्य दिया था। महाराजा सा० को उस सौन्दर्य ने आकर्षित कर लिया। बस, वह पुत्रियाँ अपने पिता को ऊँचे से ऊँचे पद पर पहुँचाने में सहायक हुईं। इसी राज्य में एक ऐसे उच्चाधिकारी हैं जो दो हज़ार रुपये के लगभग वेतन पाते हैं। किसी समय उन्हें सात रुपया मासिक वेतन मिलता था। उनकी कार्य-कुशलता, चतुरता एवं अनुभव ने तो इतनी तरक्की करने में सहायता दी ही, साथ उनकी पत्नी को भी इसका

श्रेय प्राप्त है। यदि वह अपने आत्माभिमान तथा सती-धर्म को त्याग कर महाराजा सा० को प्रसन्न करने का उद्योग न करती, तो कौन कह सकता है कि सात रुपया मासिक पाने वाला साधारण कर्मचारी दो हज़ार रु० मासिक वेतन का उच्चाधिकारी बन सकता था? ऐसे राज्यों में प्रायः ऐसे ही व्यक्ति उन्नति कर पाते हैं जिनके पास चाहे योग्यता तथा अनुभव न भी हो पर घर में सुन्दरता देवी का वास हो जो महाराज को अपनी ओर आकर्षित कर सके।

राजपूताने के एक राज्य की घटना है कि एक अधम कर्मचारी ने ऊँचा पद पाने की अभिलाषा से एक ए० डी० सी० द्वारा अपनी अविवाहिता एवं यौवनावस्था प्राप्त बहिन के सौन्दर्य का सन्देश महाराजा तक पहुँचाया। महाराजा ने उसे देखने की इच्छा प्रकट की। बस, शिकार का प्रबन्ध किया गया। महाराज एक दिन शिकार के लिये उसी गाँव की ओर गये जहां वह कर्मचारी रहता था। शिकार का तो बहाना था, वास्तव में उस सुन्दर मूर्ति को देखना था जिसका ऑफ़र (offer) आया था। उस कर्मचारी के घर पर महाराज पहुँचे। एक गिलास में दूध लेकर वह बहिन महाराजा के सामने भेजी गयी। चार आँखें होते ही महाराज पर जादू चल गया। महाराज ने "सौदा" पसन्द कर लिया। राजधानी में लौटने पर उस कर्मचारी को काफ़ी धन दिया गया और सुन्दर मकान बनाने की

आज्ञा दे दी। पहिले उसका कच्चा मिट्टी का मकान था। अब पत्थर का बनने लगा। महाराज से उस कुमारी की शादी होने की चर्चा चलने लगी। महारानी के कान में भी यह ख़बर पहुँची. अतः शादी में बाधा पड़ गयी फिर भी महाराज का आना-जाना जारी रहा। उस कर्मचारी को एक सूबा का अफ़सर बना दिया गया। बस, फिर क्या था ? खूब गुलछर्रे उड़ने लगे। उसने हर प्रकार से धन खींचने का प्रयत्न किया। उस सर्किल की प्रजा में भारी असन्तोष फैल गया। भारत-सरकार तक उस अफ़-सर के विरुद्ध शिकायतें पहुँचीं। सरकार की आँखों में धूल झौंकने के लिये अनेक प्रकार से प्रयत्न किया गया और यह सिद्ध करने का उद्योग हुआ कि वह अफ़सर बड़ा ही प्रजा-प्रिय है पर समय सब का एक सा नहीं रहता। एक दिन आया कि वह अफ़सर राज्य से निर्वासित कर दिया गया।

इस घटना से यह अनुमान हो जाता है कि देशी राज्यों में ऐसे भी 'पतित' मनुष्य होते हैं जो अपनी माँ-बहिनों की इज़्ज़त की रिश्वत देकर ऊँचे पदों पर पहुँचते हैं और राजा को बदनाम करते हैं। ऐसे मनुष्यों के लिये क्या कहा जाय ?

और भी सुनिये—राजपूताने के-ही एक दूसरे राज्य के स्वर्गीय नरेश के ख़ास मुसाहिब······जी खवास थे जो जाति के दर्ज़ी थे। उनका काम ही यह था कि राज्य में जो

स्त्री या कुमारी लड़की सुन्दर होती उसे ले आते और महाराज की ड्योढ़ी (ज़नानख़ाना) में रख देते। जब नगर में कोई उच्च जाति की विधवा अथवा लड़की बदचलन हो जाती तो उसके संरक्षक मुसाहिब...... जी से अर्ज़ करते कि 'मेरी लड़की, बहू अथवा अमुक स्त्री बदचलन हो गयी है, वह मेरे काबू से बाहर है, आप ड्योढ़ी में रख लीजिये।' मुसाहिब...... जी अपने मर्ज़ीदाँ भँवर ख़वास को भेजते कि वह स्त्री सुन्दरी है या नहीं ? यदि वह सुन्दरी होती तो रथ भेज कर उसे ड्योढ़ी में बुलवा लेते। दूसरे दिन महाराज उसका निरीक्षण करते और इच्छानुसार आनन्द उठाते। महाराज के स्वर्गवास के पश्चात् उस राज्य में रीजेंसी कौंसिल स्थापित हुई तब मुसाहिब........ख़वास पर अनेक मुक़दमे चले। फलस्वरूप उन्हें दो वर्ष की जेल हुई और उनकी कई लाख की जागीर—जो उन्होंने महाराजा से प्राप्त करली थी—ज़ब्त करली गयी।

एक राज्य के एक सज्जन ने साहसपूर्वक सन् १९१९ में अपने हस्ताक्षरों से राज्य के एक उच्च अंग्रेज़ अफ़सर को एक दरख्वास्त दी थी। उस दरख्वास्त से पापी मुसाहिबों की करतूतों का ख़ासा भण्डाफोड़ होता है। उस दरख्वास्त का आशय हिन्दी के एक मासिक पत्र में इस प्रकार प्रकाशित हुआ था।

"अमुक व्यक्ति अमुक महकमे का चार वर्ष पूर्व आफ़-

सर था। उसकी अधीनता में जो लोग थे वे उसी के संबंधी आदि थे। जिन्हें वह जैसे चाहता काम में ले आता था। वह शहर में से औरतें लाता और अपना मतलब गाँठने के लिये अपने महाराज की सेवा में पेश करता। उसके मरने के बाद उसका लड़का भी यही धन्धा करता और उसे भी वही ओहदा दिया गया। फलतः अधिक स्त्री प्रसङ्ग से जवान राजा की मृत्यु हो गयी·········मेरा यह कहना अत्युक्ति नहीं है और बड़ी आसानी से इसकी जाँच की जा सकती है। श्रीमान महाराजा·····और महाराज·········इस के साक्षी हैं। जो इसे, इसके बाप को और इसके खानदान तथा कारनामों को भली प्रकार जानते हैं। कहते हैं कि वर्तमान महाराज······दशहरे की छुट्टी में जब······से आये थे तब उन्होंने साफ़ कह दिया था कि '······महकमे के नौकर चाकरों को हमारे पास मत आने दो क्यों कि इन लोगों की वजह से राज्य नष्ट भ्रष्ट होता है।' जब कि राजा लोग इस तरह भ्रष्ट हों तो प्रजा भी उनका अनुसरण करके अवन्नति के गड्ढे में गिरती है। जो आदमी इस प्रकार राजाओं को भ्रष्ट करता है, उसका राज्य के कर्मचारियों पर पूरा रुआब ग़ालिब रहता है और वह अपने फ़ायदे के लिये उन से सब कुछ करा लेता है। यही नहीं, ऐसे लोग राजा की दुर्बलता से अपना मतलब गांठ लेते हैं जिसका कभी कभी बड़ा भयङ्कर परिणाम होता है।" इस दरख्वास्त पर

बड़ा तहलका मच गया था और किसी प्रकार फाइलों में छिपा दी गयी थी।

एक बड़ी रियासत के प्राइम मिनिस्टर साहब हैं जो साधारण क्लर्क से १५००) मासिक तक के ओहदे पर पहुँचे। इन्होंने युवक महाराज को बालकों से अप्राकृतिक कुकर्म करने का शौक लगाया। बाद में कुत्सित दृश्यों के फोटो खींचकर अपने कब्ज़े में किये। वे फोटो रेजीडेण्ट को दिखलाकर महाराज के अधिकार छिनवाये और विलायत भिजवा दिया। महाराज की अनुपस्थिति में आपने खूब धन बटोरा और प्रजा की बहू बेटियों की इज्ज़त पर डाका डाला। अन्त में महारानी से भी अनुचित सम्बन्ध हो गया। जब महाराज विलायत से लौटे तो महारानी के पतन की ख़बर मिली तब विवश दूसरा विवाह किया। उन्होंने महाराज को भय दिखला कर एक अच्छी जागीर अपने नाम लिखवा ली। बृटिश भारत में भी जमींदारी ख़रीद चुके थे। इस समय कई करोड़ के आदमी हैं और चैन की बन्सी बज रही है।

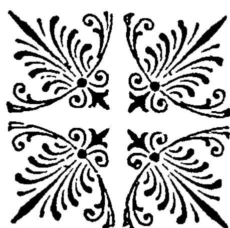
······राज्य के स्वर्गीय नरेश के खास मुसाहिब······ थे। वह पहिले साधारण स्थिति के थे पर किसी विशेष कारण से महाराज से उनकी मित्रता हो गयी। महाराज ने उन्हें अपना खास मुसाहिब बना लिया क्यों कि विलास-लीला के वह विशेषज्ञ थे। वह स्वयं भी बहुत व्यभिचारी

था और महाराज को भी व्यभिचार में फँसाये रहता था जिससे राज्य में उसकी खूब तूती बोलती थी। प्रजा में उसके विरुद्ध बहुत असन्तोष था। प्रायः प्रजा के लोग कहा करते थे कि हमारे महाराज तो बड़े ही दयावान और नेक हैं पर अमुक व्यक्ति उनको बिगाड़े हुए है। यदि यह पृथक हो जावे तो राज्य पवित्र हो जावे पर पृथक कैसे हो? वहाँ तो विलास-लीला का मन्त्र अपना प्रभाव जमा चुका था। वह महाराज के नाम पर जो चाहे कर सकता था। चाहे किसी की इज्जत ले ले, चाहे किसी की हत्या कर डाले, चाहे किसी को पिटवा दे, चाहे किसी को तङ्ग करे पर उसके विरुद्ध कभी कोई शिकायत नहीं सुनी जाती थी क्योंकि महाराज के भोग-विलास में वह सहायक था। उसने महाराजा से जागीर भी प्राप्त करली थी। बहुत ही अधिक ठाठ वाट और शान से रहता था। वह नायब महाराजा (Second to Maharaja) समझा जाता था। उसमें न योग्यता थी न अनुभव। अंग्रेजी को तो वह 'काला अक्षर भैंस बराबर' समझता था फिर भी राज्य के एक उच्च पद पर नियुक्त था। जब महाराज से शासनाधिकार छीन लिये गये और भारत सरकार ने अपनी ओर से राज्य का प्रबन्ध कराना आरम्भ किया तो वह राज्य से निर्वासित कर दिया गया। बाद में बलात्कार के अभियोग में वह गिरफ़ार कर लिया गया और राज्य में ही उस पर

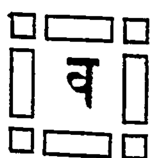
मुकद्दमा चलाया गया। उसे बहुत लम्बी सज़ा मिली, जागीर भी ज़ब्त कर ली गयी। उसका घर बार और सारा सामान नीलाम कर दिया गया।

पञ्जाब की एक रियासत में·······खास मुसाहिब हैं। वह महाराज को अफ़सरों की सुन्दर स्त्रियों का पता देते रहते हैं। इतना ही नहीं, उनको महल में लाने में भी सहायक होते हैं इससे महाराजा की उन पर भारी कृपा है। वह खूब धन बटोर रहे हैं। उन्होंने "महाराज को व्यभिचार में फँसाये रहना और अपना उल्लू सीधा करना" ही अपना मोटो (Motto) बना रखा है। अभी तो उनका उद्देश्य सफल हो रहा है, भविश्य को भगवान जाने।

इन उदाहरणों से पाठकों ने समझ लिया होगा कि कैसे कैसे स्वार्थी, धूर्त और नराधम देशी नरेशों के मुसाहिब बन जाते हैं। भगवन् ! ऐसे मुसाहिबों से इन नरेशों की रक्षा करो।



अप्राकृतिक व्यभिचार



र्त्तमान काल में—भारत के कुछ हिस्सों में अप्राकृतिक व्यभिचार अथवा कुछ लेखकों के शब्दों में चाकलेट पन्थ फैल गया है। यह अप्राकृतिक तो है ही पर अमानुषिक भी है। नवयुवकों में—विशेष कर विद्यार्थियों में—इसका प्रचार दिन पर दिन चढ़ रहा है, अंग्रेज़ी स्कूलों में यह रोग अधिक उन्नति (?) कर रहा है। स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दजी ने लाहौर जेल से मुक्त होने पर जेल के अनुभव पर लिखते हुए लिखा था कि पञ्जाब की जेलों में Un-natural crimes (अप्राकृतिक व्यभिचार) अधिक होता है। जब स्कूलों, कॉलिजों, जेलों आदि में इसका प्रचार हो रहा है तो यह कैसे सम्भव हो सकता है कि देशी नरेश इस रोग से बिल्कुल ही मुक्त रहें। आज कई देशी नरेश इस रोग के शिकार हैं।

ऐसे राजाओं के यहाँ जो अर्दली अथवा ए० डी० सी० (अङ्ग-रक्षक) रक्खे जाते हैं वे प्रायः सभी सुन्दर, नौजवान, एवं हृष्ट-पुष्ट होते हैं। उनकी ख़ास ड्यूटी 'पैर दबाने की नौकरी' समझी जाती है। राजा उनसे ही अप्राकृतिक

मैथुन कराते हैं और उनको, उनकी इच्छानुसार तरक्की मिलती रहती है, कहीं कहीं तो यह भी देखा गया है कि उन अर्दलियों को लम्बी लम्बी जागीरें मिल जाती हैं।

एक बड़े प्रसिद्ध महाराज—जिनकी आयु ५० वर्ष से अधिक है—अप्राकृतिक व्यभिचार के लिये प्रसिद्ध हैं। भला, कौन विश्वास करेगा कि ५० वर्ष की आयु के बाद भो 'चाकलेट'! पर उनका बचपन का यह शौक इस बुढ़ापे में भी चर्रारहा है। एक-दो दर्जन जवान सदैव उनके साथ इसी कार्य के लिये रहते हैं। ये अर्दली अथवा ए० डी० सी० ठेठ गँवार हैं। इनको डेढ़-डेढ़ सौ रुपये माहवार तक वेतन तथा 'खानपान' मिलता है। किसी किसी को जागीरें भी मिली हुई हैं। एक १५) मासिक वेतन पानेवाले अर्दली को, इसी कार्य की बदौलत, १५०) माहवार का ए० डी० सी० बना दिया गया है। उसके घरवालों ने कई प्रार्थनापत्र भेजे, एक दूसरे महाराज के द्वारा पत्र-व्यवहार कराया. तार भिजवाये पर महाराज ने उसे न छोड़ा और घर न आने दिया। अजमेर के 'तरुण-राजस्थान में कई बार इसकी चर्चा भी प्रकाशित हुई पर सौन्दर्य-प्रेम के मतवाले महाराज ने—जब तक वह इसी कार्य के कारण सूख कर कांटा नहीं हो गया तब तक—एक दिन क भी उसे छुट्टी न दी। एक बार उस ए० डी० सी० ने अपने एक मित्र को लिखा था कि "मैं परवश हूँ,

भाग निकलने का भी मौक़ा नहीं मिलता, महाराज छुट्टी नहीं देते, पर मेरी इच्छा पिता जी को देखने की है। एक वर्ष से पत्नि से भी भेट नहीं कर सका हूँ। यहाँ हर रोज १२ बजे रात से एक बजे रात तक 'पैर दबाने की नौकरी' मुझे अदा करनी पड़ती है। हैरान हूँ, क्या करूँ, कोई उपाय ही नज़र नहीं आता।" इन्हीं महाराज के सम्बन्ध में एक मासिक पत्र ने लिखा था—"एक व्यक्ति को हम जानते हैं जो इसी योग्यता के कारण बिना पढ़े लिखे ही एक बड़ा अफ़सर बना दिया है।......के एक राजा साहब भी इसी कार्य के पुरष्कार में जागीर भोग रहे हैं। ये महाशय मेयो कालिज से ही इनके हत्थे चढ़े थे। तीन चार वर्ष की बात है कि आपने......से एक सुन्दर रावराजा साहब को ए० डी० सी० बनाकर बुलाया। वे बेचारे ७-८ महीनों ही में पीले पड़ गये और खून मूतने लगे—रोगी होकर भाग खड़े हुए। ......के एक एफ० ए० फेल कायस्थ साहब—जो भूखे मरते थे इस योग्यता की तुफैल से दो ढाई सौ का वेतन पा रहे हैं।"

इसी राज्य के एक पेन्शन-याफ्ता सैनिक अफ़सर ने इन पंक्तियों के लेखक को आप-बीती सुनाई थी। वह कहने लगा—'एक दिन मेरी ड्यूटी सरकार के कैम्प पर बोली गयी। सरकार उस समय बाहर शिकार में थे। मैं अपनी फौजी वर्दी पहिनकर और बन्दूक लेकर पहरा देने के लिये

कैम्प पर पहुँचा पर पहरेदार मुझे देखकर हँसा। उसने बतलाया कि यहाँ फौजी वर्दी और बन्दूक की आवश्यकता नहीं। यह सब रख आओ और कुर्ता, धोती पहिन कर आओ। मैंने कहा कि रात के १२ बजे से दो बजे तक की ड्यूटी स्वयं सरकार ने लगायी है। आज ही हुक्म पहुँचा था फिर पहरे पर तो फौजीवर्दी आवश्यक है परन्तु पहरेदार ने कहा कि 'मेरे कहने से यह सब उतार आओ।' मैंने वैसा ही किया। रात के १२ बजे जब पहिले वाला अर्दली भीतर से बाहर आया तो मैं भीतर गया। वहां कैम्प में अँधेरा था। मैं बिजली का बटन टटोलने लगा पर हाथ टब में लग गया। उस टब का पानी फैल गया और महाराज के पलंग पर गिरा क्योंकि पलंग के पास ही टब रक्खा था जो कि अंधेरे के कारण नहीं दिखलाई दिया। महाराज झट उठ बैठे और बटन दबाकर प्रकाश कर दिया। मैं घबड़ा गया, शीतकाल में महाराज के वस्त्र मेरे अपराध से भीग गये हैं, अब न जाने क्या दण्ड मिले? पर महाराज मुस्कराते हुए बोले—'घबराओ नहीं—डेरों से दूसरे कपड़े ले आओ।' मैं कपड़े ले आया। महाराज ने भीगे कपड़े बदल कर मुझे पैर दबाने की आज्ञा दी। मैं पैर दबाने लगा। कुछ समय के पश्चात् महाराज ने बिजली का बटन बन्द कर दिया, सर्वत्र घोर अन्धकार हो गया।

मुझे [illegible] की आज्ञा हुई। इच्छा न रहते हुए भी

यह कुकर्म करना पड़ा। मैं पूर्ण स्वस्थ था। शरीर मज़बूत और गठीला था पर इस ड्यूटी के कारण ही मेरे शरीर में घुन लग गया और महाराज से बड़ी कोशिशों से पेन्शन ले ली।'

एक बड़ी रियासत के प्राइम मिनिस्टर सा० ३०) रु० के साधारण क्लर्क से १५००) मासिक तक बढ़े और अपनी कारगुज़ारी से प्राइम मिनिस्टर बन बैठे। इन्होंने महाराज को सुन्दर बालकों से अप्राकृतिक कुकर्म करना सिखलाया, पीछे कुत्सित दृश्यों के फ़ोटो उतरवाकर क़ब्ज़े में कर लिये और महाराज को डरा धमकाकर अच्छी जागीर अपने नाम लिखवा ली।

एक महाराज—जिनकी आयु ७२ वर्ष के लगभग है—अभी तक यह कुकर्म कराते हैं। एक दारोग़ा इस कुकर्म का सम्पादन करता है।

एक ठाकुर साहब जन्म-नपुंसक थे। आप अप्राकृतिक कुकर्म कराते थे और साठ वर्ष की आयु तक अपने जीवन-पर्यन्त—इस आदत को नहीं भूले।

इस प्रकार इस अप्राकृतिक व्यभिचार में भी राजाओं का अपरिमित धन पानी की भाँति व्यय हो जाता है।



गोरी-रमणी-प्रेम



य: यह भी देखा गया है कि अनेक देशी नरेश विलायती रमणियों के प्रेम में फँस जाते हैं और उनके प्रेम में पागल हो प्रजा की गाढ़ी कमाई का पैसा पानी की तरह बहाते हैं। ऐसा नियम सा हो गया है कि हरेक राजा को शासन कार्य हाथ में लेने से पूर्व शिक्षा के लिये विदेश-यात्रा करनी पड़ती है। वहाँ सभी तो नहीं, पर अधिकांश युवक महाराज गोरी रमणियों के प्रेम-जाल में पड़ जाते हैं। समाचार पत्रों के पाठक जानते होंगे कि आज से आठ-नौ वर्ष पूर्व एक मामला विलायत में चला था जिसमें भारत की एक बड़ी रियासत के महाराजा का नाम आया था। उनकी प्रतिष्ठा का ध्यान रखते हुए अदालत में पूरा नाम नहीं खोला गया और 'मि० ए०' के नाम से मामला प्रसिद्ध हुआ। उन महाराज ने एक गोरी रमणी के प्रेम जाल में पड़कर शायद दो लाख का चैक उसके नाम लिख दिया था। उसी चेक से मामला अदालत तक पहुँचा। उस समय वह राज्य के अधिकारी न थे पर आज एक प्रतिष्ठित राज्य के अधीश्वर हैं।

इन्दौर के भूतपूर्व नरेश सर तुकोजीराव होल्कर को—जब मुमताज़ बेगम के प्रेम और बावला हत्याकाण्ड के कारण—राज्य छोड़ना पड़ा तो विलायत चले गये, वहाँ एक अमेरिकन कुमारी मिस नेनसी मिलर से उनका प्रेम हो गया। महाराज उसे भारत में लाये और लाखों रुपया व्यय कर पूना में श्री शंकराचार्य द्वारा उसकी शुद्धि करवाई। उसका नाम शर्मिष्ठादेवी रखा गया और सन् १९२८ में बढ़ बहा (इन्दौर स्टेट) में उससे सर तुकोजीराव का विवाह हुआ। महाराज उसी के साथ फिर विलायत गये और अपनी दो हिन्दू विवाहिता महारानियों को इन्दौर में ही छोड़ गये। ख़बर है कि अब उस नेनसी मिलर ने सर तुकोजीराव को तलाक़ दे दी है।

एक बार दो विलायती कुमारियाँ भारत-भ्रमण के लिये आईं। वह एक देशी राज्य में पहुँचीं। महाराज ने अपने आदमियों द्वारा कुत्सित कर्म का प्रस्ताव किया। उन स्वाभिमानी कुमारियों ने प्रस्ताव को ठुकरा दिया। उन्हें बड़े बड़े प्रलोभन भी दिये गये पर उन पर महाराज का जादू न चला। वे अपनी इज़्ज़त बचाकर वहाँ से चल दीं जब वे भारत-भ्रमण कर यूरोप पहुँचीं तो अपनी यात्रा के विवरण में इस कथा को भी समाचार पत्रों में प्रकाशित किया। उन्होंने समाचारपत्रों में उन महाराज का नाम नहीं खोला, यही मेहरबानी की।

कुछ राजा महाराजा तो एक दो गोरी रमणियाँ अपने यहाँ रखते भी हैं पर उनके व्यभिचार का भण्डा नहीं फूटता क्योंकि वे भारतीय वेश्याओं की भाँति तो रहती नहीं, नर्स अथवा मास्टरनी बनकर रहती हैं, इस से उनके ऊपर कोई उंगली नहीं उठाता।

इन गोरी रमणियों के इस प्रेम जाल का कभी कभी यह भी परिणाम होता है कि राजाओं को भारी रक़में हर्जाना रूप में देनी पड़ती हैं। एक महाराज को तो कई लाख एक गोरी रमणी को—इसी गुप्त व्यभिचार के कारण पुत्र उत्पन्न होने पर—जीवन निर्वाह के लिये देने पड़े थे।

राजाओं की गोरी रमणियों के साथ विलास-लीला यूरोप भ्रमण के समय ही होती है इसलिये भारत में अधिक भण्ड नहीं फूटता! जब कभी कोई ख़ास घटना हो गयी तभी समाचार-पत्रों में उसका चित्र-चित्रण किया जाता है।

पञ्जाब की एक रियासत के महाराज गोरी-रमणी-प्रेम के कारण ही प्रायः यूरोप में घूमते रहते हैं। वह भारत में बहुत ही कम रहते हैं। यहाँ लोगों को सन्देह हो रहा है कि कहीं भारत-सरकार ने ही तो नहीं—उन्हें यूरोप में रहने के लिये बाध्य किया है क्योंकि उनके विरुद्ध प्रजा को बहुत सी शिकायतें हैं पर जानकार लोगों का कहना है कि इसमें भारत-सरकार का कोई हाथ नहीं है। महाराज की विलास-प्रियता का ही हाथ है जिसके कारण वह अपनी

महारानियों को भी छोड़कर यूरोप में ही पड़े रहते हैं। महारानियों के दिल पर कैसी बीतती है ? राज्य में शासन का कैसा प्रबन्ध है ? प्रजा सुखी है या दुखी ? आदि की चिन्ता उन्हें कम रहती है।



अफ़सरों पर प्रभाव

(८)

'ख़रबूज़े को देखकर ख़रबूज़ा रंग पलटता है।' यही दशा देशी राज्यों में भी होती है। नरेशों के आचरण का अफ़सरों पर भी प्रभाव पड़ता है और वह भी अपने 'प्रभु' के रंग में रँग जाते हैं। कहीं-कहीं तो 'गुरु गुड़ ही रह गये और चेला शक्कर हो गये।' वाली लोकोक्ति चरितार्थ हो जाती है; सदाचार-हीन नरेशों के अफ़सर अपने 'प्रभु' से भी दो बालिश्त आगे बढ़ जाते हैं।

ऐसे अफ़सर प्रजा के लिये बड़े ही दुखदायी हो जाते हैं। वह किसी की स्त्री बलपूर्वक पकड़वाकर बुलवा लेते हैं, तो किसी की लड़की को 'अफ़सर साहब की भेंट' चढ़ने को मजबूर करते हैं। स्त्री के पाने के लिये वह किसी के पति को पकड़वा लेते हैं तो किसी के पति को पिटवा देते हैं, किसी के पति को मकान में बन्द कर देते हैं तो किसी के पति की हत्या ही करवा देते हैं।

········राज्य में एक उच्च कर्मचारी थे जो कुछ कारणों से ही महाराज के विश्वासपात्र एवं कृपापात्र बन

गये थे। अयोग्य, अशिक्षित एवं अनुभव-हीन होने पर भी राज्य के एक सब से ऊँचे पद पर पहुँच गये थे, कुछ जागीर भी महाराज से प्राप्त कर ली थी। वह हट्टे-कट्टे एवं सुन्दर नौजवान थे। उन्होंने अपनी जागीर के गाँवों में इतना ऊधम उठा रखा था कि किसी की बहिन-बेटी या स्त्री-माँ को पकड़वाकर अपनी कोठी में बुलवा लेना एक साधारण सी बात थी। पहिले तो स्त्री के संरक्षक को राज़ी से उस स्त्री को……जी की कोठी पर भेज देने को कहा जाता। जब वह इस प्रकार स्वीकार न करता तो उसके मकान पर दो-तीन नौकर भेज दिये जाते जो बलपूर्वक स्त्री को पकड़ लाते। जब उन अफ़सर सा० की तक़दीर का सितारा अस्त हुआ और पापों का घड़ा भर गया तब अदालत में उन पर मुकदमे चले। एक मुकदमे में फरियादी ने निम्न बयान दिया था—

"………को रात के दस-ग्यारह बजे तीन चार आदमी मेरे मकान पर आये। उनमें से एक व्यक्ति जिसका नाम……है—मुझे आवाज़ दी। मैंने दरवाज़ा खोला। उस समय मुझे यह मालूम न था कि उसके साथ तीन आदमी और भी हैं। उसने मुझ से कहा कि तुम को……जी ने अपने बाग़ में बुलाया है। मैंने कहा कि रात को ऐसा क्या काम है ? बाद में उसने कहा कि अपनी स्त्री को मेरे साथ बाग़ तक भेज दो।……जी ने उसे बुलाया है। मैंने कहा

कि मैं अपनी स्त्री से पूछ लूँ कि वह जाने को तैयार है या नहीं। मैंने भीतर से ही अपनी स्त्री को खेड़े की ओर उतार दिया और कह दिया कि तुम चिरञ्जी के घर जाकर सो जाओ। उसकी गोद में एक वर्ष की लड़की थी। उसे भी वह साथ ले गयी।

"जब मुझे अनुमान हो गया कि मेरी स्त्री चिरंजी के घर पहुँच गयी है तब मैं बाहर आया। उस समय मैंने देखा कि तीन आदमी और भी दीवाल के सहारे खड़े हैं। वह चारों आदमी मेरे मकान में घुस आये। औरत को चारों ओर ढूंढ़ा और कहा कि उसे कहां छिपा दिया है? मैंने कहा कि मैं तो घर के बाहर भी नहीं गया, मैं कहां छिपा देता? इस पर······ने कहा कि अच्छा, फिर देखेंगे, कब तक तू छिपाये रहेगा? इसके बाद वह चले गये। थोड़ी देर बाद अमुक-अमुक दो व्यक्ति आये और कहा कि रात भर हम यहीं सोवेंगे। जब औरत आवेगी, पकड़कर ले जावेंगे। मैं भी उनके साथ सोता रहा पर चिन्ता में नींद नहीं आई। सुबह वह लोग चले गये। मैंने अपनी स्त्री को गाड़ी में बिठाकर······जिला के······गाँव में उसकी नन-साल भेज दिया।××× "

इस बयान में फरियादी ने यह भी बतलाया था कि "मैं मकान का ताला लगाकर दूसरे गाँव चला गया। जब लौट कर आया तो मालूम हुआ कि प्रतिवादी के आदमियों ने

मेरा सामान भी निकाल लिया।" यह क़िस्सा उस उच्च अधिकारी की जागीर के एक गाँव का था।

उपरोक्त अधिकारी के सम्बन्ध में एक दूसरे व्यक्ति ने अदालत में निम्न बयान दिया था—

"मेरा गाँव इनके (अभियुक्त अर्थात उच्चाधिकारी के) गाँव से लगभग डेढ़ मील के फासले पर है। १८ या १९ महीने हुए, मैं अपने घर बैठा था। अमुक-अमुक दो सिपाही दोपहर के समय मेरे घर पर आये। ये सिपाही अभियुक्त की कोठी पर तैनात थे। सिपाहियों ने मुझसे कहा कि तुमको······ने (अभियुक्त ने) कोठी पर बुलाया है। मैं उनके साथ चल दिया। कोठी पर ले जाकर अमुक-अमुक व्यक्ति के सामने मुझे पेश किया गया। वह मुझे कोठी में ले गये। वहां······जी (अभियुक्त) बैठे हुए थे। उन्होंने मुझे एक तरफ ले जाकर कहा कि दस सुन्दर औरतों की फेहरिस्त मेरे पास है। उनको मेरे पास लाओ। मुझको वह फ़र्द दिखलाई। मैंने बांचकर देखी, उनके नाम ये थे—(यहां पर फ़रियादी ने उन औरतों के नाम बतलाये।) उन सब की उम्र १४ वर्ष से २० वर्ष तक की थीं। अधिकांश औरतें १५-१६ वर्ष की ही थीं। मैंने कह दिया कि मेरे बश का काम नहीं है। मैं छोटी क़ौम का (सुनार जाति का) आदमी हूँ। ये औरतें बड़े-बड़े घरों की हैं। मैं उन्हें कैसे ला सकता हूँ? प्रतिवादी ने अपने दो

सिपाहियों को बुलाकर कहा कि इसके पैर में बेड़ी डाल दो और बांध दो। फिर मुझे बाग़ ले गये।......को हुक्म दिया गया। वह पाँच-छः धड़ा की बेड़ी ले आया और मेरे पाँव में डाल दी। मुझे बाग़ में एक खम्भे से बांध दिया गया। बाद में ४९) रु० रिश्वत देकर मेरा एक गाँव वाला मुझे छुड़ा लाया।"

एक उच्च अधिकारी के सम्बन्ध में घटना भी बड़ी ही करुणाजनक है। सुनिये—

अमुक अधिकारी का एक नौकर एक पहाड़ी औरत भगा लाया। वह नौकर उक्त अधिकारी की कोठी पर ही कमरों में (Servants quarters में) रहता था। उस पहाड़ी औरत को भी वहीं रखा। वह सुन्दर थी। उक्त अधिकारी की दृष्टि उस औरत पर पड़ी। उसने उस औरत को अपने कब्ज़े में कर लिया। इस पर नौकर और मालिक (उक्त अधिकारी) में मतभेद हो गया। नौकर को बहुत बुरा लगा। वह इसको सहन नहीं कर सकता था कि मेरी भगाई हुई औरत मालिक के पास रहे। मतभेद में मामला अधिक बढ़ गया। अतः वह पहाड़ी औरत मार डाली गयी और लाश एक कुएँ में फेंक दी गयी। एक रात अचानक कोठी पर गोली चली। वह नौकर मारा गया। पुलिस आगयी तो उक्त अधिकारी ने अपने ही एक दूसरे नौकर का नाम ले दिया कि उसने हत्या की। पुलिस ने उसे गिर-

फ़्तार कर लिया। मुकद्दमा चलने पर उसने अदालत में अपने को ही दोषी मान लिया। अतः उसको फाँसी की सज़ा का हुक्म हुआ। बाद में जब महाराजा के इजलास में फाँसी की सज़ा पर स्वीकृति होने के लिये मामला आया तो अभियुक्त ने बड़ा ही सनसनीपूर्ण बयान दिया। उसने कहा कि असली अपराधी मैं नहीं हूँ।......को......जीने (उक्त अधिकारी का नाम बतलाया) मारा है। जब मुझे गिरफ़्तार किया गया तो हवालात में वह मेरे पास आये थे। उन्होंने कहा था कि तुम अपने सिर दोष ले लेना। मैं महाराज की अदालत से तुम्हें माफ़ करवा दूँगा। इससे तुम भी बच जाओगे और मेरी भी बदनामी नहीं होगी। तुम्हें कुछ रुपया भी देंगे। मैंने यह स्वीकार कर लिया। पर अब मुझे धोखा दिया जा रहा है। मुझे छुड़ाने की कोई कोशिश नहीं की जाती इस लिये मैं सच सच हाल कहता हूँ।' उसने अपने बयान में उपरोक्त पहाड़ी औरत के क़त्ल का भी हाल सुनाया था। अतः मुकद्दमा फिर दीवान सा० के पास तहकीकात के लिये भेज दिया गया। भारत-सरकार के पास भी इस मामले में कई दरख्वास्तें पहुँचीं। अतः सरकार ने हस्तक्षेप किया और उस अभियुक्त को बरी करवा दिया। यह मामला कई वर्ष तक चला था। इससे राज्य में तथा राज्य के बाहर बहुत सनसनी फैल गयी थी।

एक और घटना सुनिये। यह घटना भी राज्य के सर-

कारी कागजातों के आधार पर है। इसकी चर्चा भी यथा समय समाचार पत्रों में हो चुकी है।

अमुक व्यक्ति राज्य के पुलिस कोतवाल थे। एक बार एक औरत देहात से भगाये जाने के सम्बन्ध में गिरफ़्तार होकर कोतवाली लाई गयी। कोतवाल साहब ने रात को उस औरत को अपने मकान पर बुलवाया। उन्होंने अपने कुछ मित्रों को भी रात में अपने यहाँ निमन्त्रण देकर बुलवाया। रात को महफिल हुई। उस औरत को कोतवाल सा० ने नाचने के लिये मजबूर किया। उसके पैर में जंगें (घुंघरू) बांध दी गयीं। उसे शराब भी पिलाई गयी। कोतवाल तथा उनके मित्रों ने भी शराब पी। वह देहाती औरत थी, नाचना गाना कुछ भी नहीं जानती थी फिर भी उसे नचाया गया। नाचते समय बीच बीच में महफिल के लोग उसका चुम्बन करते जाते थे। रात के ११ बजे तक यही नाटक होता रहा। बाद में सबने उससे अपनी काम-पिपासा शान्त की। वह तीन दिन तक कोतवाल सा० के ही मकान पर रखी गयी और इसी प्रकार उसकी रोजाना गति बनाई जाती रही। तीसरे दिन एक उच्च अफ़सर को इसका पता चल गया। अतः औरत को उस क़ैदखाने से (कोतवाल के मकान से) निकाला गया। बाद में उक्त अफसर के सामने उसने अपनी दुर्दशा कह सुनाई।

राजपूताने के एक देशीराज्य के भूतपूर्व उच्च अधिकारी

ने बड़े अभिमान के साथ अपनी कथा इस प्रकार बयान की थी।

"मैं........राज्य में ५-६ वर्ष मुलाज़िम रहा। मेरे जीवन की यह वर्ष बड़े आनन्द (?) में गुज़रीं। महाराज बड़े विलासी थे। वह रातभर विलास-लीला में पड़े रहते और दिनभर सोते रहते। राज्य का कुछ भी काम वह नहीं देखते थे। सारा कार्य उच्चाधिकारी (Heads of the departments) ही करते थे। मेरी भी इसलिये खूब पोल चलती थी। जब मैं दौरे पर देहात में जाता तो बड़ी ही मौज करता था। गाँव की जिस औरत के सौन्दर्य का पता लग जाता उसे रात में अपने डेरों पर बुलवा लेता। यदि किसी प्रकार खुशी से वह न आती तो जबरदस्ती पकड़वा लेता था। उसके घर वाले राज्यभय और समाजभय से किसी से जिक्र भी नहीं करते थे। दो एक व्यक्तियों ने मेरे विरुद्ध दरख्वास्तें भी दीं पर उनकी सुनवाई नहीं हुई। बाद में मैंने उन्हें खूब तङ्ग किया। मैंने विवाहिता युवतियों के अतिरिक्त कुमारी युवा लड़कियों को तथा विधवाओं को भी नहीं छोड़ा। यदि कोई औरत डेरे पर बुला ली गयी और उसे मैंने पसन्द नहीं किया तो उसको मौज मेरे नौकर-चाकर उड़ाते थे।" ओफ़, मौज की परिभाषा कैसी विचित्र है?

अब पाठक हृदय थाम लें, एक बड़ी ही हृदयविदारक —ना दी जाती है। यह घटना अदालत के एक मुकदमे में

के आधार पर है। इसका पूरा विवरण समय पर पत्रों में प्रकाशित हो चुका है पर यहाँ केवल सारमात्र दिया जाता है।

राजपूताना के एक स्वर्गीय नरेश के खास मर्ज़ीदान ......को जब राज्य से निर्वासित कर दिया गया तो एक डाक्टरनी ने इस्तगासा दायर किया। उस इस्तगासे पर उन मर्ज़ीदान......जी के नाम वारन्ट निकाला गया। वह राज्य के बाहर एक प्रसिद्ध शहर में गिरफ़्तार किये गये। मुकद्में के दौरान में उस डाक्टरनी ने अदालत में जो बयान दिया था वह इस प्रकार था—

"रात का वक़्त था। लगभग ९-१० बजे होंगे।......जी मेरे क्वाटर्स पर मोटर लेकर आये। बाहर मोटर खड़ी करके वह एकदम भीतर घुसे चले आये। उन्होंने मुझ से कहा कि मेरी स्त्री के पेट में दर्द है, अभी चलो। मैंने कहा कि मैं इस समय नहीं चल सकती। इस पर उन्होंने चलने का बहुत आग्रह किया और यह भी कहा कि हालत नाज़ुक है। मैं फिर भी तैयार न हुई। तब वह चीफ़ मेडिकल अफ़-सर......के क्वाटर्स पर पहुंचे और मुझे भेज देने के लिये उनसे आग्रह किया। डाक्टर सा० ने मुझे बुलवाकर कहा कि चली जाओ। मैंने कहा कि रात के वक्त मैं किसी के मकान पर नहीं जा सकती।.........जी रानी साहिबा को मोटर में अस्पताल में ही लावें। इस पर......कहने लगे

कि उसकी हालत नाजुक है। वहीं चलना होगा। डाक्टर सा० ने इस पर कहा कि मैं दो चपरासी साथ में भेजे देता हूँ, आप चली जाइये। मैं उन दोनों चपरासियों को साथ लेकर······के साथ चली गयी। जब कोठी पर पहुँची तो दोनों चपरासी तो बाहर बैठा दिये गये और वह मुझे अपने साथ अन्दर ले गये। जिस कमरे में मैं पहुंची उसमें और कोई भी न था। मैंने······जी से कहा कि मरीज़ कहाँ है? इस पर वह बोले, कि अभी आता है। फिर हँस कर कहने लगे कि मरीज़ मैं ही हूँ, मेरी दवा करो। मुझे इस पर सन्देह होने लगा। उन्होंने मुझे फिर पकड़ लिया, मैंने छोड़ देने का आग्रह किया तो उत्तर मिला कि मैं आज नहीं छोड़ सकता मैंने जब आग्रह का कुछ फल होते न देखा तो कहा कि आज मैं रजस्वला हूँ, मुझे छोड़ दो। इस पर उन्होंने कहा कि 'मैं इसकी परवाह नहीं करता। मैंने हाथ जोड़े, बहुत अनुनय विनय की पर उन्होंने न छोड़ा और कहा कि मुझे तो ख······होना है। यदि कपड़ों से हो तो·····में कर लेने दो। मैंने फिर भी इन्कार किया तो जबरदस्ती मेरे मुंह में बदफेली की। मेरा इससे दम घुटने लगा और कै हो गयी। बाद में मुझे कार में पहुँचवा दिया। मैंने दूसरे दिन यह सारा हाल डाक्टर सा० से कहा और छुट्टी लेकर······चली गयी। वहीं से मैंने इस्तीफा ·। उस समय······जा का राज्य में जोर था। उनके

विरुद्ध कोई सुनाई नहीं हो सकती थी इस लिये पुलिस में मैंने रिपोर्ट नहीं की। जब उन्हें राज्य से निर्वासित कर दिया गया तब मैंने इस्तगासा दायर किया।"

यह बयान पूरा नहीं है। डाक्टरनी का बयान बन्द कमरे में हुआ था इसलिये बाद में उस बयान का सार पत्रों में प्रकाशित हुआ वही यहां दिया गया है। इस घटना से आपने देखा कि कैसा अमानुषिक अत्याचार है?

..........एक छोटी सी रियासत है। इस समय उसका प्रबन्ध कोर्ट ऑफ वार्डस के आधीन है। कोर्ट ऑफ वार्डस की तरफ से एक मुसलमान मैनेजर है। यह मैनेजर जब नियुक्त किया गया था तब राजमहल से इसका विरोध हुआ था। रानियों ने गवर्नमेण्ट में दरख्वास्त दी थी मगर कोई सुनवाई न हुई, क्योंकि महाराज ने स्वयं ही उसको चुना था। रानियों के विरोध का कारण यह बतलाया जाता है कि स्वर्गीय महाराज के समय वह मुसलमान सज्जन दीवान थे। उस समय राज्य में बड़ा अन्धेरखाता था। रानियों के प्रतिवाद से वह बहुत ही चिढ़ गये और रानियों को तंग करने लगे। साथ ही महाराज को विलासलीला में फँसाकर स्वयं ही खूब मौज उड़ाने लगे आप के पास नित्य एक न एक वेश्या आती ही रहती है। प्रजा में से भी कभी-कभी आप किसी सौभाग्यशालिनी को बुला लेते हैं। महाराज उनकी हाथ की कठपुतली हो रहे हैं और सरकार भी

उनकी प्रतिपालक है इसलिये उनके ख़िलाफ़ कहीं कोई सुनवाई नहीं होती।

पंजाब में .... एक अच्छी रियासत है। महाराज विलासता के लिये काफ़ी प्रसिद्ध हैं। उनके यहां एक अफ़-सर थे। वह महाराज के खास मर्जीदां थे। इस कृपा का कारण 'जैसे गुरू वैसे ही चेला' था। वह अफ़सर सा० भी स्वतः विलासी थे। महाराज को विलासता में विशेष सहा-यता देते थे इसलिये आप भी इस स्वर्गीय आनन्द में मश-ग़ूल बने रहते थे। अपनी तनख्वाह शराव और वेश्याओं की नज़र कर देते थे। जब इसमें भी पूरी नहीं पड़ती तो आप प्रजा को लूटते और नाना प्रकार से रिश्वतें लेकर अपना काम चलाते थे। जिन फूलों को (स्त्रियों को) सूंघ कर महाराज अपने गुलदस्तेमें से निकाल देते उन वासी फूलों का संग्रह आप कर लेते थे। अन्त में आपकी मौत इसी में हुई।

अब सेण्ट्रल इण्डिया एजेंसी की एक छोटी रियासत पर नज़र डालिये। इस रियासत में .... एक वड़े अफ़-सर हैं। आपके सम्बन्ध में कहा जाता है कि शहर की एक भी वद्चलन स्त्री आप से नहीं बची। यहां तक कि आपने सुन्दर मेहतरानियों तक को अपनी कोठी पर वुलवाया है। एक मेहतरानी के सम्बन्ध में जव नगर में अफ़वाह फैलने लगी तो एक वार मेहतरों की पञ्चायत हुई और उसमें उस मेहतरानी के पति से जवाव तलब किया गया। उसने अपने

को दोषी बतलाते हुए भी विवशता प्रकट की और पञ्चों से माफ़ीकी प्रार्थना की। उस समय उसने यह बयान दिया था—

"………साहब पहिले नगर से बाहर कोठी पर रहते थे। वहां मेरा हलका नहीं है।………मेहतर सफाई करता है। एक दिन………साहब के दो चपरासी मेरे मकान पर आये और कहा कि मेहतरानी को छोटे सरकार (अफ़सर साहब की धर्मपत्नी) ने बुलाया है। मैंने उसे भेज दिया। वह कोठी पर गयी तो उसे भीतर नहीं जाने दिया गया और बाहर ही चपरासियों ने उसे समझाया कि तू………साहब की निज की नौकरी करले। वह चुपचाप रही। जब बार-बार उससे कहा गया तो उसने उत्तर दिया कि अपने मालिक से पूछकर कल आऊँगी तब जवाब दूँगी। उसने घर आकर सारा हाल मुझ से कहा। मैंने उसे फिर जाने से इनकार कर देने के लिये कह दिया। दूसरे दिन मेरे पीछे फिर चपरासी बुलाने को आये। मेहतरानी ने जाने से इनकार कर दिया। चपरासियों ने कहा कि 'तू अपने मालिक पर जूता पड़वाना चाहती है।' इतना कहकर वह चले गये। दो दिन बाद मुझे………साहब ने बुलवाया। मैं कोठी पर गया। बाहर कमरे में ही साहब बैठे थे। मैंने जाकर हाथ जोड़े और कहा कि 'सरकार क्या हुक्म है?' इतने में साहब क्रोधित होकर बोले कि 'अभी तक तुझे हुक्म ही नहीं मालूम है? मुझ से हुक्म पूछने आया है? तू बड़ा

घमण्डी है। तेरा घमण्ड मिट्टी में मिलवाना है।" इतना कहने के बाद अपने एक नौकर को इशारा कर दिया। बस, मेरी पूजा होने लगी। धड़ाधड़ जूते पड़े। मैं गिर पड़ा। जब चिल्लाता था तब मुँह बन्द कर दिया जाता था। बाद में मुझे वहीं बांधकर डाल दिया गया। थोड़ी देर बाद दो नौकर मेहतरानी को भी पकड़ ले गये और मेरे सामने खड़ा करके उससे कहा गया 'कि अगर तू इसे छुड़ाना चाहती है तो राज़ी हो जा। नहीं तो, औंधा पड़ा रहेगा और तुझे भी हैरानी होगी।' वह डर गयी। मैंने आँखें बन्द कर लीं। चपरासी उसे भीतर ले गये। बाद में मैं छोड़ दिया गया और यह कह दिया गया कि 'यदि किसी से कुछ कहा तो जिन्दा खाल खिंचवा ली जावेगी।' मैं अपने घर चला आया। एक घण्टे के बाद मेहतरानी भी आ गयी। थोड़े दिनों के बाद साहब ने········मुहल्ले में एक कोठी ले ली। वह मेरा ही इलाका है। मेहतरानी रोज़ाना अब साहब के यहाँ सफाई को जाती है।"

ऐसी अनेक घटनायें दी जा सकती हैं पर व्यर्थ में पृष्ठ काले नहीं करना है। इन घटनाओं से ही अफ़सरों के आचरण पर प्रकाश पड़ जाता है। विलासी नरेशों के यहाँ विलासी अफ़सरों का ही निर्वाह हो सकता है, सदाचारी अफ़सर को तो एक-दो मास में ही भाग आना पड़ता है। च है—जैसे में तैसा मिले, मिले कीच में कीच·····।'

प्रजा में पापाचार



था राजा तथा प्रजा' की लोकोक्ति पुरानी है—नयी नहीं। चाहे इस समय यह ब्रिटिश भारत के लिये लागू न समझी जावे क्योंकि शासक यूरोपियन हैं, शासित भारतीय। एक पच्छिम के हैं दूसरे पूर्व के। दोनों में जमीन आसमान का अन्तर है। राजनीति में ही नहीं, धर्म सभ्यता, आचार विचार सभी में भारी अन्तर है पर कुछ देशी राज्यों के लिये उपरोक्त लोकोक्ति पूरी तरह से लागू होती है।

राजा, उच्चाधिकारी, कर्मचारी, सरदार आदि के आचार-विचार का प्रभाव प्रजा पर भी पड़ा है। कुछ राज्यों में तो प्रजा में भी इतना अधिक व्यभिचार खुले रूप में फैला हुआ है जितना ब्रिटिश भारत के किसी भी नगर में न होगा।

मध्यभारत के एक उन्नतिशील राज्य की राजधानी में खुले रूप में व्यभिचार फैला हुआ था। वहाँ प्रायः हर मुहल्ले में विशेष स्थान थे जो अड्डा कहलाते थे। इन अड्डों में सभी जातियों और सभी श्रेणी की स्त्रियाँ—जो गृहस्थिन थीं—आया करती थीं। ये अड्डे श्रेणीवार थे।

जातिवार भी अड्डे थे। श्रेणीवार अड्डों में प्रायःसमान आयु की ही स्त्रियाँ एकत्रित होती थीं जैसे किसी मुहल्ले के अड्डे में १४ वर्ष से १६-१७ वर्ष तक की तो किसी अड्डे में १८ से २०-२२ वर्ष तक की, किसी में ३०-३५ वर्ष की तो किसी में ४०-४५ वर्ष की। जातिवार अड्डों में जाति विशेष की ही स्त्रियाँ आतीं। जैसे मारवाड़ी अड्डे में मारवाड़िन, महाराष्ट्र अड्डे में महाराष्ट्र आदि। प्रत्येक अड्डे की फीस निश्चित थी। किसी में चार आना, किसी में १), किसी में पाँच रुपया आदि। प्रत्येक अड्डे का समय प्रायः रात्रि के आठ बजे से १० बजे तक का होता था। हर अड्डे का एक मुखिया होता था जो फीस में से कुछ हिस्सा लेता था। इन अड्डों में केवल आवारह औरतें ही नहीं—भले घर की गृहस्थिन आती थीं। वह सन्ध्या समय मन्दिर में दर्शन करने को घर से जातीं और अड्डों में पहुँचती थीं। ऐसे अड्डों की संख्या लगभग सौ थी। इनके कारण साधारण प्रजा में व्यभिचार का खूब प्रचार होता था। ये अड्डे कोई गुप्त-स्थान न थे, सभी उनको जानते थे। कोई अड्डा तो बाजार के नाम पर प्रसिद्ध था तो कोई उसके कर्ता धर्ता के नाम पर, जैसे मनोहरी का अड्डा, तुलसी का अड्डा आदि। इन अड्डों का अफ़सरों या पुलिस को पता न हो, यह बात न थी। वह भी इनको जानते थे। राज्य की सरकार जानबूझ कर इनकी ओर से आँखें बन्द किये हुई थी। जब राज्य में

प्रजा के प्रतिनिधियों की व्यवस्थापिका सभा कायम हुई तब इन अड्डों के विरुद्ध आन्दोलन चला। कई वर्ष बाद एक बिल पेश हुआ और उसके पास होजाने पर अड्डे गैरकानूनी घोषित कर दिये गये। उस समय से इन अड्डों का नाम मिट गया है।

इन अड्डों की बदौलत बड़े बड़े घरोंका सर्वनाश हुआ। इस सम्बन्ध में एक बयान दिया जाता है। यह बयान एक दूसरे ही राज्य की पुलिस में हुआ था —

"मेरा नाम··· है। मैं जाति की मारवाड़िन हूँ। मैं एक भले घर की बेटी हूँ। मेरा मायका ··· है। मैं ७-८ वर्ष की थी तभी पिता का देहान्त हो गया था। मेरी भावी प्रतिदिन सन्ध्यासमय मन्दिर को जाती थी। माता मुझे भावी के साथ भेज देती थी। भावी कभी कभी तो मन्दिर में दर्शन करके लौट आती और कभी कभी मन्दिर न जाकर अड्डे पर चली जाती। मैं भी साथ ही रहती। अड्डों की लीला का मुझे कोई ज्ञान न था। अड्डे से लौटते समय भावी मुझे कुछ पैसे दे देती थी जिससे मैं माता जी से इतनी भी न कहती। इसी प्रकार लगभग ४ वर्ष तक मैं साथ में जाती रही। अब मेरी आयु १२-१३ वर्ष की हुई तब मुझे अड्डों की लीला का पूरा ज्ञान प्राप्त हो गया। भावी से मेरा अधिक प्रेम था इसलिये मैं उसकी चुगली करना नहीं चाहती थी। एक दिन भावी ने मुझे भी सर्वनाश की ओर

आकर्षित किया। मैं शर्मा गयी पर कुछ कह न सकी। भावी ने जो चाहा, किया। मेरा सर्वनाश करा दिया। तब तो मुझे इसका चस्का पड़ गया। मैं फिर तो बड़े शौक़ से भावी के साथ जाने लगी। कभी-कभी मैं स्वयं आग्रह करके भावी को अड्डे में ले जाती। थोड़े दिनों के बाद ही मेरा विवाह हो गया। मैं अपने पति के यहाँ गयी। मेरा सासुरा (पति-गृह) ······है। दुर्भाग्य से ६ महीने के बाद ही पति-देव स्वर्ग सिधार गये। मैं विधवा हो गयी। अब कभी तो मैं अपने भाई के पास रहती और कभी देवर के पास। जब भाई के पास रहती तब वही अड्डे मेरी काम-पिपासा शान्त करने में सहायक होते; इसलिये देवर के पास मुझे अच्छा नहीं लगता था पर देवर अपने ही पास मुझे रखना चाहता था। उसकी उम्र भी मेरे ही समान थी। वह मुझ पर प्रेम करता था। धीरे-धीरे उससे अनुचित सम्बन्ध हो गया और खूब मौज होने लगी।

'दुर्भाग्य से मैं गर्भवती हुई। देवर को जब यह मालूम हुआ तो वह चिन्तित रहने लगे। उन्होंने गर्भपात के लिये दवाइयाँ लाकर दीं। मैंने उनका उपयोग भी किया पर तक़दीर में तो कुछ और ही बदा था। औषधियों से कोई लाभ नहीं हुआ। अब तो देवर की निगाह बदल गयी, वह बात-बात में मुझे मारने पीटने लगे। अन्त में मुझे मार डालने का विचार किया गया। मुझे इसका पता लग गया। मैं

भयभीत हुई और अपनी जान बचाने के लिये रात को घर से निकल दी। अकेली थी। रास्ता जानती न थी। मार्ग में भय लगता था पर जान की रक्षा के लिये मैं आगे बढ़ती ही गयी। मार्ग में दो व्यक्ति मिले। उन्होंने मुझे रोका। मैं सहम गयी पर उनके हिम्मत बँधाने पर मैंने असली बात बतला दी। उन दोनों ने आपस में मशविरा किया और बाद में मुझे आश्वासन दिया। वह मुझे अपने साथ ले चले। तब से लगभग एक मास तक वह मेरे साथ यहाँ रहे। मेरे पास जो चीज़ (आभूषण) थी वह बेचकर खा गये। अब दो दिन से वह ग़ायब हो गये। उनके नाम रामदास और रघुवर हैं। वह कहाँ के रहने वाले हैं, यह मैं नहीं जानती। वह मुझे सुनसान मार्ग में मिले थे*।"

इस बयान से पता चलता है कि उक्त राज्य के अड्डे कितने नाशकारी थे। पता नहीं, ऐसी ही कितनी घटनायें हुई होंगी?

एक देशी राज्य में······सदन नाम की एक संस्था है। उसमें अनाथ तथा विधवा स्त्रियाँ रखी जाती हैं। इस संस्था का सारा प्रबन्ध राज्य के हाथ में है। स्त्रियों को वहाँ शिक्षा दी जाती है और भोजन व्यय का भार संस्था ही उठाती है। वास्तव में संस्था का ध्येय बड़ा ही अच्छा है, समाज के लिये ऐसी संस्थाओं की आवश्यकता है। राज्य ने उस

---

* इस बयान की भाषा में सुधार किया गया है।

संस्था को स्थापित करके समाज का भारी हित किया पर उसका दुरुपयोग होता है। राज्य के वायुमण्डल से वह भी अछूती नहीं है। वहां अनाथ विधवाओं का सुधार होने की अपेक्षा पतन और होता है, और वह भी राज्य कर्मचारियों की मनोवृति के कारण।

कौशिल्या नाम की एक युवती उस संसस्था में भरती हुई। वह सनाथ होते हुए भी अनाथ थी। उसका पति मूर्ख था। वह दो आने रोज़ की भी कमाई नहीं कर सकता था। वह स्वयं अपना पेट भी नहीं भर सकता था। कौशिल्या को उस संस्था में शिक्षा दी जाने लगी। पहिले वह लिखी पढ़ी न थी। संस्था ने उसके साथ अच्छा उपकार किया और थोड़े ही दिनों में उसकी साधारण योग्यता करवा दी, पर उपकार के साथ अपकार भी हुआ। एक दिन कौशिल्या को प्रधान सञ्चालिका ने अपने घर पर बुलाया। वह गयी। वहां उसे राज्य के एक कर्मचारी के साथ काला मुंह करने को मजबूर किया गया। जब उसने इनकार की तो उसे संस्था से निकाल देने की धमकी दी गयी। उसे यह भी बताया गया कि यहाँ की सभी स्त्रियां इसी प्रकार जीवन का आनन्द लूटती हैं।

अन्त में प्रधान सञ्चालिका के मकान पर ही उसका पतन हुआ। बाद में वह भी अन्य सहेलियों की भाँति जीवन का आनन्द लेने लगी पर भविष्य में क्या होगा,

इसका उसे पता न था। वह नहीं जानती थी कि यह आनन्द क्षणिक है। यह गुलाब के फूल नहीं, गहरे चुभने वाले कांटे हैं।

कुछ दिन के बाद वह गर्भवती हो गयी। यह बात जब प्रबन्धक को मालूम हुई तो उसने 'दवा' कराने पर ज़ोर दिया पर कौशिल्या राज़ी न हुई। संस्था की बदनामी न हो इसलिये उसे संस्था से निकाल दिया गया। अब उसकी आँखें खुलीं कि वह जीवन का आनन्द नहीं, दुःख था, जिसे मैं स्वर्ग समझ रही थी वह नर्क था।

अब कौशिल्या का दुनियां में कोई नहीं था। वह फूट फूटकर रोती और अपना सारा दुखड़ा हरेक को सुनाती पर हिन्दू समाज में ऐसों को स्थान कहाँ? किसी ने कुछ नहीं सुना। उसकी दुःख गाथा जो सुनता था वह उसे ही दोषी बतलाकर हँसी उड़ाता। वह बेचारी दो-तीन दिन भटकती रही पर अन्त में एक तांगेवाले मुसलमान ने उसे शरण दी। आज भी वह उसी तांगावाले के यहाँ 'पर्दे की बीबी' बनकर रह रही है। उस लोकोपयोगी संस्था ने एक हिन्दू रमणी को मुसलमानों के हाथ पटक दिया है।

यह तो रही समाज हितकारी संस्था की बात, अब ज़रा वहाँ के साधारण नगर निवासियों के आचरण पर भी एक दृष्टि डालिये।

जिन लोगों को वहाँ के मूल निवासियों के साथ रहने

का अवसर मिला है उनका कहना है कि ९० प्रतिशत महिलायें अपने सतीत्व को खो देती हैं। यह दोष केवल महिलाओं में ही नहीं है—पुरुषों में भी है। वह अपना घर छोड़ इधर उधर को हवा खाते हैं और उनके घर की महिलायें अपने दोस्तों के साथ स्वर्ग (?) का आनन्द लूटती हैं। श्रावण आदि के अवसर पर जो मेले नगर के बाहर बागों में या पहाड़ियों पर होते हैं उनमें सारा दृष्य स्पष्ट दिखलाई देता है। महिलायें मेले में जाती हैं तो उनके दोस्त भी 'आँखें सेंकने' के लिये पहुँच जाते हैं। फिर खूब अठखेलियां होती हैं। रास-लीला का खासा दृश्य दिखलाई देता है।

'तू कहे न मेरी और मैं कहूँ न तेरी' इस लोकोक्ति के अनुसार न कोई पुरुष किसी भी स्त्री के घरवालों से कुछ कहता है और न कोई महिला अपनी किसी सहेली की चुगली करती है।

इतना हीं नहीं—खूब भरे हुए मेले में उन बागों या पहाड़ियों पर बहुत से 'वायदे' पूरे होते हैं। कहने के लिये वह दुराचारिणी 'महादेव की पूजा' करने जाती हैं पर वहाँ एक दम स्वर्ग (?) में पहुँच जाती हैं!

इस पापाचार का परिणाम बड़ा ही बुरा होता है। महिलाओं का असर पुरुषों और बालकों पर भी पड़ता है।

पाठकों को सहज में विश्वास नहीं होगा पर सच्ची बात

तो कहनी ही पड़ेगी। वहां रात्रि के समय चौक में अनेक व्यक्ति ऐसे घूमते रहते हैं जो युवकों को पतित करने का उद्योग करते हैं। वह किसी न किसी प्रकार युवकों को अपने घर ले जाते और अपनी धर्मपत्नी के सुपुर्द कर देते ! ओफ़् ? कैसा पतन है ? कितना भारी अधर्म है ?

उपरोक्त डिजाइन के लोग काफ़ी आयु होजाने पर भी 'चाकलेट-पंथ' के अनुयायी बने रहते हैं। कोई कोई तो युवकों को बहका कर अपने घर ले जाते और अपनी धर्म-पत्नी के सुपुर्द करने से पूर्व उनके पौरुष की स्वयं परीक्षा भी करते हैं।

अब बालकों की ओर देखिये। जब माता पिता इस नारकीय जीवन को व्यतीत करते हैं तो उनके बालकों का सदाचारी रहना कहाँ तक सम्भव है, यह पाठक स्वयं अनु-मान लगा सकते हैं। ऐसे नगरों के स्कूलों में अप्राकृतिक दुराचार (un-natural crimes) खूब होता है। संध्या समय चौक में देखिये, हरेक जेन्टिलमैन (?) की बगल में एक 'चाकलेट' जरूर होगा।

इस दुराचार को मिटाने के लिये नगर में एक समिति का संगठन किया गया था। इसमें प्रायः सभी ऐसे नव-युवक थे जो राज्य के मूल निवासी न थे पर अपने संरक्षकों अथवा अपनी मुलाज़मत के कारण वहां रहते थे। इस समिति ने मेलों में—खेल तमाशों में—चौक में और स्कूलों

में अपना काम किया। अनेक मामले पकड़े और दोषी बालकों के संरक्षकों से जाकर कहा पर जब संरक्षक ही अपने राग में मस्त हों तो उन पर कहने सुनने का क्या प्रभाव पड़े? कभी कभी तो समिति के सदस्यों को उल्टी फटकार सहना पड़ी।

थोड़े ही अर्से में समिति के सदस्यों को इसका भारी ज्ञान प्राप्त हो गया था। ऐसे ऐसे रहस्य खुले जो कभी सुनने में भी नहीं आये। समिति ने अनुभव किया कि स्कूलों के अध्यापकों का भी इस दुराचार में काफ़ी हाथ है इसलिये स्कूलों में कार्य्य करने में समिति को सफलता नहीं मिली।

अन्त में समिति ने यह कार्य छोड़ दिया और अपना ध्यान अन्य सामाजिक कार्यों की ओर लगाया।

अब राजपूताने की एक घटना सुनिये। ब्रिटिश भारत के एक बड़े नगर के एक आश्रम में राजपूताने की एक महिला ने अपनी दुःख-गाथा इस प्रकार सुनाई थी—

"मेरा जन्म एक प्रतिष्ठित घराने में हुआ था। बचपन में खूब खेली। बड़ी होने पर शादी कर दी गयी। मैं तब सांसारिक बातों को न जानती थी। जब मैं अपने मालिक के घर (पति गृह) आयी तब घर में मेरे ससुर, सास, एक चाची, एक विधवा नन्द (पति की बहिन) और मालिक (पति) थे। कुछ दिन रहने के बाद जब मुझे कुछ ज्ञान

तो बड़ी बातें सुनीं। ससुर जी का चाची से अनुचित संबंध था। नन्द रोजाना मन्दिर जातीं और अपनी मौज उड़ाती, मेरे पति का भी पड़ोस की एक स्त्री से सम्बन्ध था। थोड़े दिनों बाद ससुर जी ने मुझ पर भी दृष्टि डाली। मैं पहिले तो राजी न हुई पर पति के आचरण देखकर तथा प्रलोभन मिलने पर राजी हो गयी। संयोग से दो वर्ष बाद पति का देहान्त हो गया पर मुझे इसका अधिक दुख नहीं हुआ। ससुर जी के रहते मुझे किसी की चिन्ता न थी पर हाय! मेरी तकदीर ही खराब थी। मैं गर्भवती हुई तो ससुर जी की निगाह से उतर गयी। पहिले मैं पुत्र-लालसा पूरी होते देखकर प्रसन्न हुई पर जब ससुर जी की निगाह फिरी देखी तो रञ्ज हो गया। अब तो मुझे सब घर की झिड़कियाँ दिन भर सुननी पड़तीं। मैं इस से तंग आ गयी। आखिर को घर से निकल भागी।.........में मुझे दो धर्मात्मा मिले उन्होंने मुझे यहाँ पहुँचा दिया।"

गवालियर के एक सुधारक वैश्य महाशय ने एक बार अपनी ही जाति की एक कहानी पत्रोंमें प्रकाशित करवाई थी—

"श्री.........के एक पुत्री है। उसकी आयु इस समय लगभग १६-१८ वर्ष की है। उसका विवाह बाल्यकाल में ही हो गया था। लगभग ३ वर्ष हुए वह विधवा भी हो गयी। तब से बराबर अपने पिता के ही पास रहती है।

समाज में आजकल जैसा वातावरण है उसमें किसी भी बाल-विधवा से आजीवन सदाचार पूर्वक रहने की आशा नहीं की जा सकती। इस विधवा के लिये भी आशा रखना व्यर्थ था फिर भी माता पिता ने पुनर्विवाह न करके उसे 'ब्रह्मचारिणी' ही बनाये रखने की आशा रखी। सेठ जी स्वयं बड़े विलासी हैं। उनके अन्य परिवारवालों के सम्बंध में भी ऐसी ही अफवाहें सुनने में आती हैं क्यों कि उनकी एक विधवा बहू भाग चुकी है और वह दूसरे मुहल्ले में एक सेठ के ही पास है। उस दिन मुहल्ले में यह चर्चा फैल गयी कि श्री········की बाल-विधवा पुत्री गर्भवती है। बिरादरी के अन्य लोगों के कानों में भी यह चर्चा पहुँच गयी। अब सेठ जी उसे घर से निकाल देने का विचार कर रहे हैं। उसे खूब मारते हैं, पीटते हैं, और घर से निकल जाने को कहते हैं। वह बेचारी रो धो कर चुप रह जाती है। यह पापाचार किसका है अभी इसका भेद नहीं खुला।"

········के थाने में, प्रातःकाल ही, यह खबर पहुँची कि रा······की पत्नि ने ज़हर खा लिया है। पुलिस फौरन उसके घर पहुँची। उस समय वह स्त्री आँगन में पड़ी हुई थी और क़ै कर चुकी थी। थानेदार ने क़ै एक शीशी में भरवा ली। उस स्त्री को गिरफ़्तार कर लिया और उसके अभिभावुक को भी पकड़ लिया। स्त्री ने बहुत पूछने पर शर्माते हुए यह बयान लिखाया—

"लगभग १५ वर्ष हो गये, जब मैं विधवा हो गयी थी तब से मेरे मकान पर……रहता है। यह मेरी ननद का लड़का है, सारी सम्पत्ति इसी के नाम कर दी गयी है। अपने वैधव्यजीवन के १२-१३ वर्ष मैंने किसी प्रकार ईश्वर के ध्यान में व्यतीत किये पर दो वर्ष पूर्व की बात है जब कि इस (भानजे) ने मुझे छेड़ना आरम्भ किया। पहिले मैं इस पर बहुत बिगड़ती थी पर किसी से कहती न थी। चार छः महीने इसी प्रकार बीते। सर्दी की ऋतु में इसने शराब पीना आरम्भ करदी। कभी कभी वह मुझसे भी शराब पीने का आग्रह करता पर मैं तैयार न होती। एक बार जबरदस्ती उसने मुझे थोड़ी शराब पिलादी। फिर चार छः बार प्रसन्नता से मैंने उसके साथ शराब पी ली। श्रावण की बात है जबकि उसकी स्त्री अपने पीहर चली गई थी। अन्धेरी रात थी, पानी बरस रहा था, मैं सो रही थी, अचानक……मेरे कमरे में आया। मैं चौंक गयी और उसने बिजलीलेम्प (टार्च) जला दिया। उसके हाथ में शराब थी। मुझ से कहा कि 'मामी' आज तुम्हें यह जरूर पीनी पड़ेगी। वर्षा के कारण मैं बढ़िया शराब लाया हूँ। मैंने एक प्याली पीली। वह मेरे पास बैठा रहा और बातें करता रहा।

"बस, उस दिन मेरा पतन हो गया। १३ वर्ष से मैंने जो तपस्या की थी वह बरबाद हो गयी। मैंने अपने मुँह में कालिख लगाली। उस दिन कई बार मैंने शराब पी और

ऐशोआराम किया। मैंने तब यह नहीं सोचा था कि मुझे इसका भारी दण्ड मिलेगा।

"अभी १०-१२ दिन की बात है जब मैंने......से कह दिया कि गर्भ रह गया है। वह यह सुनकर हँसा पर पीछे रञ्ज में पड़ गया। उस दिन से मुझे रोजाना पीटता है। मुझसे मार नहीं खाई जाती इसलिये मैंने संखिया खालिया। संखिया मेरे पास रखा हुआ था। दीदी की दवा के लिये आया था।"

अब एक वेश्या का बयान देखिये। यह वेश्या इस समय इलाहाबाद में है। एक बार कुछ सुधारकों ने इलाहाबाद की वेश्याओं के सच्चे हाल जानने के लिये बयान लेने का प्रयत्न किया था पर वह पूर्ण रूप से सफल नहीं हुए, केवल चार पाँच वेश्याओं के ही बयान प्राप्त कर सके। उनमें दुर्भाग्य से एक वेश्या एक देशी राज्य की थी, उसी की आत्म-कथा यहाँ दी जाती है।

"मेरा जन्म एक अच्छे कुल में हुआ है। जिस समय मेरा बालकपन था, उस समय मेरे पिता की आय अच्छी थी। मेरा बाल्यकाल बड़े ही आनन्द में बीता। युवा होने पर मेरी शादी हुई। शादी में खूब धूम-धाम रही। बरात में दो वेश्यायें भी नाचने को आई थीं। विवाह के बाद मैं अपने सासुरे गयी। मुझे कुछ हिन्दी पढ़ना लिखना सिखा दिया गया था। पति भी सुशिक्षित थे। उन्होंने मुझे कुछ

दिनों में और भी योग्यता करादी पर ईश्वर से मेरी सौभाग्य वृद्धि नहीं देखी गयी। उसने मेरा सौभाग्य छीन लिया, मैं विधवा हो गयी। मैं अपने भाई के पास आ गयी। सासुरे वाले अब मुझे रखना नहीं चाहते थे इस लिये मेरा भरण पोषण का भार भाई पर आ पड़ा। पिता जी भी स्वर्गवासी हो गये थे।

"दो वर्ष बड़े ही आनन्द से कटे। भाई ने मुझे हर प्रकार से सुख पहुँचाया जिससे वैधव्य जीवन मुझे नहीं खटका।

"उन दिनों मेरे भाई के एक साथी······थे। वह कभी-कभी मेरे मकान पर आया करते थे। वह मुझे 'बहिन' मानते थे पर हाय! उस 'बहिन' में मेरा सर्वनाश छिपा हुआ था। त्यौहारों के अवसर पर वह मुझे अपने घर पर आमन्त्रित करते थे। भावी भी मेरे साथ जाया करती थीं। भावी से वह 'देवर-मित्र' हँसी मजाक भी करते रहते थे। एक बार—होली की बात है—भावी की तबियत ख़राब थी। वह मित्र आये और भाई साहब से मुझे तथा भावी को अपने घर भेज देने के लिये कहा। भाई साहब ने कह दिया कि तुम्हारी भावी की तबियत ख़राब है पर लीला को भेज ंगा। उन्होंने मुझसे कह दिया कि·········के यहाँ चली ाओ। मैंने भावी से कहा कि तुम नहीं जातीं तो मैं भी न ाऊँगी। भावी ने कहा कि मेरी तबियत ख़राब है, तुम रूर जाओ, नहीं तो·········जी बुरा मानेंगे।

"भावी के मजबूर करने पर मैं उनके घर चली गयी। बस, वही दिन मेरे सर्वनाश का दिन था। उस कलियुगी भाई ने मुझसे बहिन कहते हुए भी ज़बरदस्ती की। मैंने छुड़ाकर भागने का बहुत प्रयत्न किया पर भाग न सकी। क्योंकि उस दुष्ट की स्त्री भी इस पापकर्म में सम्मिलित थी, वह टट्टी का बहाना करके छत पर चली गयी थी और कमरे के बाहर का दरवाज़ा बन्द कर गयी थी।

"घर पर आकर मैंने सारा हाल रो-रोकर भावी से कहा पर भावी ने मुझे उल्टी फटकार बतलाई और कहा कि 'यदि यह बात तुम अपने भाई से या अन्य किसी से कहोगी तो घर से निकाल दी जाओगी।' मैं सहम गयी। पहिले मेरा विचार भाई साहब से कहकर उस कलियुगी मित्र का मुँह काला कराने का था पर अब विचार बदल देना पड़ा। घर से निकाल दी जाऊँगी इस भय ने मुझे भयभीत कर दिया। मैं चुप हो रही।

"वह 'कलियुगी भाई' फिर भी प्रति दिन मेरे मकान पर आया करता और भाई साहब के साथ बैठा ताश खेला करता पर जब कभी उसे प्यास मालूम हो तो मुझे ही बुलाया करता—'बहिन लीला, पानी दे जाओ।' भाई साहब भी यही आज्ञा दे देते, मजबूरन मुझे पानी देने उसके सामने जाना पड़ता था।

"कुछ दिन बाद श्रावण का महीना आया। सब की

मथुरा चलने की तैयारी हुई। भाई साहब ने अपने मित्र को भी साथ ले लिया। सब मथुरा जी आये। एकादशी को द्वारिकाधीश के मन्दिर में भीड़ के कारण मेरा सब से साथ छूट गया। मैं घबरा गयी पर इतने में ही सड़क पर खड़े हुए वही मित्र नज़र पड़े। उन्होंने मुझे बुला लिया। मैं उन के साथ धर्मशाला चली आई।

"धर्मशाला में एक कमरा हम लोगों के पास था। रात के ग्यारह बजे खूब ज़ोर का पानी बरसना शुरू हो गया। भाई साहब और भावो साहिबा मुझे ढूंढ़ते-फिरते रहे और पानी बरसने के कारण कहीं बैठ रहे। कमरे में मैं और वही मित्र थे। बस, उनकी बन आई। उन्होंने फिर अपनी मन-मानी की। मैं इस बार लज्जावश कुछ न बोली। भय था कि चिल्ला देने से धर्मशाला के और भी यात्री आ जावेंगे और मामला कहीं पुलिस तक न पहुँचे तो मैं भी थाने में खिची-खिची फिरूँगी।

"लगभग दो बजे के पानी बन्द हुआ और भाई सा० भी आगये। इस बार मैंने भावो सा० से भी कुछ नहीं कहा क्योंकि उल्टी डाँट की सम्भावना थी।

"कुछ दिन बाद गर्भ के चिह्न प्रकट होने लगे। अब तो भावी को बड़ी चिन्ता हुई। उनकी दृष्टि भी मेरी ओर से बदल गयी। मुझे रोजाना ताने सुनाने लगी।

"कार्तिकी पूर्णिमा का पुष्कर जी का मेला था। पुष्कर

जी-स्नान को भाई सा० भावी को और मुझे लेकर गये। जब स्नान करके चलने लगी तो भीड़ में भाई सा० ने मेरा साथ छोड़ दिया पर सौभाग्य से आगे वह मुझे मिल गये। दूसरे दिन वहाँ से अजमेर आये। अजमेर से ट्रेन में बैठकर ....को चले। रात का समय था। मैं सो गयी। जब आँख खुली तो देखा कि मैं अनजान देश में आगयी और न भाई सा० का पता है और न भावी का। मैं बहुत रोई पर ट्रेन के और मुसाफिरों ने मुझे साहस बँधाया। ट्रेन सीधी दिल्ली आ खड़ी हुई। सवेरा हो गया था। डिब्बे के दो मुसाफिर मुझे अपने साथ स्टेशन के बाहर निकाल लाये।

"अब मैं कुछ सकुचायी पर उन्होंने कहा कि 'हमारे मकान पर चलो। वहाँ ठहरना। तुम्हारे भाई को तार भेज देंगे और वह आकर तुम्हें ले जावेंगे।' मैंने उनकी बातों पर विश्वास कर लिया और उनके साथ चली गयी।

"तीन दिन तक मैं भाई सा० के इन्तज़ार में रही पर कोई नहीं आया। अब उन लोगों ने मुझे समझाया कि 'आजकल कोई किसी का नहीं होता। हमने तार दिये फिर भी तुम्हारे भाई नहीं आये। मालूम होता है कि उन्होंने तुमको धोखा दिया है।' मेरी समझ में उनकी बात आ गयी। मुझे भी ऐसा ही विश्वास होने लगा। दिल में भारी क्रोध भी था और रंज भी पर दिल मसोस कर चुपचाप बैठी रहती।

"चौथे दिन उन साधु पुरुषों ने अपना गुण्डापन दिखलाया और एक कमरे में मुझे बन्द करके पापाचार किया। अब मैं बेवश थी, जाती भी तो कहाँ जाती ? अन्त में इतना होने पर भी उनके ही घर बनी रही।

"उन्होंने डाक्टरनी को बुलवा कर मेरे पेट से बच्चा निकलवा दिया। मुझे इसमें काफ़ी कष्ट हुआ पर दिल में खुशी थी कि पाप का फल दूर हुआ जारहा है इसलिये मैं इसके लिये राज़ी हो गयी थी।

"बाद में—चार-पाँच महीनों के बाद—उन्होंने मुझे एक वेश्या के हाथ बेच दिया। तब से मैं यह जीवन व्यतीत कर रही हूँ। मुझे इस जीवन से घृणा है पर अपने भाई, भाबी और कलियुगी भाई आदि के कारण इस नर्क-कुण्ड में पड़ी सड़ रही ।"

———

मन्दिरों में

(१०)

मन्दिर पवित्र स्थान समझे जाते हैं। वह ईश्वरोपासना-गृह माने जाते हैं। हिन्दू मन्दिर को तो एक प्रकार से ईश्वर के वास का स्थान ही मानते हैं। वहाँ जाकर सभी हिन्दू श्रद्धापूर्वक माथा टेकते हैं और उनमें किसी भी अपवित्र अर्थात् वेश्या या अछूत हिन्दू को प्रवेश नहीं करने दिया जाता। जूता, लाठी, बेत, छाता, बीड़ी, सिगरेट आदि भीतर ले जाने की मनाही होती है, पर मदान्ध विलासी पुरुष उस पवित्र स्थान को भी 'विलास-भवन' बना डालते हैं। वह लोगों को दिखाने के लिये तो मन्दिरों में प्रवेश करते ही साष्टांग दण्डवत् श्री ठाकुर जी को करते हैं मगर अवसर पाकर उन्हीं ठाकुर जी की छाती पर विलास-लीला करते हैं।

.........के महाराज ने अपने ही नौकर किशोरसिंह की स्त्री उड़वा ली। कुछ दिनों तक तो किशोरसिंह को पता नहीं चला कि उसकी स्त्री कहां है पर बाद में उसे मालूम हो गया कि महाराज ने ही उसके साथ 'भलाई' की है।

तब उसने अंगरेज़-अफ़सरों को एक दरख़्वास्त भेजी। उस दरख़्वास्त में अपने विवाह और स्त्री के उड़ाये जाने का क़िस्सा लिखते हुए उसने अन्त में लिखा था—"मेरी स्त्री इस समय क़ैद है। वह एक मन्दिर में रखी गयी है। उससे पापाचार किया जाता है। विलासियों को ईश्वर का भी भय नहीं है।"

उपरोक्त घटना इतनी स्पष्ट है कि अब आलोचना करने को विशष आवश्यकता नहीं। जब महाराज ही देवालय को विलास-भवन बनावें तब प्रजा और साधारण व्यक्तियों की कौन कहे ?

.........राज्य में कई मन्दिर ऐसे हैं जो राज्य के ही माने जाते हैं। उन मन्दिरों के भोग पूजा एवं प्रबन्ध का भार राज्य पर ही है। राज्य की ओर से थोड़ी-थोड़ी जायदाद भी मन्दिरों से लगी हुई है। उन मन्दिरों में जो महन्त या पुजारी हैं वह प्रायः महाराज की इच्छा से रखे गये हैं। एक पुजारी जी ऐसे हैं जो दिन में तो भगवान् की पूजा करते हैं पर रात को मन्दिर के पीछे के कमरे में शहर से स्त्रियों को बुलाते हैं और स्वयं भी ऐशो-आराम करते हैं तथा एक अफ़सर सा० को भी बुला लेते हैं। वह अफ़सर सा० बदनामी के भय से अपनी कोठी पर किसी को नहीं बुलाते वरन् रात्रि को देव-दर्शन करने मन्दिर में आते हैं। श्री भगवान् की आरती के बाद वह परी-दर्शन करते हैं।

सवेरा होने से पूर्व वह अपनी कोठी पर आ जाते हैं।

ग......में बहुत से मन्दिर हैं। इन मन्दिरों का सम्बन्ध राज्य से नहीं है। वह सर्वसाधारण के मन्दिर हैं। इन मन्दिरों में सुबह शाम भक्तों की काफ़ी भीड़ रहती है। यह सब भक्त (नर-नारी) ईश्वर-भक्ति से प्रेरित होकर मन्दिरों में आते हैं या किसी स्वार्थ के लिये, इस बात का पता उस समय स्पष्ट रूप से चल जाता है जब सन्ध्या समय भक्तों का समुद्र उमड़ता है। इन भक्तों में अधिकतर प्रेमी-प्रेमिकायें होते हैं। कुछ दलाल भी पीछे 'पीछे' लगे रहते हैं जो मन्दिर में देव-आराधना के बाद भक्तिन को अड्डों पर ले जाते हैं। ये अड्डे क्या चीज़ हैं—यह पिछले प्रकरण में मालूम हो चुका है।

वास्तव में मन्दिर अनेकों के लिये एक प्रकार की 'आड़' है। उसकी आड़ में दुराचारिणी महिलायें अपना स्वार्थ साधन करती हैं। वह अपने घर पर देव-दर्शन के लिये मन्दिर जाने का नाम ले देती हैं पर मन्दिर में जाते ही या तो उनके प्रेमी मिल जाते हैं या पुजारी जी से प्रेमी के आने या न आने का समाचार मिल जाता है। प्रायः ऐसे लोग पुजारी से बड़ा प्रेम प्रकट करते हैं और उनसे अपने 'दूत' का काम लेते हैं। पुजारी जी ये बातें किसी प्रकट नहीं करते, और वह प्रकट करें भी क्यों? इससे उन्हें आमदनी होती है, मन्दिर में भक्तों की संख्या बढ़ती है

तब उसने अंगरेज़-अफ़सरों को एक दरख़्वास्त भेजी। उस दरख़्वास्त में अपने विवाह और स्त्री के उड़ाये जाने का क़िस्सा लिखते हुए उसने अन्त में लिखा था—"मेरी स्त्री इस समय क़ैद है। वह एक मन्दिर में रखी गयी है। उससे पापाचार किया जाता है। विलासियों को ईश्वर का भी भय नहीं है।"

उपरोक्त घटना इतनी स्पष्ट है कि अब आलोचना करने की विशेष आवश्यकता नहीं। जब महाराज ही देवालय को विलास-भवन बनावें तब प्रजा और साधारण व्यक्तियों को कौन कहे ?

........राज्य में कई मन्दिर ऐसे हैं जो राज्य के ही माने जाते हैं। उन मन्दिरों के भोग पूजा एवं प्रबन्ध का भार राज्य पर ही है। राज्य की ओर से थोड़ी-थोड़ी जायदाद भी मन्दिरों से लगी हुई है। उन मन्दिरों में जो महन्त या पुजारी हैं वह प्रायः महाराज की इच्छा से रखे गये हैं। एक पुजारी जी ऐसे हैं जो दिन में तो भगवान् की पूजा करते हैं पर रात को मन्दिर के पीछे के कमरे में शहर से स्त्रियों को बुलाते हैं और स्वयं भी ऐशो-आराम करते हैं तथा एक अफ़सर सा० को भी बुला लेते हैं। वह अफ़सर सा० बदनामी के भय से अपनी कोठी पर किसी को नहीं बुलाते वरन् रात्रि को देव-दर्शन करने मन्दिर में आते हैं। श्री भगवान् की आरती के बाद वह परी-दर्शन करते हैं।

सवेरा होने से पूर्व वह अपनी कोठी पर आ जाते हैं।

ग······में बहुत से मन्दिर हैं। इन मन्दिरों का सम्बन्ध राज्य से नहीं है। वह सर्वसाधारण के मन्दिर हैं। इन मन्दिरों में सुबह शाम भक्तों की काफ़ी भीड़ रहती है। यह सब भक्त (नर-नारी) ईश्वर-भक्ति से प्रेरित होकर मन्दिरों में आते हैं या किसी स्वार्थ के लिये, इस बात का पता उस समय स्पष्ट रूप से चल जाता है जब सन्ध्या समय भक्तों का समुद्र उमड़ता है। इन भक्तों में अधिकतर प्रेमी-प्रेमिकायें होते हैं। कुछ दलाल भी पीछे 'पीछे' लगे रहते हैं जो मन्दिर में देव-आराधना के बाद भक्तिन को अड्डों पर ले जाते हैं। ये अड्डे क्या चीज़ हैं—यह पिछले प्रकरण में मालूम हो चुका है।

वास्तव में मन्दिर अनेकों के लिये एक प्रकार की 'आड़' है। उसकी आड़ में दुराचारिणी महिलायें अपना स्वार्थ साधन करती हैं। वह अपने घर पर देव-दर्शन के लिये मन्दिर जाने का नाम ले देती हैं पर मन्दिर में जाते ही या तो उनके प्रेमी मिल जाते हैं या पुजारी जी से प्रेमी के आने या न आने का समाचार मिल जाता है। प्राय: ऐसे लोग पुजारी से बड़ा प्रेम प्रकट करते हैं और उनसे अपने 'दूत' का काम लेते हैं। पुजारी जी ये बातें किसी प्रकट नहीं करते, और वह प्रकट करें भी क्यों ? इससे उन्हें आमदनी होती है, मन्दिर में भक्तों की संख्या बढ़ती है

और श्री भगवान् की भेंट—आय में भी वृद्धि हो जाती है। ग……के एक मन्दिर में तो पुजारी जी की कृपा से प्रेमी-प्रेमिकाओं को घण्टे दो घण्टे आराम करने को स्थान भी मिल जाता है। ऐसे मन्दिरों को पाठक देवालय कहेंगे या सराय?

कुछ राज्यों की ओर से मथुरा, वृन्दावन, अयोध्या, बनारस आदि तीर्थ स्थानों में मन्दिर बने हुए हैं। उन मन्दिरों का सम्बन्ध अभी तक बराबर राज्य से ही चला आरहा है। महन्त की नियुक्ति, मन्दिर की मरम्मत, भोग-पूजा आदि की व्यवस्था राज्य की ओर से ही होती है। इन मन्दिरों में से कुछ की विचित्र लीला है!

वृन्दावन में………राज्य का एक मन्दिर है जो…… कुंज के नाम से प्रसिद्ध है। यह श्री यमुना जी के तट पर बना हुआ है। भवन बड़ा ही विशाल और सुन्दर है। मन्दिर की सुव्यवस्था के लिये कुछ स्थायी सम्पत्ति भी राज्य की ओर से लगी हुई है। इसके महन्त देखने में जितने हट्टे कट्टे हैं, अक़्ल में भी उतने ही मोटे हैं। विलासी तो एक नम्बर के हैं। एक नाइन की लड़की को आपने मन्दिर में ही स्थान दे रखा है। जब उसकी आयु १२ वर्ष की थी तभी से आपने उस पर 'दया' दिखलायी है। वह ग़रीब थी इसलिये सुन्दर वस्त्रों की सहायता महन्त जी ने ही दी, कुछ आभूषण भी महन्त जी ने भेंट किये और बिना विवाह हुये

ो उसका बेड़ा पार कर दिया अर्थात् गृहस्थी के उसे सब
ुख महन्त जी की कृपा से मिल गये। गर्भवती होने का
ौभाग्य भी उसे महन्त जी ने ही प्रदान किया जिसके फल
वरूप विवाह के ६ महीने बाद ही गोद में 'लाल' खिलाने
ा सौभाग्य प्राप्त हो गया। महन्त जी उस पर इतने दयालु
ैं कि उसके रोज़गार की व्यवस्था भी कर दी है। ऐसे परो-
ाकारी महन्त देशी राज्यों द्वारा सञ्चालित मन्दिरों में भी
ा मिलेंगे तो कहाँ मिलेंगे ?

यदि यह कहा जावे कि ये दुष्चरित्र महन्त महाराज की अज्ञानता में ऐसा करते हैं तो यह केवल टालने की बात होगी। महाराज को इन महन्तों या पुजारियों के आचरण का पता रहता है पर महाराज उन्हें क्यों निकालें ? वह स्वयं अपने आचरण की ओर तो देखलें ? दूसरा कारण यह भी होता है कि कभी कभी महाराज स्वयं भी मथुरा वृन्दावन आते हैं, तब इन्हीं मन्दिरों में या अपनी कोठी पर (यदि उनकी हुई तो) ठहरते हैं। उस समय ये महंत ही महाराज को 'सुन्दर सुन्दर परियों' की भेंट चढ़ाते हैं।

वृन्दावन में एक दूसरे राज्य का एक दूसरा मन्दिर है। इसके भूतपूर्व महंत बड़े ही रंगीले थे। जो कोई भी उनकी शक्ल देखता था वह स्पष्टतः उनके आचरणों को समझ लेता था। वह प्रायः रात्री समय बाग में विहार करते थे और वहीं वेश्या को या किसी स्त्री को बुलवा लेते थे। सन

१९२१ में जब असहयोग आन्दोलन चला तो उन्होंने अमन सभाओं में विशेष भाग लिया।

राजपूताना के······ग्राम में एक मन्दिर है। उस मन्दिर के महंत श्री ······ दास हैं। वह बाल्यकाल में ही उस मन्दिर के भूत पूर्व महंत के चेले होगये थे। मन्दिर की आय पर्याप्त है। कुछ ज़मीन, बाग़ आदि स्थायी सम्पत्ति भी मन्दिर के पास है। बाल्यकाल में महंत श्री······दास जी पुजारी का कार्य करते रहे। गुरू जी का उन पर भारी रौब था इसलिये कोई दुराचरण उनमें नहीं हो पाया। जब वह १७ वर्ष के थे तभी उनके गुरू जी का देवलोक हो गया। मन्दिर की प्रथानुसार बड़े धूम धाम से उनको तिलक हुआ और वह पुजारी की बजाय महंत बन गये। अब तो स्वतंत्र होगये। कामदेव ने अपना ज़ोर दिखाया। महंत जी एक कुम्हारिन पर लट्टू होगये। पुरानी प्रथानुसार उस ग्राम में मन्दिर के महंत का पद इतना ऊँचा माना जाता था कि महंत बिना 'नज़र' लिये किसी भी ग्राम-वासी के दरवाज़े पर नहीं जाते थे। जब कभी किसी ग्राम-वासी के पुत्र विवाह आदि शुभ-कार्य हों तब महंत जी को बुलाया जाता और एक रुपये की नज़र से उनका सम्मान किया जाता। पर कामदेव के वशीभूत हो महंत जी सुबह शाम उस कुम्हारिन के दरवाज़े की धूल चाटने लगे। उनका मजनू की तरह घूमना सफल हो गया। वह कुम्हारिन

मन्दिर में आने जाने लगी। बस फिर क्या था? मन्दिर जैसे पवित्र स्थान में महंत जी और कुम्हारिन की रासलीला होने लगी। ग्राम में इसकी चर्चा फैली और ग्रामवासियों की दृष्टि में महन्त जी गिर गये।

अब तक तो महन्त जी ग्रामवासियों के भय से छिप कर यह शुभकार्य (?) सम्पादन करते थे पर जब ग्रामवासियों ने मन्दिर में आना जाना कम कर दिया तो महन्त जी को ग्रामवासियों का भी भय जाता रहा। उन्होंने दिन में भी 'महन्तिन' को बुलाना आरम्भ कर दिया। धीरे २ ग्रामवासियों की रही सही श्रद्धा भी समाप्त होगयी और मन्दिर का एक प्रकार से बहिष्कार सा ही कर दिया, न कोई पुरुष दर्शन को जाता और न कोई महिला, केवल बच्चे कभी २ मन्दिर में पहुंच जाया करते थे। महन्त जी को उन बच्चों का आना भी खटकने लगा क्योंकि उससे कभी २ उनकी रासलीला में बाधा पड़ जाती थी अतः वह बच्चे भी भगा दिये जाते।

महन्त जी को अब पूर्ण स्वतंत्रता मिल गयी। पर उनका सौभाग्य अधिक दिन तक न टिक सका, कुम्हारिन गाँव छोड़कर दूसरे गाँव में जा बसी।

उन दिनों गाँव में एक दाई के सौन्दर्य्य की बड़ी चर्चा थी। कई भौंरे उस पर क़ुर्बान हो चुके थे। एक राजदूत महाशय ने तो प्रेम में मस्त हो उस दाई के साथ खाना खा

लिया था और गाँव वालों ने उन्हें समाज से बहिष्कृत कर दिया था। दो उच्चकुलीन कनौजिया उसे अपने गले का हार बना चुके थे। महन्त जी के कानों में भी उसकी चर्चा पहुंच चुकी थी। उनकी भी लार टपक पड़ी।

किसी प्रकार महन्तजी ने उस दाई को अपने प्रेम-पास में फंसा लिया। अब वह भी अपने चरणों से मन्दिर को पवित्र करने लगी। पर दूसरों को अच्छा न लगा। ग्राम-वासी तो महन्त जी के विरुद्ध हो ही गये थे। उन्हों ने उस दाई के भूतपूर्व प्रेमियों को उकसा दिया। इशारा पाते ही एक दिन बीच बाज़ार में उन महन्त के सिर पर जूता पड़ गया पर उन्हें फिर भी शर्म नहीं आई और मुक़दमेबाज़ी शुरु होगयी। दोनों ओर से अदालत में दावे दायर हुए। अन्त में आपस में ही राज़ीनामा होगया।

महन्त जी इतने पर भी चुप न बैठे। मन्दिर को ग्राम-वासियों के सुपुर्द कर दिया और आप उस 'परी' को साथ ले दूसरी रियासत में चले गये। वहाँ आप एक मन्दिर में ही ठहरे और दाईका परिचय गूजरी बतला कर दूसरों को दिया।

कुछ दिन वहाँ रहे पर वहाँ भी पोल खुल गयी। वह दाई भी वहाँ से भाग आई थी अतः महन्त जी भी अपने। स्थान पर वापिस आगये। ग्रामवासियों ने मन्दिर में एक दूसरे महन्त बैठा दिये थे। अतः आप अलग एक मकान में रहने लगे।

एक दो महीने बाद उस दाई का क़त्ल हो गया। ग्राम के बाहर उसकी लाश पड़ी मिली। किसी दिल जले आशिक ने तलवार की धार से उसका सिर उड़ाकर हृदय की जलन शान्त करली। पुलिस ने उस क़त्ल का बहुत पता लगाया पर उसका भेद नहीं खुला।

अब ग्राम वासियों का यह अनुमान हुआ कि महन्त जी जिस लैला के लिये मजनूं बन रहे थे वह लैला इस दुनियां से कूच कर गयी इस लिये महन्त जी का दिमाग़ ठिकाने आ गया होगा। उधर जिन साधु महाराज को मन्दिर का महंत बनाया था वह तीर्थ यात्रा को चले गये। अतः ग्रामवासियों ने अपने पुराने महंत को ही मन्दिर फिर सुपुर्द कर दिया।

जिसकी जो आदत पड़ जाती है वह कठिनाई से दूर होती है। महंत जी की भी आदत न गयी। उन्होंने [illegible] दास नाम के एक बालक को अपना चेला बनाया। वह मन्दिर में रहने लगा और श्री ठाकुर जी की पूजा करने लगा। लगभग एक साल के बाद उसकी मां भी इसी ग्राम में आगयी। वह विधवा थी, अतः अपने पुत्र के साथ रहने लगी। महंतजी ने बड़ी प्रसन्नता से इस 'मां' को मन्दिर के एक कोने में स्थान दे दिया।

एक महीने में ही ग्राम भर में यह चर्चा फैल गई कि महंत जी ने एक दाई रखली है, महंत जी ने खुले शब्दों में

यह स्वीकार कर लिया। एक वर्ष के अन्दर ही उसके एक पुत्री उत्पन्न हुई और प्रसव-काल में वह पुत्री तथा बाईजी दोनों ही चल बसीं। अब महन्तजी बिना बाई के फिर हो गये। माता के देहान्त हो जाने पर वह चेला भी भाग गया।

महंत जी कमज़ोर पड़गये थे। दमा का रोग होगया था इसलिये नित्य प्रति श्री ठाकुर जी की 'सेवा' वह नहीं कर सकते थे। उन्होंने पूजा के लिये एक ब्राह्मण युवक नौकर रख लिया। वह उस ग्राम से ३—४ मील दूर एक दूसरे ही ग्राम में रहता था। उसके परिवार में उसकी विधवा भावी, स्त्री, कुमारी बहन और एक बालक था।

महंतजी को कुछ साधारण सा वैद्यक-शास्त्र का ज्ञान था, दुर्भाग्य या महंतजी के सौभाग्य से उस पुजारी--युवक की भावी बीमार पड़ी। वह महंतजी को औषधि के लिये अपने मकान पर लेगया। महंतजी फिर तो रोज़ाना प्रातःकाल जाते और मरीज़ को देख कर दवा दे आते। लगभग १५—२० दिन महँत जी को जाना पड़ा। मरीज़ अच्छा होगया पर महंत और वह मरीज़ (युवक की भावी) दूसरे ही मर्ज के मरीज़ बन गये।

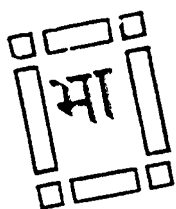
ईश्वर की इच्छा उस विधवा को सुख देने की थी। वह ब्राह्मण परिवार में विधवा होने के कारण अत्यन्त दुःख में थी। ईश्वर ने डेढ़ वर्ष बाद उसे पुत्र-रत्न दिया। अब तो युवक पुजारी ने अपना काँटा दूर करने के लिये अपनी

भावी को सदैव के लिये महंत जी के सुपुर्द कर दिया। वह मन्दिर में आगई। तब से अभी तक है।

गुजरात की एक रियासत के एक ग्राम में एक बड़ा मन्दिर है। उसके महंत श्री..........दास जी थे। उनके पास एक गुजरातिन (ब्राह्मण बाल-विधवा) दासी के रूप में रहती थी। उत्तरी भारत के एक महन्त जी अपना मन्दिर त्याग भ्रमण करते हुए उस मन्दिर में पहुँचे। महन्त श्री..........दास जी ने अपने अतिथि महन्त की खूब खातिर की। वह चार पाँच मास वहीं रहे। वह दासी अपने महन्तकी सेवा के साथ साथ अतिथि-महन्त की भी सेवा करती रही। संयोग से मन्दिर के महन्त का देहान्त होगया और दूसरे महन्त गद्दीनशीन हुए, उन्होंने दासी को निकाल दिया। अतिथि--महन्त भी उसके साथ ही चल दिए तब से वह दोनों पति पत्नी के रूप में भ्रमण करते हुए फिरते रहे हैं। वह कभी एक स्थान पर नहीं रहते। दो मास कहीं पर तो तीन मास कहीं पर।



उप-संहार



रत का नक्शा उठाकर देखिये। लाल-रेखा के साथ पीली रेखा भी नजर पड़ेगी। यह रेखा देशी राज्यों के अस्तित्व की ओर संकेत करती है। भारत में देशी राज्यों की संख्या थोड़ी नहीं है। समस्त भारत का एक तिहाई क्षेत्रफल देशी-राज्यों में है। इसलिये देशी राज्यों की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

कुछ देशी राज्यों में—कहाँ तक पापाचार बढ़ गया है—यह पिछले प्रकरणों से विदित हो गया पर उन राज्यों में एक समुदाय ऐसा है जो इस नारकीय कृत्य से बचा हुआ है। वह है देहाती-समाज! शिक्षा का प्रचार न होने के कारण देशी राज्यों की देहाती दुनियां अत्यधिक भोली है। उस दुनियां पर नरेशों की विलास-लीला का प्रभाव नहीं

कार्य करने में नहीं सकुचाता। यही बात दो एक देशी नरेशों के सम्बन्ध में भी है। वह अपनी विमाता (सौतेली माँ) पर भी हाथ सफ़ाया कर चुके हैं। इस कुकर्म के कारण उनकी रानियां बन्दो-जीवन व्यतीत कर रही हैं और महाराज अपनी विमाता के महल में ही पड़े रहते हैं। .... एक छोटी सी रियासत है। आजकल उसका प्रबन्ध कोर्ट आफ़ वार्डस के आधीन है। एक मैनेजर रियासत का प्रबन्ध करता है। इस रियासत के राजा साहब की विमाता बनी हुई हैं। राजा सा० उन्हें खूब श्रृङ्गार से रखते हैं और रात को विमाता के रनवास में ही अठखेलियां करते हैं। रानी साहिबा एक बन्दी की भाँति एक दूसरे महल में पड़ी रहती हैं। अभी राजा सा० नैनीताल जा रहे थे। साथ में विमाता की भी तैयारी हुई। रानी साहिबा ने डिप्टी कमिश्नर से भेंट की और आग्रह किया कि 'विमाता को नैनोताल साथ में न जाने दीजिये क्योंकि मेरे पति का उससे अनुचित सम्बन्ध है।' डिप्टी कमिश्नर ने रानी साहिबा से सहानुभूति प्रदर्शित की और उद्योग करने को कहा पर डिप्टी कमिश्नर को क्या पड़ी जो वह राजा सा० के सुख में बाधा डाले ? यदि राज्य सम्बन्धी कोई बात होती या अंग्रेज सरकार से सम्बन्धित कोई समस्या होती तो डिप्टी कमिश्नर फ़ौरन ही राजा सा० के कान ऐंठ देता पर यह व्यक्तिगत मामला था। उसने कोई

हस्तक्षेप नहीं किया। रानी साहिबा की प्रार्थना व्यर्थ गयी।
जब राज-महलों का इतना दूषित वायुमण्डल रहता है तो
उसकी हवा अफ़सरों, कर्मचारियों, दासियों, नौकरों और
प्रजा पर भी पड़ता है। पिछले प्रकरणों में इन सब बातों
पर प्रकाश पड़ चुका है। पाठकों ने देख लिया होगा कि
इस दूषित वायुमण्डल से मन्दिर जैसे पवित्र स्थान भी
सुरक्षित नहीं रहते।

आवश्यकता है कि इस दूषित वायुमण्डल को दूर किया
जाय जिससे समाज के मत्थे से कलंक मिट जावे। इसके
लिये घार आन्दोलन की आवश्यता है। कुछ वर्षों से पत्रों
में इस पर कुछ आन्दोलन उठा भी है, उसी का यह परिणाम
हुआ है कि दो चार अत्याचारियों को कड़ा दण्ड मिला है।
यदि आन्दोलन न होता तो उनकी करतूतों का न भण्डा फोड़
ही होता और न उन्हें सज़ा ही मिलती। वह मौज से मन
मानी करते रहते और व्यभिचार-लीला से पृथ्वी का बोझ
भारी होता जाता।

ऐसे कुछ अत्याचारियों को सज़ा मिलने से दूसरे लोग
भी सतर्क हो गये हैं और कुछ लोग तो विलासिता से तौब
भी कर चुके हैं इस पुस्तक का भी कुछ न कुछ प्रभा
पड़ेगा। यदि बराबर ऐसा आन्दोलन होता रहे तो रा
महलों के दुखी प्राणियों का बड़ा ही हित होगा।

दिल्ली का व्यभिचार

(ऋषभचरण-लिखित)

बड़े-बड़े नगरों में दिन दहाड़े भयानक दुराचार के खुले खेल खेले जाते हैं। बड़े-बड़े दिग्गज, विद्वान पुरुष भी अपने उच्च-पद का दुरुपयोग कर, भोली-भाली जनता को अनाचार की तरफ़ ले जाते हैं, और बुरे-से-बुरे उपाय-द्वारा भी रुपया लूटने में नहीं हिचकते। आधुनिक गर्हित पाश्चात्य-शिक्षा-प्रणाली के फल-स्वरूप आज हमारे नवयुवक पतन के गढ़े में गिर गये हैं, और अपना भविष्य भूल, आँख मींचकर भयानक पाप करते नहीं हिचकिचाते। हमारी माँ-बहिनें अशिक्षा और वासना में अन्धी होकर असहनीय, घृणित पापाचार में रत होने का दुस्साहस करती हैं। लेखक ने नगरों के कुछ ऐसे-ही दृश्य इस पुस्तक में रक्खे हैं। पुस्तक साहित्य की दृष्टि से कुछ ऊँची न होने पर भी साधारण पाठकों के लिये अत्यन्त शिक्षाप्रद, हितकर और उपादेय है। 'पीर साहब,' 'फिल्म-एक्ट्रेस,' 'स्काउट-मास्टर,' 'हीजड़े की स्त्री'—इत्यादि कुछ कहानियों के नाम हैं। हिन्दी के प्रसिद्ध मुसलमान-लेखक श्री० जहूरबख्श जी ने लिखा है —"...निस्सन्देह बहुत-अच्छी पुस्तक है। लेखन-शैली कला-पूर्ण और रोचक है। सामाजिक बुराइयों का नाश करने के लिये ऐसी-ही पुस्तकों की आवश्यकता है। जो ऐसी पुस्तकों का विरोध करते हैं, वे भूल में हैं।" चार कला-पूर्ण चित्र और डेढ़-सौ पृष्ठ की पुस्तक का दाम १) रु०, सजिल्द १।) रु०।

तरुण-भारत-ग्रन्थावली-सं० ६

दिल्ली-इन्द्रप्रस्थ

"Empires and nations flourish and decay
By turns command in their turns obey."



लेखक

श्रीयुत दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीस



अनुवादक

श्रीयुत रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे



प्रकाशक

तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय,

दारागंज, प्रयाग



मुद्रक—पं० रामप्रसाद वाजपेयी,

कृष्ण-प्रेस,

हिवेट रोड, प्रयाग ।



निवेदन



तरुण-भारत-ग्रन्थावली की यह छठवीं संख्या हिन्दी-प्रेमियों की सेवा में सादर उपस्थित की जाती है। यह पुस्तक मराठी के प्रसिद्ध ऐतिहासिक लेखक रावबहादुर श्रीयुत दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीस की लिखी हुई पुस्तक का अनुवाद है। पारसनीस महाशय ने मूल पुस्तक स्वतंत्र रीति से तो लिखी ही है; किन्तु साथ ही साथ अनेक इतिहास-अन्वेषक देशी तथा विदेशी विद्वानों की सहायता भी ली है, अतएव पुस्तक, छोटी होने पर भी, साहित्य की दृष्टि से बहुत उपयोगी हुई है।

यह हमारी भारत-भूमि पवित्र और ऐतिहासिक स्थानों का भांडार है। जिस प्रकार धार्मिक तीर्थस्थलों और प्राकृतिक रमणीय स्थानों की यहाँ कमी नहीं है, उसी प्रकार ऐतिहासिक और राष्ट्रीय दृष्टि से भी हमारे देश के अनेक नगर बहुत ही महत्त्व के हैं।

और सभ्यता का वह पूर्व-गौरव, किन किन परिवर्तनों को देखत हुआ, और आज किस स्वरूप में आ पहुँचा है—इसका मूर्तिमा चित्र यदि आंखों के सामने आप को लाना है, तो अनेक राज्य क्रांतियों से पूर्ण दिल्ली का इतिहास आपको पढ़ना चाहिए वह सारा इतिहास विस्तृत रूपसे यद्यपि इस छोटी स पुस्तक में आपको नहीं मिलेगा, फिर भी जो कुछ इसमें आपवे मिलेगा, उसे पढ़कर आपके हृदयमें, अपनी इस सनातन औ पुरातन राजधानी के विषय में, एक प्रकार की सहानुभूतिपूर्ण श्रद्ध अवश्य जागृत होगी। वह श्रद्धा जागृत होकर यदि आपके हृद में कोई संवेदना उत्पन्न करेगी, तो हम इस ग्रन्थ का प्रकाशन सार्थ समझेंगे। परमात्मा ऐसा ही करे।

अन्त में हम अपने प्रेमी श्रीयुत रामचन्द्र रघुनाथ सर्व महाशय को बहुत बहुत धन्यवाद देते हैं कि, जिन्होंने हमारी प्रार्थन पर, बड़े उत्साह से, तरुण-भारत-ग्रन्थावली के लिए, यह ग्रन् हिन्दी में प्रस्तुत कर दिया। आप एक उत्साही नवयुवक हिन्द प्रेमी हैं। परमात्मा आपकी आकांक्षाएं पूर्ण करे।

लक्ष्मीधर वाजपेयी।

दूसरी आवृत्ति

हर्ष की बात है कि हमारी इस पुस्तक को जनता ने बहुत पसन्द किया; और शीघ्र ही इसका दूसरा संस्करण निकालना पड़ा। इस बार हमने पुस्तक को सचित्र बना दिया है: और दिल्ली-सम्बन्धी कई सुन्दर सुन्दर चित्र इस पुस्तक में लगा दिये हैं। कागज और छपाई को भी सुन्दर रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है। आशा है, हिन्दी-प्रेमी अब इसका और भी अधिक प्रचार करके हमको बाधित करेंगे।

—प्रकाशक

अनुक्रमणिका





ऐश्वर्य, इत्यादि सब बातें आज लुप्तप्राय हो गई हैं। यदि हम रोमकपत्तन के साम्राज्यवैभवको व्यक्त करनेवाले प्राचीन शेष-चिन्होंको अपने ध्यानसे अलग कर दें, तो बड़े गर्वसे यही कहना पड़ेगा कि, संसारमें मूर्तिमन्त प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास बतलानेवाला, नगर सिर्फ दिल्ली ही है। तीन हजार वर्ष तक काल-चक्रकी अनन्त लीलाओंको देखकर, फिर भी सब लोगोंके अन्तः-करणोंको अपनी ओर खींच लेनेकी सामर्थ्य इस नगरीमें सचमुच बड़ी विलक्षण है। पांडव, कौरव, अशोक, जैन, विक्रम, चौहान, पठान, मुगल और मराठे आदि सबको सार्वभौसिकता प्राप्त करा देनेका मान इसी नगरने प्राप्त किया था; और उन सबको अपने पदोंमें लीन कर छोड़ा था। केवल यही नहीं, किन्तु सारी पृथ्वीपर अपनी राजसत्ता जमानेवाले अंग्रेज लोगोंको भी इस नगरने मोहित कर लिया है। पौराणिक कालके इन्द्रप्रस्थको मुसलमानी राजत्वकालमें जितनी महत्ता प्राप्त थी, उतनी ही महत्ता उसे मराठोंके शासन-कालमें प्राप्त थी; और ब्रिटिश शासन-कालमें भी यह नगर उतना ही महत्त्वशाली बना हुआ है। पाण्डवोंका राजसूय यज्ञ, मयासुरकी अपूर्व मय सभा, शाहजहाँ बादशाहके बहुमूल्य और रत्नजटित मयूर-सिंहासनके सामनेवाला आम दरबार, चक्रवर्तिनी देवी विक्टोरियाका 'कैसरे हिन्द' पदका बृहद् दरबार अथवा भारतके वाइसराय लार्ड कर्जनके द्वारा किया गया राजाधिराज सप्तम एडवर्ड बादशाहके राज्या-रोहणका दरबार, चक्रवर्ती सम्राट् पंचम जार्जके राज्यारोहणका अनुपम दरबार, आदिके समान दुर्लभ और प्रेक्षणीय महोत्सव इसी ...में हुए हैं. ऐसे विशिष्ट स्थलका वर्णन कौन नहीं सुनना चाहेगा?

दिल्ली शहरके दो प्राचीन नाम, हस्तिनापुर और इन्द्रप्रस्थ, और एक अर्वाचीन नाम, शाहजहानाबाद, प्रसिद्ध हैं। साधारणतया प्राचीन ग्रन्थों और कागजोंमें दिल्लीके लिए उपर्युक्त नामोंका ही प्रयोग किया जाता है। परन्तु आज-कल ये स्थान भिन्न भिन्न हैं: और उनमेंसे कुछका 'नई दिल्ली' और कुछका 'पुरानी दिल्ली' में समावेश होता है। इन्द्रप्रस्थ नामका स्थान 'पुराने किले' के नामसे प्रसिद्ध है। हस्तिनापुर नामक स्थान दिल्लीसे अलग है। और शाहजहानाबाद दिल्ली शहर में शामिल है। कहते हैं कि,

नहीं है कि, इन्द्रप्रस्थकी नगरी पांडवोंके कालसे ही अस्तित्वमें आई।

इन्द्रप्रस्थका राज्य पांडवोंके वंशमें तीस पीढ़ियों तक, यानी लगभग १८५४ वर्ष रहा।* इसके बाद, तीसवीं पीढ़ीके राजा क्षेमक अथवा लखमीदेवके प्रधान वीरसेन अथवा विसर्वने इस राज्यको छीन लिया। उसने तथा उसके वंशजोंने ३४७ वर्ष तक राज्य किया। इसके बाद, उसके वंशके अन्तिम राजा पृथ्वीपालसे नरहरिनाथ नामक उसके दीवानने यह राज्य छीन लिया। इसका राजवंश गौतमके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इस वंशके राजाओंके हाथमें यह राज्य ३८६ साल तक रहा। इसके बाद मयूरोंका राज्य हुआ। इस वंशके अन्तिम राजाको मारकर शकादित्यने राज्य छीन लिया। इसके बाद राजपूत लोग राजा हुए। इस प्रकार अनेक वर्षों तक इन्द्रप्रस्थ हिन्दू राजाओंके हाथमें रहा। इसके पश्चात् क्रमशः पठान, मुगल, मराठों और अन्तमें अंग्रेज लोगोंके हाथमें यहांकी सत्ता चली गई। जनरल कनिंगहमका मत है कि, इन्द्रप्रस्थको दिल्ली अथवा दिल्लीपुर नाम ईस्वी सन्के एक शताब्दी पहले प्राप्त हुआ होगा। उन्होंने मुसलमान इतिहास-लेखक फरिस्ताके आधार पर यह प्रतिपादन किया है कि, पहलेका दिल्ली शहर आजकलकी दिल्लीसे ५ मीलकी दूरी पर, जमुना नदीके तट पर, बसा था; और मयूर वंशके दिलू नामके राजासे उसे 'दिल्ली'

* दिल्लीके राजाओं की सम्पूर्ण नामावली इस पुस्तक के अंत में परिशिष्टरूपसे दी गई है। उसमें पांडवोंसे लेकर मुगल बादशाहोंके अंत समस्त राजाओंके नाम और उनके शासनकी वर्षगणना दी हुई है।

नाम प्राप्त हुआ। परन्तु इससे भी अधिक विश्वसनीय वृत्तान्त ईस्वी सन्की तीसरी अथवा चौथी शताब्दीसे प्राप्त हो सकता है। दिल्लीमें एक प्रख्यात लोहस्तंभ है। उसपर एक संस्कृत लेख खुदा है। उससे ज्ञात पड़ता है कि, धव नामक राजाने अपना प्रताप संसारमें प्रकट करनेके लिए यह लोहस्तम्भ खड़ा किया। जनरल कनिंगहमके मतसे इस लोहस्तम्भका समय सन् ३१६ ईसवी है। उन्होंने यह अनुमान निकाला है कि, इस समयमें चूँकि कन्नौजका गुप्त नामक राजघराना सत्ताहीन हुआ; अतएव उस समय उपर्युक्त

सिरे में सचमुच ही खून लगा हुआ दिखाई दिया; क्योंकि स्तम्भ शेषनाग के मस्तक में घुस गया था। यह देखकर राजा को ब्राह्मण के कथन की सत्यता पर विश्वास हो गया। राजा ने उस स्तम्भ को फिर गाड़ने की कोशिश की; परन्तु वह पहले के समान दृढ़ता-पूर्वक नहीं गड़ा; किन्तु कुछ ढीला रह गया। वह लोहे की लाट चूंकि 'ढीली' रही; और इसी लिए उस स्थान को "ढिल्ली" या "दिल्ली" कहने लगे। इसके सिवा और भी कई किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। टालेमी के ग्रन्थ में "दैदल" और "इन्द्रवर" नाम के जिन दो पास-पासवाले शहरों का उल्लेख किया गया है, उनसे "दिल्ली" और "इन्द्रप्रस्थ" के नामों की बहुत कुछ समानता है। इसलिए स्पष्ट है कि, ये दो नाम बहुत प्राचीन हैं। कई एक प्राक्कालीन इतिहास-अन्वेषकों का मत है कि, दिलू अथवा धिलू नाम के राजा से ही "दिल्ली" नाम पड़ा है; और विक्रमीय शताब्दी के पहले, यानी ईस्वी सन् के ५७ वर्ष पहले के लगभग इस नाम का प्रचार हुआ। विक्रम राजा के विषय में हिन्दी भाषा में जो कवित्त प्रचलित हैं उनमें यह उल्लेख है कि, "दिल्लीपति कह्यो"—यानी विक्रम को दिल्लीपति कहने लगे। सारांश यह है कि, इस शहर का "दिल्ली" नाम बहुत पुराना है।

सन् ७३६ ईस्वी से दिल्लीके राजाओंका विश्वसनीय हाल मालूम होता है। अनंगपाल तुम्वर वंशका मूल संस्थापक है। सन् ७३६ ईस्वी में इसका राज्याभिषेक हुआ। उसने पहले पहल दिल्लीमें राज्य किया। इसके बाद उसके वंशज कन्नौजमें गये। वहाँ से उन्हें राठोड़ोंके मूलपुरुष चन्द्रदेवने भगा दिया। इसके दूसरा अनंगपाल दिल्ली में आया; और वहाँ उसने अपनी

राजधानी बनाई। वहाँ उसने नया शहर बसाया; और उसके आसपास एक भारी कोट बनवाया। कुतुबमीनार के आसपास के हिस्से में प्राचीन इमारतोंके जो चिन्ह देख पड़ते हैं वे राजा अनंगपालकी राजधानीके चिन्ह माने जाते हैं। अनंगपालके दिल्लीमें राज्य करने का समय उपर्युक्त प्राचीन लोहस्तम्भ पर इस प्रकार दिया है—"संवत् दिहली ११०९ अंगपाल बही।" इससे यह सिद्ध होता है कि, सन् १०५२ ईस्वीमें राजा अनंगपाल दिल्लीमें राज्य करता था। इसके एक शताब्दी के बाद, यानी तुम्वर घरानेके

बड़ी वीरताके साथ उसका सामना किया। यहाँ तक कि, पृथ्वीराज ने उसे थानेश्वरकी लड़ाईमें अच्छी तरह हरा दिया। पृथ्वीराजने शहावुद्दीन की सेनाका ४० मील तक पीछा किया, और उसकी नाकमें दम कर दिया। परन्तु दो सालके वाद यह मुसलमानी आफ़त फिर आई; और उसने पृथ्वीराजका पराभव करके उनका वध किया; और दिल्लीका साम्राज्य अपने अधीन कर लिया!

इस प्रकार मुहम्मद गोरीके सेनापति कुतुवुद्दीनने दिल्लीको जीता और वहाँ मुसलमानी सत्ताका हरा झंडा खड़ा कर दिया। सन् १२०६ ईस्वीमें जव मुहम्मद गोरीका देहान्त हुआ, कुतुवुद्दीन स्वयं दिल्ली के सिंहासनका अधिपति वन वैठा, जोकि भारतके इतिहास में गुलाम घरानेके प्रस्थापकके नामसे प्रसिद्ध है। आजकल पुरानी दिल्लीके नामसे वस्तीका जो भाग प्रसिद्ध है, वहीं इस वादशाहकी राजधानी थी, जिसके कुछ चिन्ह अभी तक वर्त्तमान हैं। वहाँ कुतुवुद्दीन की एक मसजिद है। उसके प्रवेशद्वार पर जो शिलालेख है उससे यह मालूम होता है कि, सन् ११९३ ईस्वीमें इस विजयशाली वादशाहने दिल्लीमें स्वधर्म स्थापन करनेके उद्देशसे यह मसजिद वनवाई। अस्तु। इसी वादशाहने अपने प्रताप-सूर्य को निरंतर लोगोंकी दृष्टिके सामने रखनेके लिए अपने नामपर "कुतुवमीनार" नामका एक प्रचंड विजयस्तम्भ खड़ा किया। यह इमारत इतनी अपूर्व और भव्य है कि, समस्त पृथ्वीके लोकोत्तर चमत्कारोंमेंसे एक चमत्कार मानी जाती है। अस्तु।

जिस समय दिल्लीमें गुलामोंका घराना राज्य कर रहा था, उस इसी घरानेमें एक राजनीतिज्ञ स्त्री पैदा हुई, जो कि दिल्लीके

इतिहासमें पहली राज्यकर्त्री स्त्रीके नामसे मशहूर है। इसका नाम रजिया बेगम था। जिस तरह हंगरीके देशभक्तों ने यूरुपकी प्रसिद्ध रानी मेरिया थेरिसा का जयजयकार किया, उसी तरह रजिया बेगमकी प्रजाने भी उसकी जयजयकार करके उसे "सुल्ताना" की बादशाही पदवी प्रदान की। सन् १२९० ईस्वी तक दिल्लीका राज्य गुलाम वंशके अधीन रहा। इसके बाद जलालुद्दीन खिलजी ने अपनी राज्यसत्ता दिल्लीपर प्रस्थापित की। जलालुद्दीनके बाद उसका भतीजा अलाउद्दीन खिलजी दिल्लीके तख्त पर बैठा। इसके शासनकालमें मध्य एशियाके मुगल लोगोंने दो बार दिल्लीपर

वहाँकी भव्य इमारतों तथा अन्य कलाकौशलके कार्यों का अच्छा चित्र खींचा है। फ़ीरोजशाह तुगलकने फिर एक बार दिल्लीसे अपनी राजधानी उठाई; और फीरोजाबाद नामका एक शहर बसाया। आजकल जहाँ पर हुमायूं बादशाहकी कबर स्थित है, वहीं यह शहर था; और वहाँ पर अभी तक उसके राज-प्रासादके शेष चिन्ह दृष्टि-गोचर होते हैं। इस राज-प्रासादके दक्षिणी द्वारके समीप चक्रवर्ती राजा अशोकका विजयस्तम्भ देख पड़ता है, जो कि सन् ईसवीके तीन सौ वर्ष पहलेका है। इस स्तम्भकी ऊँचाई ४२ फीट है; और लोग इसे 'फीरोजशाहकी लाट' कहते हैं। इस पर पाली भाषा में लिखा हुआ राजा अशोकका शिला-लेख है। फीरोजशाहने इस स्तम्भको यमुना नदीके तीर पर खिजराबाद नामक स्थानसे लाकर यहाँ खड़ा किया। इस विजयस्तम्भसे फीरोजशाहकी राजधानीके स्थलका ठीक ठीक पता चल जाता है।

सन् १३९८ ईस्वीमें, महमूद तुगलकके शासन-कालमें तैमूरलंगने दिल्ली पर आक्रमण किया। उस समय यह महमूद तुगलक गुजरात में भाग गया; और उसकी सेनाने बे-तरह हार खाई। समस्त दिल्ली नगर द्रव्यलोभी तैमूरके भयंकर पंजोंमें फँस गया। उस समय लगातार पन्द्रह दिनों तक दिल्ली में लूटमार और मारकाट होती रही। इसके बाद उस नराधम नर-पिशाचकी तृषा शान्त हुई, और वह असंख्य द्रव्य तथा करोड़ों गुलाम साथ लेकर स्वदेशको लौट गया! तैमूरके दिल्लीसे लौट जानेके बाद दो महीने तक वहाँ राजसत्ता का नाम तक न रहा था। सारा नगर उध्वस्त होकर बे-चिराग हो गया।

महमूद तुगलक पुनः वहाँ आया; और उसने अपनी राजधानी

के गत वैभवको फिरसे स्थापित करनेका थोड़ासा प्रयत्न किया। परन्तु सन् १४१२ ईस्वी में उसकी मृत्यु हो गई; और उसके साथ तुगलक घराने का भी अन्त हो गया। आगे चलकर कुछ समय तक, यानी सन् १४४४ ईस्वी तक, दिल्ली में सैयद घराने ने राज्य किया। इसके बाद लोदी घराने का राज्य आया। उन्होंने दिल्लीसे अपनी राजधानी उठाकर आगरे में प्रस्थापित की और उसीको अपना निवासस्थान बनाया। इस घराने के अन्तिम बादशाह इब्राहीम लोदी पर सन् १५२६ ईस्वीमें तैमूर के छठवें वंशज बाबरने

योग्यता सेन्ट आगस्टाइन तथा रूसोके आत्मचरितों अथवा गिबन और न्यूटनके चरितलेखोंके समान ही है। एशियाखंडमें इसके समान ग्रन्थ केवल यही एक है।" *

इन शब्दोंसे बाबरके आत्मचरित का महत्व प्रकट हो जाता है। इसलिए इस ग्रन्थके सम्बन्धमें रसिक अंग्रेज विद्वानोंका यह कौतुक-पूर्ण कथन बिलकुल सच है कि, "बाबर घरानेकी राजसत्ताका नाश होने पर भी, कालकी वक्र-दृष्टिकी तनिक भी परवा न करते हुए, बड़े गर्वसे यह कहते हुए कि 'देखो, मैं ज्यों का त्यों अभी तक स्थिर हूँ,' मानो यह ग्रन्थ कालका ही उपहास कर रहा है!"†

बाबरकी मृत्युके पश्चात् उसका पुत्र हुमायूँ मुगल बादशाहतका अधिपति हुआ। उसने दिल्ली में पुनः राजधानी बनाई और इन्द्रप्रस्थकी प्राचीन भूमि पर एक किला निर्माण किया। वह अभी तक 'पुराना किला' के नाम से प्रसिद्ध है। सन् १५४० ईस्वीमें अफगान मंत्री शेरशाहने हुमायूँ को भगा दिया; और स्वयं दिल्ली

---

* His autobiography is one of those priceless records which are for all time, and is fit to rank with the confessions of St. Augustine and Rousseau, and the memoirs of Gibbon and Newton. In Asia it stands almost alone."

—*Calcutta Review, 1897.*

† The power and pomp of Babar's dynasty are gone; the record of his life—*the Littera Scripta* that mocks at time—remains unaltered and imishable."

—*S. Lane-poole.*

का बादशाह बन बैठा। उसने दिल्ली के चारों ओर फिर एक भारी शहरपनाह बनवाया। इस प्रचण्ड किलेबन्दीका 'लाल दरवाजा' नामक एक चिन्ह अभी तक शेष रह गया है। शेरशाहकी मृत्युके बाद उसका बेटा सलीम गद्दी पर बैठा। उसने सलीमगढ़ नामक एक किला बनवाकर अपना नाम अजरामर कर लिया है। सन १५५५ ई० में हुमायूँ बादशाहने फिर दिल्ली पर चढ़ाई करके अपना राज्य वापिस ले लिया। परन्तु छः महीनेके भीतर ही उसकी मृत्यु हो गई। दिल्लीमें उसकी कबर बड़ी प्रसिद्ध है; और वह उत्तम कलाकौशलका दर्शनीय स्थान है। हुमायूँ बादशाह के पश्चात् उसका पुत्र अकबर दिल्लीके सिंहासन पर आरूढ़ हुआ।

धर्मोंके तत्त्वोंको जानकर उसने यह धर्मसिद्धान्त निश्चित किया था कि--

"There was no god but God, and that Akbar was his Calif."

अर्थात् संसारमें एक परमेश्वरके सिवा दूसरा जगन्नियन्ता नहीं; और उस परमेश्वरके धर्मका शासन करनेवाला सिर्फ अकबर है। उसने गोहत्या बन्द कर दी; हिन्दू और मुसलमानोंको एकता के सूत्र में बद्ध किया; और स्वयं जोधपुर तथा जयपुरके राजपूत राजाओंकी कन्याओंसे व्याह करके उनके अन्तःकरणमें अपने प्रति प्रेम-भाव उत्पन्न कर दिया। उसके शासनकालका आदर्शरूप ग्रन्थ "आईने अकबरी" बहुत प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थसे यह अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि, अकबरके शासन-कालमें कौन कौनसे सुधार हुए थे। उसके शासन-कालमें दिल्लीके सिंहासनको जो महत्त्व प्राप्त हुआ था वह दूसरे किसी भी बादशाहके शासन-कालमें प्राप्त नहीं हुआ। दिल्लीके बादशाहके लिए पूज्यभाव और आदरका दर्शानेवाला 'दिल्लीश्वर' नामक जो विशेषण प्राप्त हुआ है, उसका आरम्भ इसी सर्वश्रेष्ठ सद्गुणसम्पन्न नृपतिसे हुआ। बर्नियर और परचास नामक यूरोपियन प्रवासियोंने अपने प्रवास-वृत्तान्तोंमें अकबरके विषयमें बहुत प्रशंसापूर्ण लेख लिखे हैं। उनका आशय यह है कि, अकबर बादशाह बहुत अच्छे स्वभावका था। उसका राजतेज बड़ा विलक्षण था। उसके शत्रु उसके प्रतापके आगे भयभीत होते थे; परन्तु दीनजनोंके लिए उसके अन्तःकरणमें दयाका भारी स्रोत बहता और उनके लिए वह एक सुगम आश्रयस्थान था। कला-

कौशलकी ओर उसका बड़ा ध्यान रहता था; और वह प्रजा-पालनको ही अपना एक मात्र कर्तव्य समझता था। इस प्रकार विदेशियों तक ने जब उस नृपतिकी इतनी प्रशंसा गायी है, तब यदि वह हमारे संस्कृत कवियोंके वर्णनका भी एक प्यारा विषय बन गया, तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं। अकबरके विषयमें संस्कृत कवियोंका इस प्रकार वर्णन पाया जाता है:—

हस्ताम्भोजमाला नखशशिरुचिरश्यामलच्छायवीचिः ।
तेजोऽग्रे धूमधारा वितरणकरिणो गण्डदानप्रणाली ॥
वैरिश्रीवेणिदण्डो नवगिममसरणी यान्दशैवालवल्ली ।
वेल्लत्यम्भोधरश्रीरकबरधरणीपालपाणौ कृपाणः ॥ १ ॥

इस वर्णन से अकबरकी योग्यता व्यक्त होती है।

सन् १६०५ ईस्वी में, अकबरकी मृत्युके बाद, उसका पुत्र 'जगज्जेता' जहाँगीर दिल्लीके सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। अकबर बादशाह और जहाँगीर, दिल्लीमें अधिक न रहकर, मुख्यतः आगरा, अजमेर और लाहोरमें रहा करते थे। इसलिए उनके शासन-कालमें दिल्लीकी महत्ता वर्णन करने योग्य न बढ़ी। परन्तु सन् १६२७ ई० के बाद जब जहाँगीरका बेटा शाहजहाँ दिल्लीके तख़्त पर बैठा, तब उसने दिल्लीको अपूर्व शोभा प्राप्त कराई—उसने उसे एक अद्वितीय नगर बना दिया। इस बादशाहको भव्य और सुन्दर इमारतोंका बेहद शौक था। इसलिए उसने दिल्लीमें 'शाहजहानाबाद' नामक एक नया शहर बसाया। आजकल जिसे 'नई दिल्ली' कहते हैं, वह इस बादशाहके लहरी स्वभावका दर्शक है। दिल्लीका किला; उसके भव्य, रमणीय तथा नेत्रानन्ददायक राज-प्रासाद, वहाँकी जुम्मा मसजिद और जमना की नहर, इत्यादि अनेक काम इसी बादशाहके शासन-समयमें हुए हैं। इन सुन्दर और दर्शनीय इमारतोंके अतिरिक्त इस बादशाहने आगरेमें अपनी प्राणप्रिय रानीके स्मरणार्थ जो अपूर्व इमारत खड़ी की है, उसकी बराबरी संसारकी एक भी इमारत न कर सकेगी। आगरेके 'ताजमहल' का सिर्फ़ नामोच्चार करते ही ऐसा मालूम होने लगता है, मानो सारी कुशलताकी परमावधि करके संसारकी अखिल सुन्दरता यहाँ भर दी गई है। इसी बादशाह ने रत्नजटित मयूरसिंहासन बनवाकर अपने अपार वैभवसे समस्त राष्ट्रोंके नेत्रोंको चकाचौंधमें डाल दिया था।

इस बादशाहके पश्चात् औरंगजेब दिल्लीका अधिपति हुआ। यह

बड़ा धर्म-विक्षिप्त मनुष्य था; और इसे समस्त भारतवर्ष में मुसलमानी धर्मके प्रचार करनेकी महत्त्वाकांक्षा बहुतही सताती रहती थी। इसके धार्मिक अत्याचार और अत्यन्त लोभके कारण सारी प्रजा त्रस्त होगई। इसीके शासन-कालमें हिन्दू-धर्माभिमानी छत्रपति श्रीशिवाजी महाराज महाराष्ट्रमें उदय हुए; और उन्होंने एक स्वतंत्र राज्यकी स्थापना की। औरंगज़ेबका सारा जीवन मुख्यतः दक्षिणमें मराठों तथा बीजापुर और गोलकुंडाके बादशाहोंसे लड़ने-झगड़नेमें ही व्यतीत हुआ, जिससे वह दिल्लीके वैभवको विशेष रूपमें नहीं बढ़ा सका। औरंग-जेब बादशाहने छत्रपति शिवाजी महाराजको एकबार दिल्लीमें

इस वर्णन से अकबरकी योग्यता व्यक्त होती है।

सन् १६०५ ईस्वी में, अकबरकी मृत्युके बाद, उसका पुत्र 'जग-ज्जेता' जहाँगीर दिल्लीके सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। अकबर बादशाह और जहाँगीर, दिल्लीमें अधिक न रहकर, मुख्यतः आगरे, अजमेर और लाहोरमें रहा करते थे। इसलिए उनके शासन-कालमें दिल्लीकी महत्ता वर्णन करने योग्य न वढ़ी। परन्तु सन् १६२८ ई० के बाद जब जहाँगीरका बेटा शाहजहाँ दिल्लीके तख़्त पर बैठा तब उसने दिल्लीको अपूर्व शोभा प्राप्त कराई—उसने उसे एक अद्वितीय नगर बना दिया। इस बादशाहको भव्य और सुन्दर इमारतोंका बेहद शौक था। इसलिए उसने दिल्लीमें 'शाहजहानाबाद' नामक एक नया शहर बसाया। आजकल जिसे 'नई दिल्ली' कहते हैं, वह इस बादशाहके लहरी स्वभावका दर्शक है। दिल्लीका किला; उसके भव्य, रमणीय तथा नेत्रानन्ददायक राज-प्रासाद; वहाँकी जुम्मा मसजिद और जमना की नहर, इत्यादि अनेक काम इसी बादशाहके शासन-समयमें हुए हैं। इन सुन्दर और दर्शनीय इमारतोंके अतिरिक्त इस बादशाहने आगरेमें अपनी प्राणप्रिय रानीके स्मरणार्थ जो अपूर्व इमारत खड़ी की है, उसकी बराबरी संसारकी एक भी इमारत न कर सकेगी। आगरेके 'ताजमहल' का सिर्फ़ नामोच्चार करते ही ऐसा मालूम होने लगता है, मानो सारी कुशलताकी परमावधि करके संसारकी अखिल सुन्दरता यहाँ भर दी गई है। इसी बादशाह ने रत्नजटित मयूरसिंहासन बनवाकर अपने अपार वैभवसे समस्त राष्ट्रोंके नेत्रोंको चकाचौंधमें डाल दिया था।

इस बादशाहके पश्चात् औरंगजेब दिल्लीका अधिपति हुआ। यह

बड़ा धर्म-विक्षिप्त मनुष्य था; और इसे समस्त भारतवर्ष में मुसलमानी धर्मके प्रचार करनेकी महत्त्वाकांक्षा बहुतही सताती रहती थी। इसके धार्मिक अत्याचार और अत्यन्त लोभके कारण सारी प्रजा त्रस्त होगई। इसीके शासन-कालमें हिन्दू-धर्माभिमानी छत्रपति श्रीशिवाजी महाराज महाराष्ट्रमें उदय हुए; और उन्होंने एक स्वतंत्र राज्यकी स्थापना की। औरंगज़ेबका सारा जीवन मुख्यतः दक्षिणमें मराठों तथा बीजापुर और गोलकुण्डाके बादशाहोंसे लड़ने-झगड़नेमें ही व्यतीत हुआ, जिससे वह दिल्लीके वैभवको विशेष रूपमें नहीं बढ़ा सका। औरंगज़ेब बादशाहने छत्रपति शिवाजी महाराजको एकबार दिल्लीमें लाकर कैद किया, जहाँसे उन्होंने बड़ी युक्तिके साथ अपना छुटकारा कर लिया। इस इतिहास-प्रसिद्ध घटनासे मराठोंकी दिल्लीसे विशेष पहचान हो गई। सन् १७०७ ईस्वीमें औरंगजेब हताश होकर मर गया, और उसके पश्चात् मुगल बादशाहतका सूर्य अस्त होने लगा।

औरंगजेबके बाद जो बादशाह दिल्लीके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए, उनमें समस्त साम्राज्यको अपने अधीन रखनेका पराक्रम न था, अतएव दिल्लीपतिकी सत्ता विगलित होगई; और "जिसकी लाठी उसकी भैंस" की कहावतके अनुसार सरदार लोग सर्वसत्ताधारी बनकर, राज्यकार्य्य करने लगे। दिल्लीके दरबारमें परस्पर मत्सर, राज्यतृष्णा और अधिकारलालसाका साम्राज्य फैल जानेसे अन्य लोगोंको वहाँ प्रवेश करनेका अवसर मिल गया। मराठोंके मुख्य प्रधान बालाजी विश्वनाथ और उनके पुत्र बाजीराव पेशवाने दिल्ली पर चढ़ाइयाँ कीं, और वहाँके नामधारी बादशाहोंसे मराठोंके लिए

"चौथ" तथा "सरदेशमुखी" की सनदें प्राप्त कर लीं। सन् १७३९ ईस्वीमें दिल्लीकी सम्पत्ति पर जलनेवाला ईरानका बादशाह नादिरशाह दिल्ली पर चढ़ आया। उसने बड़े विजयानन्दसे मुगल राजधानीमें प्रवेश किया; और तीन सदियोंके पहले तैमूरलंगने जो लूटमार और मार-काट की थी, उसका स्मरण मानों फिरसे जागृत करने के लिए नादिरशाहने दिल्लीमें वही दृश्य आरम्भ कर दिया लगभग ५८ दिनों तक दिल्लीमें अमीर और गरीब दोनों बराबर लूटे जा रहे थे। अन्तमें जब दिल्लीके लोग बिलकुल निर्धन और त्रस्त होगये, तब नादिरशाहने लूट-मार बन्द की। एक मुसलमान इतिहासकारका अनुमान है कि, जिस समय नादिरशाह स्वदेशको लौटा, उस समय वह अपने साथ नौ करोड़ की सम्पत्ति लेगया था। दिल्ली की बादशाहतके बिलकुल कमजोर हो जानेके कारण, उस पर आक्रमण करके उसे हस्तगत करने, और पूर्व-कालके इन्द्रप्रस्थका जीर्णोद्धार करके उस पवित्र स्थान पर हिन्दू-राज्यकी पुनः स्थापना करनेके उद्देश्य से मराठोंने शीघ्र ही अपना ध्यान दिल्लीकी ओर आकृष्ट किया। परन्तु मराठोंसे हार खाकर अपनी बादशाहत गमाना दिल्लीके नामधारी बादशाह तथा उसके सूत्रधारी राजनीतिज्ञों को इष्ट नहीं था। अतएव उन्होंने अहमदशाह दुर्रानीकी सहायता लेकर पानीपतके रण-स्थलमें मराठोंसे भयंकर लड़ाई छेड़ दी। दुर्भाग्यवश इस लड़ाईमें मराठोंका पूर्ण पराभव होगया; और उनके समस्त रथी और महारथी नष्ट होगये। इन्द्रप्रस्थके राज्यके लिए कौरवों और पाण्डवोंका जिस तरह भारतीय युद्ध हुआ, उसी तरह दिल्लीके तख्तके लिए यह पानीपतका संग्राम है। इस युद्धमें

अपरिमित हानि होनेके कारण मराठोंका राष्ट्र कुछ कालके लिए उत्साहशून्य होगया। परन्तु किसी कविकी इस उक्तिके अनुसार, कि "काटा हुआ वृक्ष और भी जोरसे उठता है," वह राष्ट्र फिर उत्साहपूर्वक उन्नतावस्थाको प्राप्त हो गया; और महादजी सेंधिया इत्यादि महाराष्ट्र वीरोंने मुगल और रुहेलोंसे वदला लेकर, दिल्ली के वादशाह शाहआलमको अपने अधीन कर लिया; और सन् १७७१ ई० में इन्द्रप्रस्थपर हिन्दू साम्राज्यका झंडा फिर एक वार फहराकर, अपने हाथसे उस वादशाहको सिंहासन पर वैठाया। सन् १७८६ ईस्वी में गुलाम कादिर और महादजी सेंधियाका युद्ध हुआ, जिसमें महादजीने दिल्लीपतिको खूब छकाया; और उससे पेशवाओंके लिए एक वहुत वड़ा अधिकार और स्वयं अपने लिए आलीजाह वहादुरकी पदवी प्राप्त कर ली। इस समयसे दिल्लीमें मराठोंकी पूर्ण सत्ता जम गई; और दिल्लीकी रक्षाके लिए वहाँ मराठोंकी एक सेना रहने लगी। महादजी सेंधियाके दामाद लाडोजी शितोले देशमुख कुछ काल तक स्वयं दिल्लीके सूवेदार थे। ग्वालियरमें शितोलोंको 'राजराजेन्द्र रुस्तमे जंग-वहादुर' की पदवी अव तक चली आरही है, जो दिल्ली-विषयक मराठोंकी प्रभुता वतलाती है।

निस्सन्देह महादजी सेंधियाके जमानेमें दिल्लीके पदपर मराठोंका पूर्ण अधिकार होगया; परन्तु इसके वाद वहुत जल्द मराठोंकी सत्ता का ह्रास होने लगा; और आगे चलकर शीघ्र ही अंग्रेजोंकी प्रवलता वढ़ गई। उनकी सेनाने दिल्लीमें दौलतराव सेंधियाका पूर्ण पराभव कर दिया; और सन् १८०३ ईस्वीके मार्च महीनेकी चौदहवीं तारीख

को लार्ड लेकने दिल्लीपर अपना अधिकार जमाकर वहाँके बादशाहको अपने आश्रय में ले लिया। अगामी वर्ष (यानी सन् १८०४ ई० में) यशवन्तराव होल्करने दिल्लीपर चढ़ाई करके वहाँ के अँगरेज रेजीडेंट कर्नल (आगे चलकर सर डेविड) आक्टरलोनीसे टक्कर ली, और उससे दिल्ली छीन लेनेका प्रयत्न किया। परन्तु उस समय लार्ड लेककी सहायता तत्काल प्राप्त हो जानेके कारण वहाँसे अँग्रेजोंकी सत्ताका नाश नहीं हुआ। उस समयसे अँग्रेजोंने दिल्लीके बादशाहके नाम पर राज-कारबार चलाना आरम्भ कर दिया।

सन् १८०४ ईस्वीमें दिल्लीमें अँग्रेजोंकी राजसत्ताके आरम्भ हो जानेके बाद दिल्लीका बादशाह सिर्फ नामधारी बादशाह रह गया—वह अँगरेजोंके हाथका कठपुतला बन गया; और दिल्लीके किलेमें तथा वहाँके राज-प्रासादोंमें ही उसकी सत्ता चलने लगी। सन् १८०६ ईस्वीमें दूसरे शाहआलमका शरीरान्त हुआ; और उसके अनन्तर अकबरशाह दिल्लीके नामधारी सिंहासनका अधिष्ठाता हुआ। इसे अँग्रेजोंसे १५ लाख रुपये वार्षिक पेन्शन मिलती थी। इसके शासन-कालमें बिशप हिबर नामक एक यात्री दिल्ली आया था। उसने उस समय बादशाहसे भेंट की थी। उसने बादशाहके विषयमें इस प्रकार उल्लेख किया है:—

"अकबरशाहके चेहरेसे उसकी अवस्था लगभग ७४-७५ वर्षकी मालूम होती थी। परन्तु उसकी यथार्थ उम्र ६३ वर्षकी होगी। हिन्दुस्तानमें इतनी उम्र बहुत समझी जाती उसका स्वभाव बड़ा अच्छा था; और उसकी वृत्ति

बिलकुल शान्त रहती थी। उसकी बुद्धि साधारण थी; परन्तु उसमें शिष्टाचार और आदर-कुशलता विशेष थी।"

यह बादशाह सन् १८३७ ईस्वीमें परलोक सिधारा। उसके बाद उसका बेटा बहादुरशाह सिंहासनारूढ़ हुआ। उसे कवितासे बड़ा प्रेम था; और वह स्वयं कवि था। उसकी कितनी ही कविताएं अभी तक प्रसिद्ध हैं। इसके शासन-समयमें दक्षिणके सरदार रघुनाथराव विंचूरकर दिल्ली गये थे। उनके प्रवास-वृत्तान्तमें दिल्लीसे सम्बन्ध रखनेवाला यह उल्लेख है—

'दिल्ली बहुत बड़ा और विस्तीर्ण शहर है। सारे शहरके चारों ओर भारी कोट है; और यमुना नदीके किनारे बादशाही किला बना हुआ है। वहाँ बहादुरशाह नामका एक बादशाह रहता है। किलेके बाहरी दरवाजे पर यूरोपियन लोग रहते हैं; और उन्हींके हाथमें उस दरवाजे का सारा प्रबन्ध है। किलेमें बादशाही महल हैं। उन सब पर गुम्बज हैं; और उनपर सुवर्णके पत्र जड़े हुए हैं। किलेमें बहुत बढ़िया इमारतें हैं; और बादशाहके दरबार के लिए एक बृहत् स्थान है। वहाँ पर तख्त रखने के चबूतरे पर अब एक पत्थर का सिंहासन है। वहाँके लोग कहते हैं कि पहले इस चबूतरे पर रत्नजटित सिंहासन रहता था। यह स्थान संगमरमर पत्थरसे अत्यन्त ही सुशोभित निर्म्माण किया गया है। वहाँकी दीवारों पर सुनहली बेलबूटे बने हुए हैं। यहाँ पर पहले ठौर ठौर पर रत्न जड़े थे, जिनके चिन्ह अभी तक दिखाई देते हैं। क़िलेमें एक बड़ा बाग है, जिसमें बादशाहके रहनेके महल

तथा उसका जनानख़ाना है। इन इमारतोंको छोड़कर बाकी स्थान देखनेकी जिन्हें इच्छा हो, वे वहाँकी आज्ञा लेकर उनको देख सकते हैं। शहर के रास्ते अच्छे हैं; और उनके दोनों ओर उत्तम इमारतें बनी हुई हैं। वहाँ अनेकों जातिके व्यापारी रहते हैं; और उनका व्यापार भी खूब चलता है। शहरसे जमनाकी नहर बह रही है। उसपर कहीं कहीं घाट बँधे हैं; और इधरसे उधर जानेके लिए, थोड़े थोड़े अन्तर पर, पुल बने हैं। इस सारी शोभाका अवलोकन कर मनुष्य चकित हो जाता है। शहरमें अनेक प्रकारके तारकशी और नकाशीकी कई अच्छी अच्छी चीज़ें मिलती हैं। शहरमें जुम्मा-मसजिद नामका मुख्य स्थान है। इस स्थान-पर जानेके लिए हिन्दुओंको मनाही है। मसजिद के बाहर सायं-कालको उत्तम प्रकारके कपड़ोंका व्यापार होता है; और अनेक प्रकार के पक्षी बिकनेके लिए आते हैं। वहाँ चाँदनी चौक नामक एक स्थान है, जहाँ जवाहिरोंका सौदा होता है। शहरमें प्रायः मुसल-मान ही अधिक हैं। सिर्फ क़िलेमें ही बादशाह की हुकूमत इस समय चलती है; और बादशाहके द्वारा नियुक्त किये कर्म्मचारी वहाँके झगड़ोंका निबटेरा किया करते हैं।"

इस वर्णनसे जान पड़ता है कि, बहादुरशाहके जमाने तक दिल्ली शहरका व्यापार और वैभव पूर्णरूपसे नष्ट नहीं हो पाया था; किन्तु थोड़ाबहुत अवश्य मौजूद था।

कम्पनी-सरकारने दिल्लीपर अपना अधिकार जमाकर वहाँके बादशाहको अपने अधीन कर लिया था, तथापि बादशाहकी इज्जत और प्रतिष्ठामें उसने कुछ भी न्यूनता नहीं होने दी थी। सारे

हिन्दुस्थानका राज्य-प्रबन्ध दिल्लीके बादशाह बहादुरशाहके मातहत रहकर किया जाता था। इस बादशाहका बड़प्पन कैसा रखा गया था, इसका वर्णन एक ग्रन्थकारने बहुतही अच्छा किया है। वह कहता है:—

"Bahadur Shah is really a king; not merely by consent of the Honourable Company, but actually created such by their peculiar letters patent. Lord Lake found the grandfather of the present sovereign and Emperor, in rags, powerless, eyeless, and wanting the means of sustaining existence. The firmans of the Padshah made the General an Indian noble; the sword of the latter made the descendant of Tamerlane a Company's King, the least dignified, but the most secure of eastern dominations. In public and private, Bahadur Shah receives the signs of homage which are considered to belong to his pre-eminent station. The representative of the Governor-General, when admitted to the honour of an audience addresses him with folded hands in the attitude of supplication. He never receives letters, only petitions and confers an exalted favour on the Government of the British India by accepting a monthly present of 80,000 Rupees. In return he tacitly sanctions all our acts; withdraws his royal approbation from each and all our native enemies, and fires salutes upon every occasion of a victory achie-

ved by our troops. Though he may not have been served with all the zeal inspired by that line of Sadi,—'should the prince of noonday say, it is night, declare that you behold the moon and stars;'—he was suffered, however to believe that he was, the lord of the world, master of the universe, and of the Honourable East India Company, King of India and of the infidels, the superior of the Govenor-General, and proprietor from sea to sea."—*Travels of a Hindoo*—Page 343.

इसका आशय यह है कि, "बहादुरशाह यथार्थमें राजा है। वह कम्पनीकी आज्ञानुसार राज्य नहीं करता; किन्तु कम्पनीकी सनदोंके कारण वह उसके अधीनसा प्रतीत होता है। लार्ड लेकने वर्तमान राजाके पितामह को अशक्त, निर्धन, नेत्र-हीन और निराश्रित पाया था। बादशाहके फरमानके कारण ही जनरल लेक हिन्दुस्थानी उमरावोंमें शामिल किया गया। इधर जनरल लेककी तलवारने तैमूरलंगके वंशज बहादुरशाहको कम्पनीका राजा बनाया। भारतका राज्य प्रतिभा-शून्य, परन्तु सुदृढ़ और सुरक्षित है। सर्वत्र हाट और खासमें बहादुरशाह इज्जतका पात्र है। गवर्नर जनरलका प्रतिनिधि उसके सामने हाथ जोड़कर नम्रतापूर्व्वक खड़ा होता है। उसकी सेवामें जो कागजात पेश किये जाते हैं वे दरख्वास्तके बतौर ही दिये जाते हैं। अँग्रेजी राज्यमें उसको एक महीने में अस्सी हजार रुपयेका नजराना मिलता है। उसके एवजमें बादशाहकी सदा कृपा-दृष्टि रहती है। कम्पनीके जितने कानून उसके

सामने आते हैं उन्हें वह पास कर देता है। वह सदा कम्पनीका पक्ष लेता है। बादशाह सदा हमारे देशी शत्रुओंसे भी नाराज रहता है। हमारी सेनाकी विजय पर वह आनन्द मनाता है। यद्यपि सादी की यह उक्ति कि—अगर राजकुमार दिनको रात कहे तो तुम्हारा कर्तव्य है कि, तुम भी कह दो, हाँ, हुजूर रात जरूर है; यही नहीं किन्तु चन्द्रमा और तारागण भी दृष्टिगोचर हो रहे हैं—बहादुरशाहके लिए अक्षरशः चरितार्थ नहीं होती, तो भी अंशतः वह उसपर अवश्य घटाई जा सकती है। उसको यह विश्वास दिलाया गया है कि, वह सार्वभौम पृथ्वीपति है; और ईस्ट इंडिया कंपनीका स्वामी तथा समुद्रके एक सिरेसे दूसरे सिरे तकका अधिपति है।"

तात्पर्य यह कि, ईस्ट इण्डिया कम्पनीने पहलेसे ही दिल्लीके बादशाहसे जो बर्त्ताव रखा था, उससे उसके अन्तःकरणमें कोरी बड़ाईका यह व्यर्थ विचार समा गया था कि, मैं सार्वभौम चक्रवर्ती राजा हूँ, और ईस्ट इण्डिया कम्पनी मेरी नौकर है। अतएव उसे यदि यह इच्छा हुई कि, सार्वभौमत्व स्थिर रहे; और मेरी इज्जत इसी तरह सतत बनी रहे, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। दिल्लीके प्रजाजनोंकी दृष्टिमें—यही नहीं, किन्तु हिन्दुस्थानके समस्त लोगोंकी दृष्टिमें—दिल्लीपति सर्वश्रेष्ठ, दूसरा परमेश्वर, माना जाता था। इसलिए अवश्यही उनके अन्तःकरणमें उसके प्रति पूज्यभाव और अभिमान होगा। परन्तु आगे चलकर जैसे जैसे कम्पनी सरकारकी प्रबलता अधिक होती गई; और वास्तविक सार्वभौमिकता उसके हाथमें आती गई, वैसे वैसे इस नामधारी कठपुतलेको चक्रवर्त्ती राजा मानकर उसके पादपद्मोंमें लीन होनेका विचार कम्पनी सरकार

के अधिकारियोंको अप्रयोजक मालूम होने लगा। दिल्लीका पहला रेजीडेन्ट सर चार्ल्स मेटकाफ़ बड़ा राजनीति-कुशल था। वह बादशाहके आदर-सत्कारमें कुछ भी कमी न पड़ने देता था। परन्तु लार्ड एमहर्स्ट इत्यादि अभिमानी पुरुष बादशाहको इतना सम्मान देना पसन्द नहीं करते थे। उन्होंने अपनेको बादशाहकी बराबरी का समझकर दरबार में जूते निकालकर जाना, तथा बादशाहके चरणोंके निकट बठना, आदि बातोंको स्वीकार नहीं किया। प्रत्युत, उन्होंने बादशाहके निकट दरबारी मंच पर बैठनेका अपना स्वत्व प्रस्थापित किया। आगे चलकर लार्ड बेंटिकने नजरानोंके विषयमें काटकसर की। इसके बाद लार्ड एलिनबरोने इसके भी आगे एक कदम और बढ़ाया। उन्होंने स्वयं एक छत्रपति राजाके समान बादशाहसे भेट की; और बादशाहको वार्षिक नजराना देनेकी जो प्रथा थी, उसे बन्द कर दिया। इस कारण बादशाहको विषमता मालूम हुई; और उसका मन उदास हो गया। लार्ड एलिनबरो के बाद लार्ड डलहौसी हिन्दुस्थानके गवर्नर-जनरल हुए। उन्होंने बादशाहके व्यर्थ आडम्बरको सदाके लिए तोड़ देनेका प्रयत्न किया। बादशाहका औरस पुत्र शाहजादा सन् १८२९ ईसवीमें मर गया। उस समय लार्ड साहबने मृत शाहजादेके पुत्रसे सिंहासन-त्यागका पत्र पहले ही से लिखा लिया, जिससे बहादुरशाह बादशाहके बाद दिल्ली के तख्त पर उसे बैठाने का मौकाही न आवे। इन समस्त अपमानोंके कारण बादशाहको विशेष कष्ट हुआ और इस दुःखदायक विचारसे उसका अन्तःकरण क्षुब्ध हो गया कि, उसके बाद मुगल शाहत बिलकुल रसातल को चली जायगी। उसी दशामें सन्

१८५७ का साल आया, जिसने बहादुरशाह जैसे हताश और सन्तप्त राजवंशीय लोगोंको बलवा मचानेका अवसर प्राप्त करा दिया। उसका भयङ्कर परिणाम दिल्लीके इतिहासमें लिखा है।

सन् १८५७ ईसवीमें दिल्लीमें जो भयंकर बलवा मचा, उसमें बहादुरशाह शामिल हो गया। इस बलवेसे उसे लाभ तो कुछ न हुआ; परन्तु उसके पुत्र मेजर हडसनकी बन्दूकों द्वारा मारे गये; और स्वयं वह भी अंग्रेजों द्वारा पकड़ लिया गया। अंग्रेजोंने फौजी अदालतके सामने उसकी तहकीकात की; और उसे सदाके लिए काले पानीको भेज दिया। फल यह हुआ कि, दिल्लीमें रहते हुए उसे जो कुछ थोड़ा-बहुत वैभव प्राप्त था, वह भी अब बिलकुल जाता रहा; और रंगूनमें सन् १८६२ ईसवीके अक्टूबर महीनेकी सातवीं तारीख को, अत्यन्त विपदावस्थामें, दिल्लीका यह अन्तिम बादशाह काल-कवलित हुआ! इस प्रकार मुगल बादशाहत का समूल नाश हो गया; और वह कालके विश्व-भक्षक जबड़ेमें समा गई! दिल्लीके सार्वभौमिक पदका भोग करनेवाले अनेकों अच्छे और बुरे राजाओं के केवल नाम तथा उनके सुकर्म और कुकर्म मात्र दिल्लीके इतिहासमें दर्ज हैं; और दिल्ली नगरी आजकल उन राजाओंके भव्य महलों, उनके विशाल मीनारों, उनके अत्युच्च जयस्तम्भों और उनकी भारी मसजिदोंका प्रदर्शन करती हुई दर्शकोंके अन्तःकरणमें आश्चर्य और खेद उत्पन्न करा रही है। मार्क्स आन्टोनियसने क्या ही ठीक कहा है:—

"O ! Mighty Sovereigns ! do ye lie so low ?
Are all they conquests, glories, triumphs, spoils
Shrunk to this little measure ? Fiar thee well !"

अर्थात् हे श्रेष्ठ राजाओ! आज तुम किस गिरी हुई दशामें वर्तमान हो! क्या तुम्हारे विजय, प्रभुत्व, शान-शौकत और लूटमार का यही अन्त है? तुम्हें अन्तिम नमस्कार है!

राजर्षि भर्तृहरिने भी ऐसी ही उक्ति की है। वे कहते हैं:—

सा रम्या नगरी महान् स नृपतिः सामन्तचक्रं च तत्।
पार्श्वं तस्य च सा विदग्धपरिषत्ताश्चन्द्रबिम्बाननाः॥
उन्मत्तः स च राजपुत्रनिवहस्ते बन्दिनस्ताः कथाः।
सर्वं यस्य वशादगात् स्मृतिपथं कालाय तस्मै नमः॥

अर्थात् वह रमणीय नगरी, वह बड़ा राजा, राजाका वह मंडल, उसके पार्श्व भागमें रहनेवाली वह विद्वानों की सभा, वे चन्द्रमुखी सुन्दर स्त्रियाँ, वह बलशाली राजपुत्रोंका समुदाय, तथा वे स्तुति करनेवाले भाट और वे अनेक प्रकारकी अच्छी बातें आदि सब जिसकी सामर्थ्यसे लुप्त होकर स्मृतिशेष मात्र रह गयी हैं, उस काल को नमस्कार है!



दूसरा प्रकरण

दिल्लीका किला और मुख्य राजप्रासाद

दीवान-ए-आम और दीवान-ए-खास

जो लोग दिल्ली देखने जाते हैं, उन्हें वहाँके मुख्य मुख्य स्थानोंको देखनेके लिए कमसे कम तीन दिन तो अवश्य ही लग जाते हैं। इन तीन दिनोंमें एक दिन दिल्लीका प्रसिद्ध किला तथा उसके मुख्य राजमहल और उसके निकटवर्ती अन्य इतिहास-प्रसिद्ध स्थानोंको देखने एवं फीरोजाबाद और इन्द्रप्रस्थके दर्शन करनेमें व्यतीत होता है। कोई भी नया मनुष्य जो दिल्ली जाता है, वहाँके राजमहल ही पहले उसके चित्तको मोहित कर लेते हैं। उनकी सुन्दरता, उनकी भव्यता, उनका तेज, उनकी नक्काशी और उनकी रचना कुछ ऐसी मनोरम है कि, उनकी ओर देखकर, शायद ही कोई मनुष्य हो, जिसका अन्तःकरण आनन्द और आश्चर्यसे न फूल उठे। इन राजमहलोंका वर्णन करनेके पहले उनका थोड़ासा इतिहास दे देना आवश्यक है।

दिल्लीका किला तथा उसके राजमहल शाहजहाँ बादशाहने बनवाये हैं। एक ऐतिहासिक ग्रन्थसे मालूम होता है कि, उनके बननेमें बीस साल लगे; और उस समयके हिसाबसे पन्द्रह लाख रुपये खर्च हुए। इस किलेका घेरा एक मील है; और उसमें पहले

दस-बारह राजमहल थे। परन्तु इस समय उनमेंसे सिर्फ मुख्य मुख्य महल ही कायम हैं, और शेष नष्ट हो गये हैं। इस किलेमें शहरकी ओरसे दो द्वार हैं। उनमेंसे एक द्वार पर जयमल और फतहसिंह नामक विजयी राजपूत वीरोंकी, दो मूर्तियाँ थीं, जो हाथीपर सवार थीं। ये मूर्तियाँ भारतके शिल्पकारोंने बनाई थीं। इनके विषयमें यह आख्यायिका प्रसिद्ध है कि,ये दोनों वीर चित्तोड़में अकबरसे बड़ी शूरताके साथ लड़े; और अपनी मातृभूमि के लिए धारातीर्थमें पतन हुए। इस लिए अकबरने उनके स्मरणार्थ इन मूर्तियोंको बनवाया; और उन्हें अपने राज-द्वार पर खड़ा किया। कोई कहते हैं कि, जहाँगीर बादशाहने ये मूर्तियाँ बनवाई थीं। खैर, किसी भी बादशाहने उन्हें क्यों न बनवाया हो; परन्तु बर्नियर नामक यात्रीने प्रत्यक्ष देखा था कि, वे शाहजहाँ के राज-द्वार पर खड़ी थीं। उसने अपनी भारतीय यात्राके वर्णनमें उन मूर्तियोंकी सुन्दरताकी बड़ी प्रशंसा की है; और कहा है कि, हिन्दुस्थानमें मनुष्योंकी पहली मूर्तियाँ यही हैं। उसने अपनी यात्रामें लिखा है कि, "जयमल और फत्ताकी मूर्तियाँ कलाकौशलकी दृष्टिसे बड़ी मूल्यवान् हैं। वे लाल रेतीले पत्थरकी बनी थीं; और उनका आकार मनुष्यके आकारके बराबर था। जिन बड़े बड़े हाथियोंपर ये मूर्तियाँ रखी थीं, वे काले संगमरमरके बने थे। और हौदे सफेद और पीले संगमरमरोंसे अलंकृत किये गए थे*।" अस्तु!

---

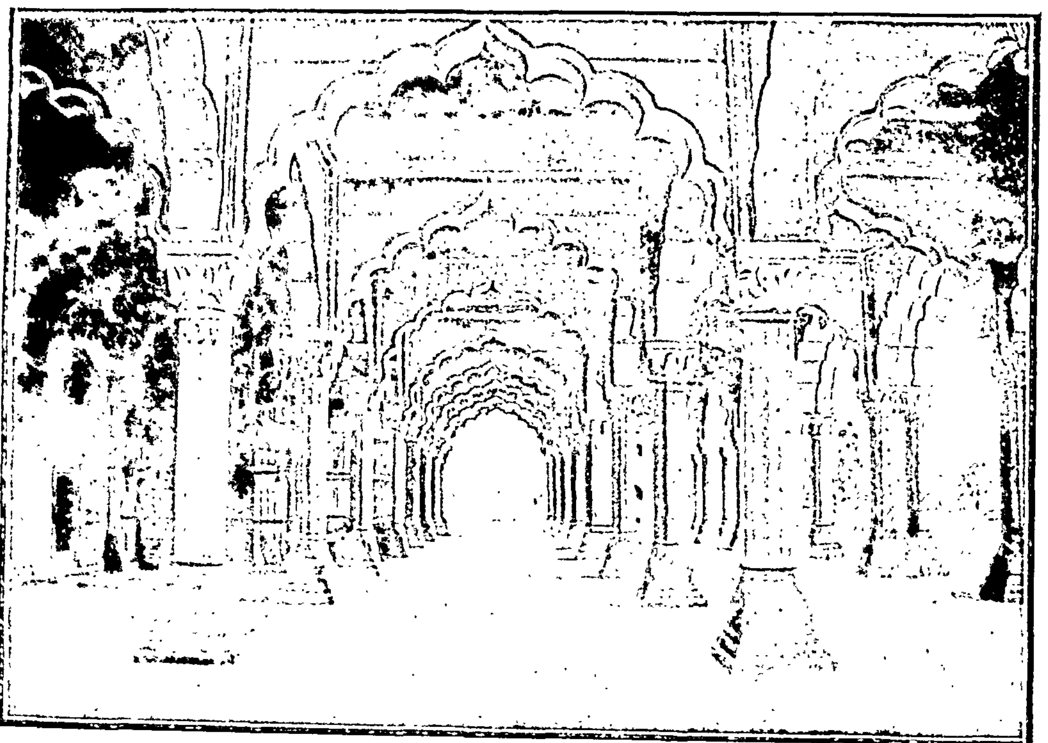
*"The statues of Jaymal and Patta are simply valuable as works of art, as they are, perhaps the [illegible] portrait statues that have been erected in

किलेका दूसरा दरवाजा 'लाहोरदरवाजा' के नामसे प्रसिद्ध है; और वहाँकी खाईका काम अत्यन्त ही दर्शनीय है। स्वयं दरवाजा ही बड़ा मजबूत तथा अभेद्य है, और उसके ऊपरसे अत्यन्त ही रमणीय दृश्य दिखाई देता है। उसके पश्चिममें जुम्मा मसजिद और पूर्वमें शहर तथा मन्दिर देख पड़ते हैं। इस लाहोर-दरवाजेसे चाँदनी चौक तक बिलकुल सीधा रास्ता जाता है। इस दरवाजेसे किलेमें प्रवेश करते ही प्रथम नक्कारखाने अथवा नौबतखाने की इमारत दृष्टिगोचर होती है। इसके बाद 'दीवान-ए-आम' और 'दीवान-ए-खास' नामके दो मुख्य राजमहल देख पड़ते हैं। ये ही दिल्लीपतियोंके लोकोत्तर प्रासाद हैं।

दिल्लीमें जो अनेक प्रेक्षणीय स्थल हैं, उनमें 'दीवान-ए-आम' और 'दीवान-ए-खास' नामके ये दो बादशाही दरबार मुख्य हैं। ये प्रासाद दिल्लीके किलेके भीतर हैं। शाहजहाँ बादशाहने यह किला बनवाया था। यह अत्यन्त भव्य और प्रचंड है। यह आगरेके किलेकी नाईं सुन्दर है; और सारा किला लाल पत्थरका बना है। यह किला जमना नदीके तीर पर स्थित है; और इसका घेरा डेढ़ मील है। इसके आसपास एक बृहत् कोट है, जो लगभग चालीस फीट ऊँचा है। इस किलेके मुख्यद्वारको 'लाहोरगेट'

India for many centuries. They are made of red sand-stone, and are of life-size, while the huge elephants on which they sit are of black marble, and the hinsings are decorated with white and yellow marbles."—*Bernier's Travels.*

कहते थे, परन्तु अब वह उसका नाम नष्ट होकर 'विक्टोरियागेट' हो गया है। उस द्वारके शिरोभाग पर नील-रक्त-शुभ्र—वर्णत्रय-मिश्रित—एक छोटीसी ध्वजा फहराती रहती है। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि यह ध्वजा हमारी उस दयालु सरकारकी है, जिसकी वान है कि हम सब वर्णोंकी प्रजाके साथ समान बर्ताव करते हैं। इस प्रवेश-द्वारके भीतर जाते ही पहले अनेक बड़ी बड़ी मेहरावें मिलती हैं; और वहाँसे किलेका सारा वैभवशून्य दृश्य दिखाई पड़ने लगता है। सन १८५७ के सिपाहीविद्रोहके समय यहाँकी अनेकों सुन्दर इमारतोंके ध्वंस हो जानेके कारण सारा किला उजाड़ हो गया है। तथापि उसकी दीनावस्थाको छिपाकर उसे हराभरा दिखलानेके लिए ही मानो वहाँकी जमीन साफ करके, रास्ते आदि व्यवस्थित करके, थोड़ेसे वृक्ष लगा दिये हैं; और कई एक स्थानोंपर छोटे छोटे बगीचे लगा दिये हैं। राजमहल का सिर्फ दर्शनीय भाग ही सुरक्षित रक्खा है; और शेष कई महलोंका नाश कर दिया गया है। सिर्फ वे ही राजमहल कायम रखे गये हैं जिन्हें स्वाभाविक रीतिसे फौजी अधिकारी काममें ला सकें। उनका मिश्र स्वरूप अवलोकन करके दर्शकोंको खेद उत्पन्न हुए बिना नहीं रह सकता। जिन राजमहलोंमें संगमरमरके पत्थरों का शुभ्र तेज चमकता था, वहाँ सरकारके पब्लिक वर्क्स विभागने अँग्रेजी तरहकी जो मरम्मत की है, वह अत्यन्त ही विसंगत मालूम होती है। जिन राजमहलोंके प्रवेश-द्वारोंमें अनेकों द्वारपाल सशस्त्र डँटे रहते थे, उनके सामने आज वृक्षोंके गमलोंके सिवा और कुछ नहीं देख पड़ता। — । इस प्रकार समस्त किलेका तेजहीन दृश्य देखकर काल-



दीवाने-आम ।

चक्रकी कुटिल गतिका वारम्वार स्मरण होने लगता है कि, इतने में हमारे सामने नेत्राकर्षक, लाल रंगकी, खुली हुई, परन्तु अत्यन्त भव्य, इमारत उपस्थित होती है। यही है इतिहास-प्रसिद्ध 'दीवाने आम' नामका दिल्लीपतिका मुख्य दरवार !

यह सुप्रसिद्ध दीवानखाना, सुनहले रंगके वेल-वूटोंसे सुशोभित किया हुआ, पहले अपार वैभवका वासस्थान था। इस दीवान-ए-आमकी सारी छत चाँदीकी वनी थी; और उसपर कलाकौशल का वहुत वढ़िया काम किया हुआ था। यहाँके प्रत्येक स्तम्भपर आसमानी रंगका चमकदार मुलम्मा चढ़ा हुआ था; और उसमें ठौर ठौरपर सुन्दर पुष्प वने हुए थे। इस इमारतकी कुल नक्काशी वहुतही अप्रतिम थी—केवल यही नहीं; किन्तु उसमें कई एक इतिहासप्रसिद्ध घटनाओंके चित्र, अत्यन्त मार्मिक रीतिसे, चित्रित किये हुए थे। जिस समय शाहजहाँ वादशाहने आगरेका ताजमहल वनवाया, उस समय उसने शीराजके प्रसिद्ध कारीगर अमानतखाँ को उसपर अपना नाम लिखने की आज्ञा दी थी। इसलिए उसने ताजमहलमें एक जगह पर "शीराजका नम्र फकीर अमानतखां" ये शब्द चित्रित करके हिजरी सन् १०४८ लिख दिया है। इसी प्रकार, शाहजहाँ वादशाह ने एक यूरोपवासी चित्रकला-विशारद को भी यह आज्ञा दे दी थी कि, इस महत्वकी चित्र-मालामें वह अपनी स्पेन की पोशाकमें एक तसवीर खींच ले। इस मनुष्यका नाम 'आस्टिन डी वोर्डो' था। इस कुशल कलमवहादुरने हिन्दुस्तानके सव प्रकारके सुन्दर पक्षियोंकी प्रतिकृतियाँ इस दीवान-खानेमें चित्रित की थीं। इसके अतिरिक्त, उसमें एक जगह पर एक

अत्यन्त तेजस्वी तलवारका चित्र भी खींचा था। इस चित्रका इतिहास यह था कि, एक बार चित्तौड़का एक राजपुत्र दरबारमें बैठा था कि बादशाहके किसी प्यारे मुसलमानने उसका थोड़ासा अपमान कर दिया। उसी समय उस तेजःपूर्ण राजपूत छोनेने अपना खड्ग निकालकर भरे दरबारमें बादशाहके सामने उसका बदला लिया; और जब बादशाहने उससे इसका उत्तर पूँछा, तब उसने 'लेडी आफ दी लेक' काव्यके 'रॉडरिक डू' की नाईं यह तेजस्वितापूर्ण उत्तर दिया कि:—

"I right my wrongs where they are given
Though it were in the court of Heaven."

अर्थात् मैं अपनी भूलोंको भी सत्य सिद्ध कर सकता हूँ—चाहे न्यायालय स्वर्गका क्यों न हो!

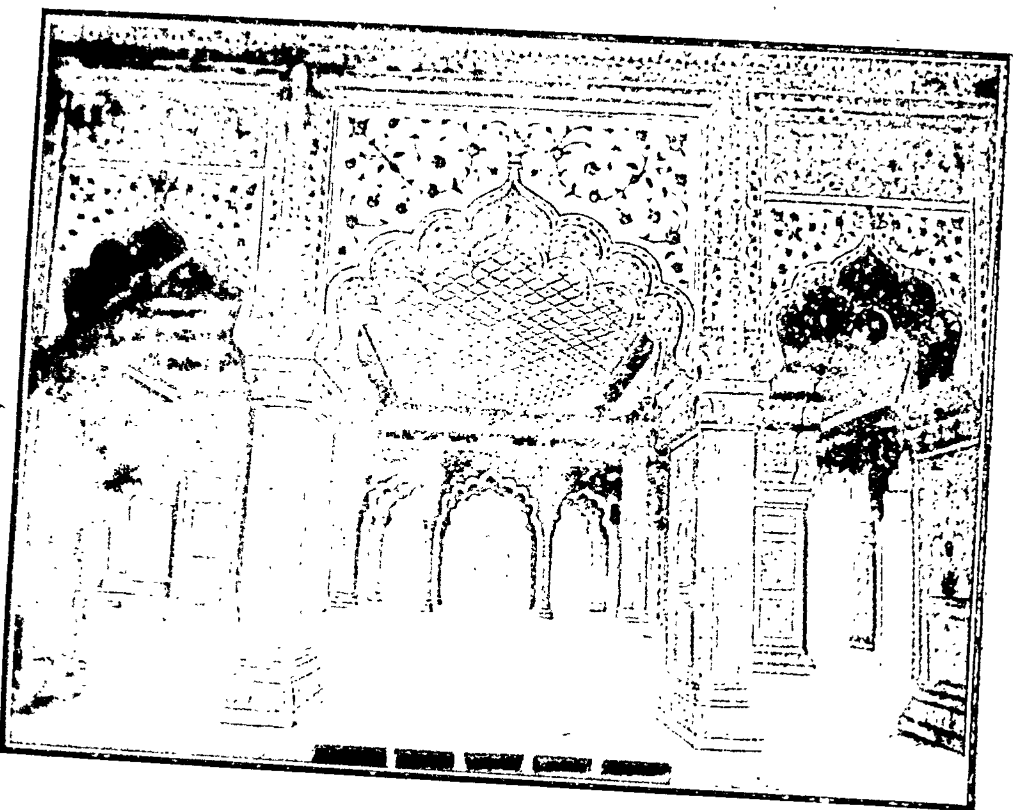
इस उत्तरको सुनकर दरबारके सारे लोग आश्चर्यमें आगये। अस्तु। इस महलकी सौन्दर्य-मर्यादा यहीं पर समाप्त नहीं होगई। इस महलके मध्यमें दस फुट ऊँचा, संगमरमर पत्थरका, एक चबूतरा है, जिसपर एक बहुतही सुन्दर शिखराकार शिरोभाग बना है। यह स्फटिकके सदृश शुभ्र है; और उसमें शिल्पकारके कलाकौशलकी परमावधि ही होगई है। इस सुन्दर स्थलके मध्यमें दिल्लीपतिका तख्त—जगत्प्रसिद्ध मयूरसिंहासन—रखा जाता था। मुसलमानी इतिहासमें इस सिंहासनको 'तख्ते ताऊस' कहा है।

इस तख्तका वर्णन जितना किया जाय, उतना थोड़ा है। दिल्लीके अनेक बादशाहोंने अनेक सिंहासन निर्माण कराये होंगे; परन्तु ऐसा अद्वितीय सिंहासन किसीने भी नहीं बनवाया। यह सिंहासन

दीर्घवृत्ताकार था; और उसकी लम्बाई छै फुट तथा चौड़ाई ४ फुट की थी। इसका सारा ऊपरी भाग हीरा, माणिक, नीलम, पन्ना, पुखराज, इत्यादि अमूल्य रत्नोंका बना हुआ था; और नीचेका भाग सुवर्ण का बना था, जिसके दर्शनीय भाग पर हीरे जड़े थे। उसमें जो माणिक जड़े थे, सिर्फ उन्हींकी संख्या १०८ थी। इसके सिवा जगह जगह पर नीलमणि और पुखराजका भी उपयोग किया गया था। उस सिंहासन पर एक सुवर्णवृत्त बनाकर उस पर एक मोर बैठाया गया था; और ऐसी योजना की गई थी कि, जिससे उसके रत्नजटित डैने अनायास ही सिंहासनासीन बादशाहके ऊपर उड़ते रहें। मोरके डैनोंकी कारीगरी अत्यन्त अप्रतिम थी। उनपर विविध रंगोंको यथोचित रूपसे दर्शानेके लिए नाना प्रकारके रत्न जड़े थे। बादशाहके शिरोभागका छत्र भी हीरे-मोतियों का था; और उसमें बकुलपुष्पके समान, अत्यन्त तेजस्वी, मोतियोंकी झालर लगी थी। इस मयूरासनके समस्त हीरे गोलकुंडाकी खानके थे; और वे तारकापुंजकी नाईं चमकते थे। इस मयूरासन पर पीछेके द्वारसे आकर बादशाहकी सवारी बड़ी सज-धज के साथ विराजमान होती थी। इस अद्वितीय मयूर-सिंहासनके कारण दरबारको अप्रतिम शोभा प्राप्त हुई थी। टावर्नियर नामके एक फरासीसी यात्री ने इस सिंहासनका मूल्य लगभग डेढ़ करोड़ रुपयेका अनुमान किया है! अस्तु। दिल्लीपति पर कुटिल कालकी वक्रदृष्टि हुई; और सन् १७३९ ईसवीमें ईरानके प्रबल बादशाह नादिरशाहने इस मयूरासनको हस्तगत किया। तथापि हय दीवान-ए-आम दरबार, उसके बाद भी, बहुत दिनों तक मौजूद

था। परन्तु सन् १७६० ईसवीमें पुण्यपत्तनस्थ (पूनेके) पेशवा सदाशिवराव भाऊने, पानीपतके युद्धके समय, जोशमें आकर इस पर आक्रमण किया; और सूरजमल जाटके सदुपदेशपर तनिक भी ध्यान न देकर,—पहले मुगलोंने जो रायगढ़के नूतन संस्थापित हिन्दू साम्राज्यके सिंहासनका भंग किया था, उसका बदला चुकानेके उद्देशसे—इस भव्य महलकी सारी चाँदीकी सुन्दर छत तोड़ डाली; और उसके सिक्के बनाकर सैनिकोंको बाँट दिये। एक स्थानपर लिखा है कि, इस छतकी कीमत सत्रह लाख रुपये आई थी। इस वैभवालंकृत महलके वर्तमान दीन स्वरूपका अवलोकन करतेही किसकी आँखोंसे दुःखाश्रु न टपक पड़ेंगे? आजकल वहाँ वह सुवर्णजटित नक्काशी नहीं रही है; और न वहाँ वह मयूरासन ही कहीं देख पड़ता है, जिसे देखकर बड़े बड़े पृथ्वीपति भी दिल्लीपतिके वैभवकी ईर्षानलमें जल मरते थे! जिस संगमरमरके चबूतरे पर यह रत्नासन रखा जाता था, वह निस्सन्देह अभी तक स्थित है; और अपनी विपदावस्था जतला रहा है! इस पूज्य स्थलके चारों ओर लोहेकी छड़ें लगा दी गई हैं कि जिससे नाना प्रकारके सभी दर्शकोंका उसमें हस्त स्पर्श न हो सके।

अस्तु। इस दुर्दैव-ग्रस्त 'दीवान-ए-आम' का दर्शन करके दर्शकों के अन्तःकरणमें वैभव की क्षणभंगुरताके विषयमें अनन्त कल्पनातरंगें उठने लगती हैं; और उनका मन किंचित् अस्वस्थ हो जाता है, कि इतनेहीमें उन्हें 'दीवान-ए-खास' नामकी एक दूसरी मनोरम इमारत देख पड़ने लगती है। इस इमारतकी स्फटिकतुल्य शुभ्र प्रभा दर्शकोंके नेत्रोंको ऐसा आकृष्ट कर लेती है कि, उन्हें अपनी



दीवाने-ख़ास ।

पूर्व-अवस्थाका सहसा विस्मरण हो जाता है। यथार्थमें, इससे यह सहजहीमें मालूम हो जाता है कि, संसार-चक्रमें फँसे हुए मानव प्राणीको मायापाश किस प्रकार वारम्बार वद्ध करता रहता है। अस्तु। इस विख्यात 'दीवान-ए-खास' नामक भवनमें जानेके लिए दर्शकोंको प्रथम एक सुन्दर पुष्पवाटिकामें प्रवेश करना पड़ता है। वहाँ जाकर सामने खड़े होनेपर यह भास होता है कि, हमारे सामने कोई अत्यन्त धवल, तेजःपुंज और अपूर्व वस्तु खड़ी है। इस खास महलका सारा काम अत्यन्त शुद्ध और स्वच्छ एवं अति उत्तम संगमरमरके पत्थरका बना है। उसमें भाँति भाँतिके अनेकों रत्न जड़े हैं, और ठौर ठौर पर सुवर्णकी अद्वितीय नक्काशी होनेके कारण, महलको अप्रतिम शोभा प्राप्त होगई है। इस महलके एक ओर जमना नदीका दृश्य दिखाई देता है। एक ओर बागकी शोभा देख पड़ती है। एक ओर इसका प्रवेश-द्वार चमकता है कि, जिस-पर सुवर्णांकित न्यायतुलाका चित्र खींचा हुआ है। सायंकालके समय इस महलपर जब कभी कोमल, परन्तु आरक्त, सूर्यकिरणोंकी प्रकाश-लहरें परावर्तन पाकर चमकने लगती हैं, उस समय यहाँ जो तेजोमय दृश्य दृग्गोचर होता है, वह सिर्फ देखते ही बनता है! सचमुच सोचने की बात है कि, जिस समय यहाँ सच्चे रत्न विराजते होंगे, उस समय यहाँ कैसी अप्रतिम शोभा देख पड़ती होगी। वास्तवमें उसका वर्णन करना अत्यन्त कठिन है।

इस महलके पूर्वाभिमुख द्वारके शिरोभाग पर फ़ारसी ज़बानमें यह पद्य लिखा है:—

"अगर फिर्दौस बर-रूये जमीनस्त-
हमीनस्तो हमीनस्तो हमीनस्त।"

"If on the earth be an Eden of bliss,
It is this, it is this, none but this!"

अर्थात् यदि पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है, तो वह यहीं है, यहीं है, यहीं है। यहाँ पर हमें स्वर्गीय पं० श्रीधर पाठककी इस कविताका स्मरण होता है:—

"यही स्वर्ग सुरलोक यही सुर-कानन सुन्दर।
यहिँ अमरनको ओक यहीं कहुँ बसत पुरन्दर।"

—काश्मीर-सुखमा।

इस सौंदर्य-मन्दिरमें अनेकों अत्यन्त महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुई हैं। इससे जान पड़ता है कि, मानों राजकीय परिवर्तनों का अवलोकन करनेके लिए ही यह महल निर्माण किया गया है। इसी महलमें शाहजहाँ बादशाहने बड़ी सजधजके साथ सिंहासनारूढ़ हो कर दिल्ली का शासन किया था। इसी महलमें ईस्ट इंडिया कंपनी के हेमिल्टन साहबको, बादशाहका स्वास्थ्य ठीक कर देनेके उपलक्ष्यमें सैंतीस ग्राम पारितोपिकमें दिये गये; और कम्पनीके मालपर कर माफ करनेकी आज्ञा दी गई थी। इसी महलमें बैठकर औरंगजेब बादशाहने अपने दोनों भाइयों, दारा और मुरादका शिरच्छेद किया था। इसी महलमें नादिरशाहने दिल्लीपति महमूदशाह तुग़लकको अपने वश किया था। इसी महलमें गुलाम कादिरने शाहआलम बादशाहकी आँखें निकलवाकर उसके बेटेका खून किया था। इसी महलमें महादजी सेंधियाने गुलाम कादिरको कैद करके नेत्रहीन बाद-

शाहके सामने पेश किया था; और अपनी बहादुरीके उपलक्षमें दिल्लीपतिसे कई सनदें प्राप्त की थीं! यही नहीं, किन्तु गोरक्षाका सनद भी इसी दीवान-ए-खास महलमें प्राप्त हुई थी। बंगाल, बिहार और उड़ीसाके प्रान्तोंकी सनद, यानी सुप्रसिद्ध 'दीवानी' नामका फरमान, इसी महलमें ईस्ट इंडिया कम्पनीको दिया गया था! सच-मुचही इस महलमें न जाने कितनी महत्वपूर्ण और राज्यक्रांतिकी घटनाएँ घटित हुईं! सन् १७७३ ईसवीसे लेकर सन् १८०३ ईसवी तक दिल्लीका बादशाह मराठोंके बिलकुल हाथमें था। यही नहीं,किन्तु उस प्रान्त पर सच्चा अमल भी उन्हींका था। ईस्ट इंडिया कम्पनी को यह बात सहन नहीं हुई। उसने बादशाहको स्वतन्त्र करनेका प्रयत्न किया। उस समय लार्ड लेक साहबको "सुमसन-उद्दौला अश-गार-उलमुल्क खान-दौरान-खान जनरल लेक बहादुर फतेहसिंह" नामका जो खिताब प्राप्त हुआ था, वह भी इसी दीवान-ए-खास महल में प्रदान किया गया था। अहा! कैसे खेदकी बात है कि, जिस जगह अनेक बादशाहोंका राज्याभिषेक हो, उसी जगह उनका पद-च्युत होना भी बदा हो! जिस राज-महलमें दिल्ली-पतियोंके वैभवको अत्युच्च स्थान प्राप्त हुआ, क्या वहीं उनके राज-वैभवका अन्त भी हो! प्यारे पाठको, तनिक सोचिए तो सही, कैसी परितापजनक कहानी है! कैसा हृदयविदारक दृश्य है! अंगरेजी सरकारकी स्वाभाविक दयालुता से मिली हुई पेंशनपर गुजारा न होने के कारण मृत्युकी मार्गप्रतीक्षा करनेवाले बेचारे वृद्ध बहादुरशाह–दिल्लीके अन्तिम बादशाह–पर जो सन् ५७ के बलवेमें शामिल होनेका अभियोग लगाया गया; और उसकी जाँचके लिए कर्नल डावेस, मेजर पामर, मेजर रेडमंड, मेजर

सायर्स और कैप्टन रोडनेका जो कमीशन बैठाया गया, सो भी इसी "दीवान-ए-खास" महलमें! जिस सार्वभौम नृपतिको दूसरे लोगोंका न्याय करना चाहिए, दूसरे यदि उसीके सिंहासन पर बैठकर उसीका न्याय करें, तो बतलाइये इससे अधिक दुर्भाग्यकी बात और कौनसी हो सकती है? हम ऊपर कह चुके हैं कि, इस महलके एक ओर मुगल बादशाहोंने न्याय-तुलाका एक चित्र बनाया है, सो उसका केवल यही उद्देश्य है कि, यहाँ जो न्याय दिया जायगा वह बावन तोला पाव रत्ती बिलकुल ठीक ही होगा। इसी न्यायकी तुलाके सामने बैठकर हमारी दयालु अँग्रेज सरकारके उपर्युक्त अधिकारियोंने बादशाहको जो न्याय दिया, वह बिलकुल ठीक होना ही चाहिए! बादशाह पर जो अभियोग लगाये गये थे, उनमें एक यह भी था कि, इसने अपनेको दिल्लीका बादशाह जतलाते हुए डौंड़ी पिटवाई! इस, तथा इसी प्रकारके दूसरे अभियोगोंके कारण, नियमानुसार उसकी जाँच हुई; और उसको काले पानीकी सजा दी गई! सन् १८५८ ईसवीके मई महीनेकी ग्यारहवीं तारीखको, लन्दनके सेन्ट जेम्स हालमें, आइलसबरीके एक पार्लमेंटके सभासदने, इस बादशाहकी उस समयकी दशाका, अपनी आंखों देखा वर्णन किया है। वह कहता है:—

"I saw that broken down old man, not in a room, but in a miserable hole of his palace, lying on a bedstead with nothing to cover him, but a miserable tattered coverlet. As I beheld him, some remembrance of his former greatness seemed

to arise in his mind. He rose with difficulty from his couch, showed me his arms, which were eaten into by disease and by flies, and partly from want of water; and he said in a lamentable voice that he had nothing to eat! I will not give any opinion as to whether the manner in which we are treating him is worthy of a great nation, but is this a way in which, as Christians, we ought to treat a king?"

अर्थात् "मैं उस जर्जर और अशक्त वृद्ध वादशाहसे मिला था। वह अपने राजमहलमें नहीं, वल्कि एक रद्दी कोठरीमें, एक विस्तर पर पड़ा था। उसके पास ओढ़नेके लिए एक फटी-पुरानी गुदड़ीके सिवा और कुछ भी नहीं था। ज्योंही मैंने उसकी ओर देखा, त्यों ही मुझे ऐसा जान पड़ा कि, उसे अपने प्राचीन वैभवका स्मरण हो आया है। वह बड़े प्रयत्नसे अपनी जगहसे उठा; और उसने मुझे अपने हाथ दिखलाये। वे व्याधिसे ग्रस्त हो रहे थे; और मक्खियोंने उन्हें खा डाला था! इसका एक कारण यह था कि, उसे पानी न मिलता था! बड़े करुण स्वरसे उसने कहा कि, मुझे खानेके लिए कुछ भी नहीं मिलता! इस रीतिसे जो हम लोग (अंग्रेज) उसके साथ वर्ताव करते हैं, वह रीति हमारे बड़े राष्ट्रके लिए उचित है अथवा नहीं—इस पर मैं अपनी राय प्रकट नहीं करूँगा। हां, एक ईसाईकी हैसियतसे मैं यह पूछता हूँ कि, क्या किसी भी राजाके साथ ऐसा वर्ताव करना उचित है?"

अस्तु। इस प्रकार, इस वादशाहकी दीन दशाके विषयमें, बहुत कुछ चर्चा होती रही; और अन्तमें वह रंगून भेज दिया गया!

सचमुच ही इस दीवान-ए-खासकी अन्य महत्त्वपूर्ण विशेष बातें कौन कौनसी बतलाई जाँय ? इस स्थानको देखकर किसके हृदयमें शोक की लहरें न उठने लगेंगी ?

"दीवान-ए-खास" के एक ओर एक सुवर्णांकित न्याय-तुलाका चित्र बना है। उसका इतिहास भी बड़ा मनोरंजक है। शाहजहाँ बादशाह इस महलमें बैठकर न्याय किया करता था। उस समय यह दिखलानेके लिए कि, वह न्याय सदैव मानो तराजू में तुला हुआ होगा, उसने यह न्यायकी तराजू तैयार की। इस न्यायतुलाके निकट एक घंटा था। इस घंटेको बजाकर प्रजाजन बादशाहके यहां अपनी अपनी अर्जियाँ दिया करते थे। कहते हैं कि, शाहजहाँने यह प्रणाली अपने पितासे ग्रहण की। जहाँगीर बादशाहकी न्याय-प्रणालीसे सम्बन्ध रखनेवाली दो आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध हैं। उनसे मुग़ल बादशाहोंकी मनोरंजक न्याय-प्रणालीका अच्छा पता चलता है। वे आख्यायिकाएँ इस प्रकार हैं:—

अकबर बादशाहके पुत्र जहाँगीरको अपने इन्साफका बड़ा अभिमान था। गरीब-गुरबे भी बराबर बादशाह तक पहुँच सकें, इसलिए उसने अपने महलमें एक घंटा बाँध दिया था। उसमें एक रस्सी बाँधकर उस रस्सीका अन्तिम सिरा किलेके बाहर एक खंभेमें बाँध दिया था। जब किसी मनुष्यको खास बादशाहकी सेवामें अपनी अर्जी पेश करनी होती, तब वह उस रस्सीको खींच देता, जिससे महलमें घंटा बज जाया करता था। ज्योंही घंटा बजता, त्योंही बादशाह घंटा बजानेवालेको बुलाता, और उसे उचित न्याय प्रदान करता था। एक बार एक

बैल, जिसकी पीठपर पानीसे भरा मशक लदा था, इस रस्सी बँधे हुए खंभेके पाससे जा रहा था। न जाने उसके मनमें क्या लहर आई कि, उसने अपनी गर्दन खंभेपर रगड़ दी। फल यह हुआ कि महलमें घंटा बज गया। जांच करनेपर मालूम हुआ कि, घंटेका बजानेवाला एक बैल है। तब दरबारके लोगोंने हाथ जोड़कर बादशाहसे निवेदन किया कि, "खुदावन्द, यह एक गूंगा जानवर है। गर्दन रगड़ दी। कृपा करके छोड़ दीजिएगा।" बादशाहने कहा, "नहीं, इस बैलपर कुछ न कुछ अत्याचार अवश्य हुआ है, इसकी पीठपर पानीसे भरा हुआ जो मशक लदा है उसको तौलना चाहिए। उसको तौलने पर मालूम हुआ कि, मशकमें पांच मन पानी भरा है। इसपर बादशाहने यह आज्ञा दी कि, यह पानी बहुत ज़ियादा है। साढ़े तीन मनसे अधिक पानी मशकमें न भरा जाय। जो कोई भरेगा उसे सज़ा मिलेगी।"

अब दूसरी आख्यायिका सुनिए। जहांगीर बादशाह नूरजहाँ-पर अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यार करता था। वह बड़ी बुद्धिमती, शूर-वीर और राजकाजमें भी चतुर थी। शिकार खेलनेका उसे बड़ा शौक था। जब उसे अपने कामोंसे छुट्टी मिलती, तब सुबह और शाम दोनों पहर निशानेबाजीका अभ्यास किया करती थी। दिल्लीका किला जमना नदीके किनारे बना है। उसमें जनानखाना और उसका महल दोनों जमनाकी ही ओर थे। एक दिन नदी के उस पार चांद लगाकर बेगम साहबा निशाना मार रही थीं। दुर्भाग्यवश उनकी एक गोली चूककर एक धोबीके लग गई; और वह बेचारा अपनी जानसे हाथ धो बैठा। धोबिन

रोती-चिल्लाती किलेके दरवाजेके पास आई; और उसने रस्सी खींचकर घंटा बजाया। थोड़ीही देरके बाद पहरेवालोंने उसको बादशाहके सामने लाकर खड़ा किया। वहाँ पहुँचतेही धोबिनने हाथ जोड़कर निवेदन किया, "महाराज, आपके जनानखानेसे एक गोली आई; और वह मेरे पतिके बदनमें घुस गई, जिससे वह मर गया है। कृपा कर इसका न्याय कीजिए।" जाँच करने पर मालूम हुआ कि, स्वयं नूरजहांकी गोलीसे ही धोबीके प्राण गये हैं। यह जानकर बादशाहका चेहरा फीका पड़ गया। दरबारके सारे लोग एकटक बादशाहके मुँहकी ओर देखने लगे। उनको दिल में यह जानने की बड़ी भारी इच्छा हुई कि, देखें बादशाह इस धोबिनके साथ क्या न्याय करते हैं। बादशाहने अत्यन्त शान्तिके साथ एक बन्दूक, बारूद, गोली इत्यादि सामान मँगाया; और बंदूकमें गोली-बारूद आदि भरकर उस बंदूकको धोबिनके हाथमें दे दिया; और कहा, "हमारे मुसलमानी न्यायशास्त्रके अनुसार तुझे खूनके बदले खून ही मिलना चाहिए। नूरजहाँने तेरे पतिको मारकर तुझे विधवा कर दिया है; इसलिए तू भी उसके पतिको मारकर उसे विधवा बना दे। तेरे हाथ में भरी हुई बन्दूक मौजूद है; और नूरजहाँका पति स्वयं मैं तेरे सामने उपस्थित हूँ। अतएव बंदूक चलाकर मेरे प्राण हरण कर ले!"

बादशाहके इस भाषणको सुनते ही दरबार के समस्त लोग चकित हो गये। धोबिनने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि, "महाराज, इस न्यायसे मुझे संतोष है; परंतु मैंने खून माफ कर दिया!"

इस पर बादशाहने उस धोबिनको नूरजहाँसे कई गांव इनाममें दिलवाये। वे गाँव अभी तक उस धोबिनके वंशमें बने हैं।

इस घंटेको बजाकर न्याय-याचना करनेकी प्रणाली उस न्यायतुला-वाले मन्दिरमें बराबर जारी थी। वहाँ बैठकर शाहजहाँ बादशाहने समय समय पर जो न्याय किये थे उनकी भी अनेक आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध हैं, जिनमेंसे यहां पर एक, नमूनेके तौर पर, दी जाती है।

एक बार एक मनुष्यने बादशाहकी सेवामें यह अर्जी पेश की कि, " मेरे पिताकी दो लाखकी सम्पत्ति मेरी माताके पास है; और वह मुझे दुराचारी समझकर उसका कुछ भी हिस्सा नहीं देती। कृपा कर मुझे कुछ दिलाइए।" बादशाहने उस मनुष्यकी माताको बुलवा भेजा; और उसे अपने पुत्रको पचास हजार रुपये देनें तथा सरकारी कोषमें एक हजार रुपये दाखिल करनेकी आज्ञा दी। इस पर उस स्त्रीने निवेदन किया कि, "हुजूर, आपके दर्बारमें न्यायकी तराजू है। इस लिए यहाँ जो न्याय मिलता है उसके ठीक होनेमें तिलमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता। आप महाराजाधिराज़ हैं, आपने मुझे अपने पुत्रको पचास हजार रुपये देने का जो हुक्म दिया है सो ठीक ही है; क्योंकि वह मेरे पति का औरस पुत्र है; परन्तु हुजूर ने सरकारी कोष में एक हजार रुपये जमा करनेकी आज्ञा प्रदान की है, उसके लिए मेरा सिर्फ यही निवेदन है कि, मुझे कृपापूर्वक यह बतला दिया जावे कि, सरकारसे मेरे पतिका कौनसा नाता है!" उस स्त्रीका यह मार्मिक भाषण सुनकर बादशाहने उसके वे हजार रुपये माफ कर दिये।

रोती-चिल्लाती किलेके दरवाजेके पास आई; और उसने रस्सी खींचकर घंटा बजाया। थोड़ीही देरके बाद पहरेवालोंने उसको बादशाहके सामने लाकर खड़ा किया। वहाँ पहुँचतेही धोबिनने हाथ जोड़कर निवेदन किया, "महाराज, आपके जनानखानेसे एक गोली आई; और वह मेरे पतिके बदनमें घुस गई, जिससे वह मर गया है। कृपा कर इसका न्याय कीजिए।" जाँच करने पर मालूम हुआ कि, स्वयं नूरजहांकी गोलीसे ही धोबीके प्राण गये हैं। यह जानकर बादशाहका चेहरा फीका पड़ गया। दरबारके सारे लोग एकटक बादशाहके मुँहकी ओर देखने लगे। उनको दिल में यह जानने की बड़ी भारी इच्छा हुई कि, देखें बादशाह इस धोबिनके साथ क्या न्याय करते हैं। बादशाहने अत्यन्त शान्तिके साथ एक बन्दूक, बारूद, गोली इत्यादि सामान मँगाया; और बंदूकमें गोली-बारूद आदि भरकर उस बंदूकको धोबिनके हाथमें दे दिया; और कहा, "हमारे मुसलमानी न्यायशास्त्रके अनुसार तुझे खूनके बदले खून ही मिलना चाहिए। नूरजहाँने तेरे पतिको मारकर तुझे विधवा कर दिया है; इसलिए तू भी उसके पतिको मारकर उसे विधवा बना दे। तेरे हाथ में भरी हुई बन्दूक मौजूद है; और नूरजहाँका पति स्वयं मैं तेरे सामने उपस्थित हूँ। अतएव बंदूक चलाकर मेरे प्राण हरण कर ले!"

बादशाहके इस भाषणको सुनते ही दरबार के समस्त लोग चकित हो गये। धोबिनने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि, "महाराज, इस न्यायसे मुझे संतोष है; परंतु मैंने खून माफ कर दिया!"

इस पर बादशाहने उस धोबिनको नूरजहाँसे कई गांव इनाममें दिलवाये। वे गाँव अभी तक उस धोबिनके वंशमें बने हैं।

इस घंटेको बजाकर न्याय-याचना करनेकी प्रणाली उस न्यायतुला-वाले मन्दिरमें बराबर जारी थी। वहाँ बैठकर शाहजहाँ बादशाहने समय समय पर जो न्याय किये थे उनकी भी अनेक आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध हैं, जिनमेंसे यहां पर एक, नमूनेके तौर पर, दी जाती है।

एक बार एक मनुष्यने बादशाहकी सेवामें यह अर्जी पेश की कि, "मेरे पिताकी दो लाखकी सम्पत्ति मेरी माताके पास है; और वह मुझे दुराचारी समझकर उसका कुछ भी हिस्सा नहीं देती। कृपा कर मुझे कुछ दिलाइए।" बादशाहने उस मनुष्यकी माताको बुलवा भेजा; और उसे अपने पुत्रको पचास हजार रुपये देनें तथा सरकारी कोषमें एक हजार रुपये दाखिल करनेकी आज्ञा दी। इस पर उस स्त्रीने निवेदन किया कि, "हुजूर, आपके दर्बारमें न्यायकी तराजू है। इस लिए यहाँ जो न्याय मिलता है उसके ठीक होनेमें तिलमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता। आप महाराजाधिराज़ हैं, आपने मुझे अपने पुत्रको पचास हजार रुपये देने का जो हुक्म दिया है सो ठीक ही है; क्योंकि वह मेरे पति का औरस पुत्र है; परन्तु हुजूर ने सरकारी कोष में एक हजार रुपये जमा करनेकी आज्ञा प्रदान की है, उसके लिए मेरा सिर्फ यही निवेदन है कि, मुझे कृपापूर्वक यह बतला दिया जावे कि, सरकारसे मेरे पतिका कौनसा नाता है!" उस स्त्रीका यह मार्मिक भाषण सुनकर बादशाहने उसके वे हजार रुपये माफ कर दिये।

इस आख्यायिकासे इस न्याय-तुलाका उद्देश्य और वहाँके कार्य्यका आदर्श समझमें आ सकता है। अब भी इस न्याय-तुलाका सुवर्णांकित चित्र देखनेसे उपर्युक्त आख्यायिकाओंका स्मरण हो आता है।

रंगमहल अथवा मोतीमहल

यह महल 'दीवान-ए-खास' के नजदीक है। यहाँ पहले शाही जनानखाना था। दिल्लीपतिकी पटरानियां जहां निवास करती थीं, वह स्थान यदि अत्यन्त सुंदर हो, तो इसमें कोई आश्चर्य्य नहीं। इस महलमें बेल-बूटोंकी सुन्दर नक्काशी की हुई है। आगरेके ताजमहल की तरह यहाँ भी विविध रंगोंके पत्थर संगमरमरके पत्थरमें जड़े हुए हैं। इससे महलको अद्वितीय शोभा प्राप्त हो गई है। कहते हैं कि, पहले यहाँका सारा काम रत्नजटित था। उस समय इस महलकी सुन्दरता अपूर्व होगी, इसमें सन्देह नहीं। उस समय, समस्त महलमें ठौर ठौर जड़े हुए विविध रंगोंके बहुमूल रत्न, अपनी उज्ज्वल प्रभासे, यहाँके मूर्तिमान् सुरुचिर स्त्रीरत्नोंके दिव्य तेजको लज्जित करनेका प्रयत्न अवश्य करते थे; परन्तु इस कार्य्यमें वे कभी भी सफल-मनोरथ नहीं हुए; प्रत्युत उन्हींको स्त्रीरत्नोंके अनुपम लावण्यसे हार खाकर बिलकुल स्तब्ध और निश्चल होना पड़ता था! इस तेजोमय रंगमहलके आसपास अनेकों आल्हाददायक, सहस्र धारावाले फुहारे, सुन्दर पुष्पवाटिकाएँ, रमणीय लताकुंज, और शीतल-मन्द-सुगन्ध वायुके सेवनार्थ विश्रान्ति-स्थान, इत्यादि बड़े ही [रम]णीय बने थे, जो उस स्थलकी सुन्दरता बढ़ाते हुए हृदयको

अत्यन्त ही आह्लादित करते थे। आजकल तो इनमेंसे कुछ भी वहाँ नहीं रहा है—सिर्फ यह 'रंगमहल' मात्र खड़ा है। रसिक पाठकोंको यहाँ पर यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि 'मुमताज-महल', 'जिन्नतमहल' इत्यादि इस महलकी सौन्दर्य्य-लतिकाओं के नामशेष हो जानेके कारण आज यह रंगमहल केवल नामधारी 'महल' रह गया है।

हमामखाने अथवा स्नानगृह

दीवान-ए-खास के उत्तरकी ओर शाही हमामखाने अथवा स्नानागार बने हैं। इन्हें 'आकाब' कहते हैं। इन स्नानागारोंके तीन कमरे हैं। हरएक कमरेकी धरती पर संगमरमरकी फर्शबन्दी है, जिसके मध्यमें मुख्य स्नानगृह है। इसके आसपासकी नक्काशी अत्यन्त ही सुन्दर है। इस स्नानागारमें पृथ्वीसे पानी की अनेकों नलियां लाई गई हैं; और उनमें उष्णोदक तथा शीतोदककी उत्तम योजना की गई है। स्नानगृह-में चारों ओर से पड़देका प्रबन्ध है। उजेलेके लिए दीवारमें ऊपर काँचकी खिड़कियाँ बनी हैं। ये काँच धुँधले हैं, और उनमेंसे सिर्फ प्रकाश आता है; परन्तु भीतरका स्नानविलास बाहरसे किसीको नहीं देख पड़ता। इस रम्य स्थान पर जाते ही दिल्लीपतिके विलासोंकी अस्पष्ट कल्पना नेत्रोंके सामने खड़ी हो जाती है; और उन विलासोंका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करनेकी लालसा उत्साही अन्तःकरणमें उत्पन्न होती है। दीवान-ए-आमके मयूरासनका वर्णन सुनकर, अथवा उसके स्थानको देखकर, कभी किसीको भी, अरबी कथाओंके अबू हुसेनकी तरह, एक दिनके लिए भी, बादशाह बननेकी इच्छा उत्पन्न

नहीं होती; अथवा मोतीमहल या रंगमहलको देखकर भी, सौन्दर्य-लतिकाओंके साथ नाना प्रकारकी क्रीड़ा करनेवाले दिल्लीपतिके वैभवसे ईर्षा नहीं होती; परन्तु इन सुन्दर और मनोवेधक स्नानगृहों तथा उनकी उत्तम रचना और योजनाको देखकर शायद ही कोई रंगीला दर्शक ऐसा हो, जिसके मनमें मुगल बादशाहोंके विलासोंका अनुभव प्राप्त करनेकी इच्छा न होती हो। वहाँके स्वच्छ और दुग्ध-धवल संगमरमरका सौन्दर्य और प्रशस्त तथा प्रगमनशील स्नानागार-रचना शायद ही और कहीं देखनेको मिलेगी। सच है, अपूर्व अपूर्व ही है!

शाहबाग और शाहबुर्ज

इन राजमहलों में शाहबाग और शाहबुर्ज नामक दो स्थान अत्यन्त ही दर्शनीय थे। इनमेंसे शाहबागके नष्ट-भ्रष्ट हो जानेके कारण उसका पूर्व-रूप अब नहीं रहा है। परन्तु शाहबुर्ज अभी तक मौजूद है। बर्नियर नामके फरासीसी यात्रीने इस बागको स्वयं देखा था। इस बागके नाना प्रकारके संगमरमरके फौवारों और भाँति भाँतिके संगमरमरी जलाशयोंकी अप्रतिम शोभाको देखकर वह विदेशी यात्री आश्चर्य्यसे चकित हो गया था। इस बागमें शाहबुर्ज नामक एक अठपहलू मण्डप था। उससे कालिन्दी नदीके रमणीय तटका सुन्दर दृश्य दिखाई पड़ता था। इस स्थलपर स्वयं बादशाह विराजमान होते थे। इसलिए उसके बाहरी और भीतरी दोनों हिस्से सुवर्ण के बने थे। सुन्दर तसवीरों और बड़े बड़े दर्पणों से यह सजाया गया था। सन् १७९३ ईस्वीमें फ्रांकलिन साहबने इस स्थलका दर्शन किया था, जिन्होंने इस तरह उसका वर्णन किया है:—

"शाहबाग नामक नृपोद्यानमें एक अठपहलू बँगला है। उसके ऊपरसे जमनाका दृश्य दिखाई देता है। इस मन्दिरका नाम शाहबुर्ज अथवा बादशाह-महल है। इसका भीतरी भाग संगमर-मरका बना हुआ है। सन् १७८४ ईसवीमें राजपुत्र जवानबख्त इसी महलकी खिड़कीसे कूदकर लखनऊको भाग गया था। इस मन्दिर पर मराठोंके आक्रमण हुए थे। अतएव वह बहुत नष्ट हो गया है।"

इसके इकतीस साल बाद हीबर नामके एक यात्रीने इसी स्थलको देखकर इस प्रकार लिखा है :—

"मैंने यहाँका बाग देखा। वह बहुत बड़ा नहीं था। परन्तु किसी समय यह अत्यन्त सुन्दर और रमणीय रहा होगा। यहाँ पर सन्तरेके पुराने वृक्ष दिखाई पड़ते थे। गुलाबके गमले और अन्य पुष्प-लतिकाएँ भी यहाँ कई थीं। स्वच्छ संगमरमरकी नालियाँ बनाकर उनके द्वारा सब ओर पानी ले जाते थे। बागमें एक अष्टकोणाकृति सुन्दर मण्डप अथवा उद्यानगृह था। वह बहुत ऊँचा था; और उसकी खिड़कियोंसे नगर तथा सरिताका उत्कृष्ट दृश्य दृष्टिगोचर होता था। परन्तु जिस समय हम वहाँ गये थे, उस समय वह सब अस्वच्छ और अव्यवस्थित दशामें था। स्नानगृह और फौवारे जलरहित अर्थात् बिलकुल शुष्क हो गये थे। उद्यानमन्दिरकी फर्शबन्दी पर कूड़ा-कचरा जमा हो जानेके कारण वहाँकी नक़ाशी लुप्त हो गई थी; और आसपासकी दीवारोंमें पक्षियोंने अपने घोंसले बना लिये थे!"

अस्तु। अब तो यह बाग बिलकुल ही नष्ट हो गया है। हाँ,

सिर्फ यह 'शाहबुर्ज' नामका स्थल बुरी दशामें मौजूद है। जिस स्थान पर स्वय दिल्लीपति वायुसेवनके लिए विराजमान होते थे, वहाँ पर अब चमगीदड़ोंका निवास देखकर अवश्य ही उस स्थानको अपने दुर्भाग्य पर खेद होता होगा!

मोती-मसजिद

यह इमारत स्वयं बादशाहकी ईश्वर-प्रार्थनाके लिए थी। इसको सन् १६३५ ईसवीमें औरंगजेब बादशाहने बनवाया था; और इसके बनवाने में १६,००,००० रुपये खर्च हुए थे। यह इमारत है तो छोटी; पर अत्यन्त सुन्दर है। मुख्य इमारत तीन मेहराबोंकी बनी है। इन मेहराबों और दीवारों पर जो नक्काशी की हुई है, वह बहुत सादी होने पर भी अत्यन्त मनोरम है। इसको देखकर बड़े बड़े शिल्प-कला-विशारद आनन्दसे नाचने लगते हैं। उनका कथन है कि, यह मसजिद शिल्प-कलाका एक अद्वितीय रत्न है। इस मसजिदका द्वार पाँच धातुओंके मेलसे बना है; और उसपर अत्यन्त ही कमनीय नकाशी की हुई है। सन् ५७ के सिपाही-विद्रोहके समय इस मसजिद पर गोलोंकी वर्षा हुई थी, जिससे इसे बहुत बड़ा धक्का पहुँचा है। बहुत दिनों तक किसीने इसकी ओर ध्यान नहीं दिया था, इसलिए इसकी दीवारों पर पीपलके कोमल पत्ते दिखाई देने लगे थे। परन्तु अब उसका रूप पलट गया है; और वह फिर पहले जैसी नई दिखने लगी है। इस मसजिदको बनवानेके बाद स्वयं औरंगजेब बादशाहने ही इसकी प्राणप्रतिष्ठा की; और उसमें निमाज पढ़ना आरम्भ किया। जब वह इस राजप्रासादमें रहता था, तब खास तौर पर, शुभ्र वस्त्र

पहिनकर, वह इस मसजिदमें ईश्वर-प्रार्थना किया करता था। इससे जान पड़ता है कि, दारा नामक उसके भाईने जो उसे "निमाजी" नाम दिया था, सो बिलकुल उचित था। अब इस मसजिदकी अच्छी मरम्मत हो गई है।

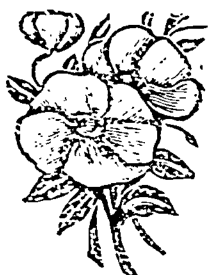
ऊपर जिन स्थानोंका वर्णन किया गया, वही दिल्लीके किलेमें मुख्य स्थान हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ और भी कई राजमहल थे; परन्तु वे सब आजकल नष्ट-भ्रष्ट हो गये हैं; और उनकी जगह पर अँग्रेजी पल्टनोंके निवास-स्थान बन गये हैं! दिल्लीके किलेका प्राचीन और भव्य स्वरूप, जितना उसके बाहर के लालरंगके कोटसे और बड़ी खाईसे, व्यक्त होता है उतना उसके अन्तःस्वरूपसे नहीं व्यक्त होता; क्योंकि जबसे वहाँ अँग्रेजी राज्यकी स्थापना हुई है तबसे उसमें अनेकों नई इमारतें बन गई हैं; और पुरानी गिरा दी गई हैं। इतना होने पर भी हमने जिन मुग़ल इमारतोंका ऊपर वर्णन किया है, वे अभी तक मुगलोंके वैभवकी गवाही दे रही हैं। अवश्य ही वे दर्शकोंके अन्तःकरणको प्रसन्न किये बिना नहीं रहतीं।

सलीमगढ़

शाहजहाँ बादशाहके महल और जमना नदीके पुलके बीचमें सलीमगढ़ नामका एक अत्यन्त प्राचीन किला है। शेरशाहके पुत्र सलीमने इस किलेको बनवाया था। इसलिए इसे सलीमगढ़ नाम प्राप्त हो गया है। जब हुमायूँ बादशाह पुनः दिल्लीको वापिस आया, तब उसे अपने शत्रुके पुत्रका नाम कायम रखना उचित न मालूम हुआ। इसलिए उसने, उस नामको बदलकर, उसका नाम

'नाहरगढ़' रक्खा। यह किला मिट्टीका बना है; और अत्यन्त ही बेडौल है। तोभी इसका बाहरी दृश्य अत्यन्त भव्य है। यह किला जमना नदीके प्रवाहमें बना है। इसलिए वह एक द्वीपके समान दिखाई देता है। इस किलेसे नदीको सरलतापूर्व्वक पार करनेके लिए जहाँगीर बादशाहने पाँच मेहराबोंका एक पुल बनवाया था। वह अभी तक मौजूद है। सलीमगढ़का किला यद्यपि विशेष दर्शनीय स्थान नहीं है, तथापि उसका इतिहास बड़ा महत्त्वपूर्ण है। लन्दनमें जिस तरह 'टॉवर आफ लन्डन' नामका एक विख्यात किला है, उसी तरह इसे यदि 'टॉवर आफ देहली' कहें तो कुछ हर्ज नहीं। 'टॉवर आफ लन्डन' नामक किलेमें जिस तरह अनेक राजा और राजनीतिज्ञ लोग कैद थे, उसी तरह देहलीके इस टॉवरमें भी दिल्लीके राजघरानेके बहुतसे राजपुरुष और दिल्लीके दरबारके अनेक सरदार कैदमें रक्खे गये थे। शाहजादा मुराद जब-कि शराबके नशेमें चूर था, एक हाथीपर बिठाकर इसी किलेमें लाकर कैद किया गया था। दाराके छोटे लड़के शेखूको, औरंगजेब-की बेटीसे विवाह करके, इसी किलेमें कैद किया था। औरंगजेबके ज्येष्ठ पुत्र मुहम्मद सुल्तानको भी पन्द्रह वर्ष तक इसी दुर्गमें परा-धीनताका दुख सहन करना पड़ा था। इनके सिवा, अन्य कितने चतुर और महत्त्वाकांक्षी राजनीतिज्ञ यहाँ आये होंगे, तथा कैदमें पच-पचकर मरे होंगे, इसका कुछ पता नहीं। इँग्लैंडके 'टॉवर आफ लन्डन' नामक किलेके कृष्णकृत्योंका वर्णन पढ़कर जिस तरह पाठकों के शरीर पर रोमांच खड़े हो जाते हैं, उसी तरह सलीमगढ़के किलेका वर्णन पढ़कर भी पाठकों को दुःख हुए बिना नहीं रहता।

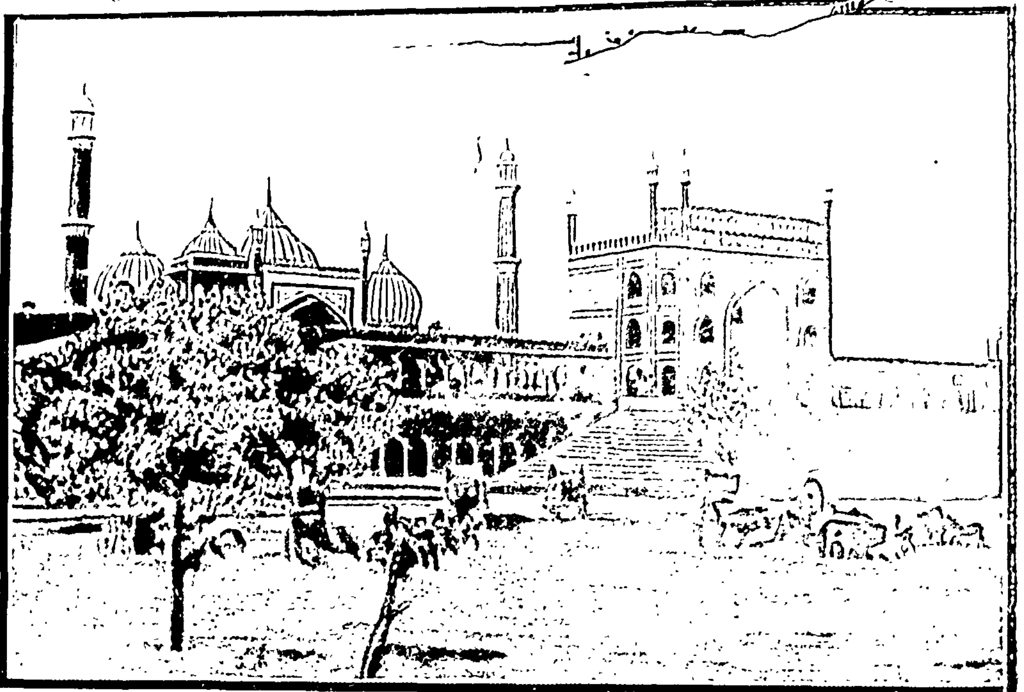
राज्य-लोभ अथवा अधिकारलोभकी प्रवलताके कारण जो अत्याचार हुए हैं, उनका प्रदर्शन करनेके लिए ही मानो 'सलीमगढ़' अथवा 'टॉवर आफ लन्डन' अथवा 'बेस्टिली' जैसे उग्र एवं भयानक किले अभी तक विद्यमान हैं। अहा! जिस भीमरूपी सलीमगढ़ की किसी समय वह धाक थी, आज वही बिलकुल दीनावस्थामें दिखाई दे रहा है!



तीसरा प्रकरण

दिल्लीकी जुम्मा-मसजिद

दिल्लीके राजप्रासादका देखनेके बाद नगरमें प्रवेश करतेही, पहले-पहल यह भारी मसजिद दिखाई पड़ती है। हिन्दुस्तान की बढ़िया इमारतोंमेंसे यह भी एक है। ईसाइयोंके लिए जिस तरह सेंटपीटर्सका गिरजाघर है, अथवा हिन्दुओंमें जैसे जगन्नाथजी का मन्दिर है, वैसीही मुसलमानोंकी यह जुम्मा-मसजिद है। आगरेका 'ताजमहल' सबसे श्रेष्ठ है। उसके बाद यदि इस मसजिद की गणना की जाय, तो कुछ अनुचित नहीं। यह सारी इमारत लाल रंगके पत्थरसे बनी है; और बीच-बीचमें उसपर संगमरमरकी कारीगरी की गई है, अतएव ऐसी भली मालूम होती है, मानों लाल रंग के दुशाले पर सुन्दर बेल-बूटे कढ़े हों। यह सारी इमारत यदि बढ़िया संगमरमरकी बनी होती, तो आगरेके 'ताज' के समान यह भी अपनी धवल प्रभासे लोगोंको उसी प्रकार मोहित कर सकती थी। अस्तु। यह सारी इमारत यद्यपि संगमरमरकी नहीं बनी है, तो भी इससे यह न समझना चाहिए कि, इसकी बनावट सौन्दर्यमें कुछ न्यून है। यही नहीं, किन्तु समस्त दिल्ली नगरमें सबसे ऊँची इमारत केवल यही एक है; और यह कहना भी अत्युक्ति न होगा कि,



(৩)

जुम्मा-मसज़िद ।

यह इमारत अपनी भव्यता और अपनी आरक्त प्रभासे अन्य सब इमारतों को लज्जित कर रही है।

यह मसजिद एक ऊँची चट्टान पर बनी है; और इसके लिए वह चट्टान तोड़कर साफ की गयी है। इस मसजिदके चारों ओर चार मार्ग हैं। परन्तु इसमें प्रवेश करनेके लिए सिर्फ उत्तर, दक्षिण और पूर्वकी ओरसे द्वार खुले हुए हैं। पश्चिमकी ओर बिलकुल द्वार नहीं है। वहाँ सिर्फ पत्थरकी एक ऊँची दीवार ही बना दी गई है। मुख्य तीन ही दरवाजे हैं। उनके आगे, नदीके घाटकी सीढ़ियों की तरह, सीधी-खुली सीढ़ियाँ हैं। मुख्य प्रवेश-द्वार पीतलके ढले हुए हैं; और बहुत भारी तथा मजबूत हैं। इनमें पूर्वीय द्वार बहुत बड़ा और अत्यन्त सुन्दर है। इसे हम महाद्वार कह सकते हैं। इस द्वारसे भीतर जाने पर एक बड़ा भारी आँगन मिलता है। आँगनका विस्तार १४०० घन-गज है। इसमें एक प्रकारके लाल पत्थरकी फर्शबन्दी की हुई है। इस आँगनके बीचोंबीच सुन्दर संगमरमरका एक बड़ा हौज है। उसमें चट्टानके प्राकृतिक झरनेका पानी लाया गया है। इस चौरस आँगनमें ५००० मुसलमान प्रार्थना के लिए एकत्रित हो सकते हैं। इस इमारत की मुख्य मसजिद इस मुख्य आँगनके पश्चिममें है। मक्का चूंकि पश्चिममें है, इसलिए, उसकी दिशाका बोध होनेके लिए, ऐसी रचना की गई है। यह मुख्य मसजिद आयताकार है, जिसकी लम्बाई २०१ फीट और चौड़ाई १२० फीट है। उसके शिरोभाग पर सुन्दर संगमरमरकी तीन मेहराबें हैं, जिनपर सोनेका मुलम्मा चढ़ाकर बहुतही बढ़िया नक्काशी की गई है। इसके दोनों ओर दो मीनारें हैं। वे १३०

फीट ऊँची हैं; और उनपर छोटे छोटे अत्यन्त कमनीय गुम्बज बने हैं। मसजिदके अग्रभागमें दस दालाने हैं; और उनपर ऊँची तथा अर्धवृत्ताकार मेहरावें हैं, जो अत्यन्त सुंदर हैं।

इस इमारतके शीर्षभागपर, बढ़िया संगमरमरपर, काले रंगके पत्थरसे, नस्की भाषाके अक्षर बने हैं। उनमें इस मसजिदके बननेका काल और खर्च लिखा है। उससे यह मालूम होता है कि, इस इमारतके बनानेका काम सन् १६४४ ईसवीसे आरम्भ होकर सन् १६५० ईसवीमें समाप्त हुआ है। इस इमारतके लिए लगभग छै वर्ष तक ५००० लोग काम करते रहे। उस समयके हिसाबसे इस इमारतके बनानेमें दस लाख रुपया खर्च हुआ था।

इस मसजिदकी सारी फर्शबन्दी संगमरमरकी है। उस पर क्रमशः तीन फुट लम्बी और डेढ़ फुट चौड़ी क्यारियां कटी हुई हैं। कुल क्यारियां ९०० हैं। इनमें निमाज पढ़ते समय बादशाह और अमीर-उमराव लोग बैठा करते थे। किबलेके निकट, यानी मध्यभाग के अर्धगोलाकृत शिरोभाग के नीचे, जो नक्काशी की गई है, वह सर्वोत्कृष्ट है। इसके सामने धर्माध्यक्षका मुख्य पीठ है, जो एक अखण्ड संगमरमरके पत्थरका बना है। यहाँ की एक दीवालपर शाहजहाँ और बहादुरशाहके हस्ताक्षर दिखलाये हैं।

इस मसजिद के एक दालानमें एक कोठरी है। वहाँ जालीका काम अत्यन्त दर्शनीय है। इस कोठरीमें मुसलमान लोगोंकी दृष्टिसे अत्यन्त प्रिय, तथा मुहम्मद साहबके समयकी पुरानी वस्तुएँ रखी हैं। उनमें सातवीं शताब्दीकी प्राचीन कुरानकी एक हस्तलिखित प्रति है। सिवाय, इमामहुसेन तथा इमाम-हसनके द्वारा लिखी हुई

कुरानकी भी दो प्रतियाँ हैं। यहाँ पर 'कदम-ए-मुबारक' यानी हजरत मुहम्मदकी चर्मपादुकाएँ भी सुगंधित द्रव्योंमें डालकर रखी गई हैं। 'कदम-उल्-मुबारक' यानी उनके पैरकी छाप, और 'मुइ-ए-मुबारक' यानी उनकी दाढ़ीके वाल, भी वहाँ पर रखे हुए हैं। इसी तरह वहाँ पर उनकी कब्रके आच्छादनका थोड़ासा शेष भाग भी सुरक्षित रूपसे रखा गया है। जिन महाशयोंको ये चीजें देखनेकी लालसा हो, वे वहाँके काजीको कुछ दक्षिणा देकर उनको अवश्य देख सकते हैं। कहते हैं कि, शाहजहाँ वादशाहने इन वस्तुओंको लाकर यहाँ वड़ी भक्तिके साथ रखा है।

मुगल वादशाहोंके जमानेमें जुम्मा मसजिदकी वड़ी इज्जत थी। ईदके दिन यहाँ पर वादशाह और उसके अमीर-उमरा वड़े ठाट-वाट के साथ आया करते थे। उस समय यहाँका दृश्य वहुत ही विचित्र देख पड़ता था। प्रति शुक्रवारको यहाँ पर ईश्वरकी प्रार्थना हुआ करती थी। मुसलमान लोग चूंकि धर्मके लिए पागल होते हैं, इसलिए मसजिदमें एकत्रित होने पर, यह मसजिद उनमें चाहे जैसी उत्तेजना उत्पन्न कर देनेका सामर्थ्य रखती थी। सन् ५७ के वलवेके समय, सितम्वर महीनेके एक शुक्रवार को, यहाँ 'खुतवा' पढ़ा गया; और दिल्लीके सव मुसलमानोंने उस समय यह घोषणा कर दी कि, 'खल्क खुदाका, मुल्क वादशाहका, अमल वहादुरशाहका'। मतलव यह कि, उस भयंकर प्रसंग में यह मसजिद स्वधर्माभिमान तथा स्वदेशाभिमानकी प्रेरणा करनेवाली एक मुख्य जगह वन गई थी। परन्तु वह प्रेरणा क्षणभंगुर हुई; और राज-द्रोही वलवाइयों का शीघ्र ही अन्त हो गया। वलवेके वाद यह चर्चा छिड़ी कि, यह मस-

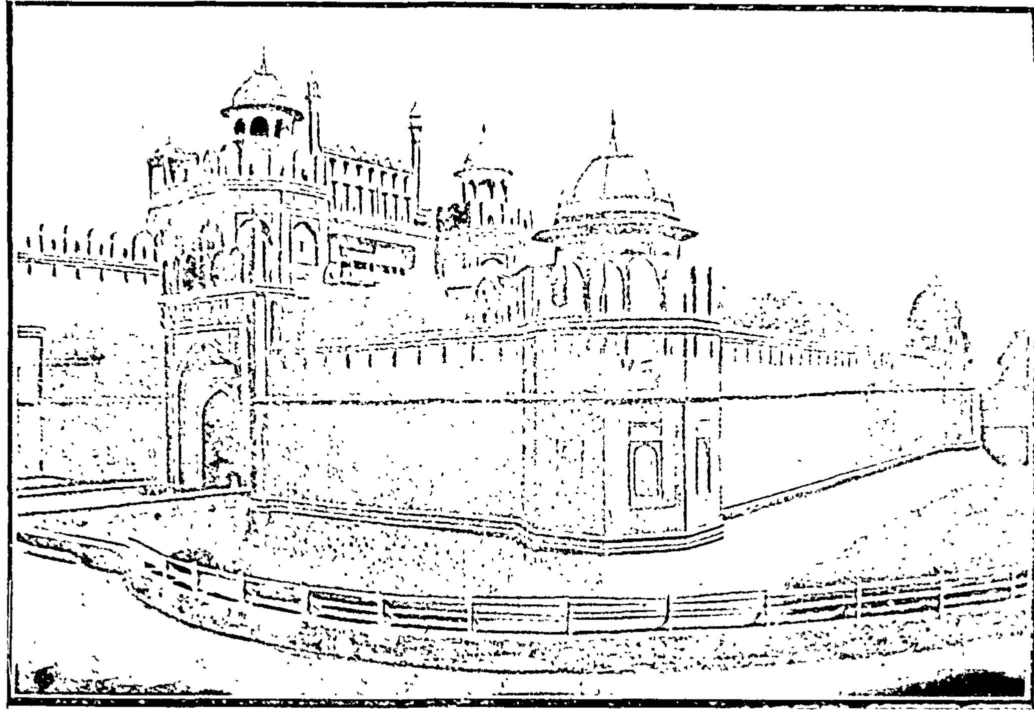
जिद बिलकुल गिरा दी जावे। परन्तु सरकारने मुग़ल रियासतकी इस बड़ी इमारतको नष्ट करके संसारमें अपनी अपकीर्ति नहीं कराई। यह बहुत अच्छा हुआ। बिशप हीबर नामक यात्रीने जुम्मा-मसजिदकी अलौकिक रचना देखकर बहुत ही आनन्द प्रकट किया है—उसने कहा है कि, "इस मसजिदका आकार, उसकी दृढ़ता और उसकी बनावटकी उत्तमताको देखकर मेरे मन पर जैसा प्रभाव हुआ, वैसा हिन्दुस्तानकी दूसरी इमारतोंके देखनेसे नहीं हुआ*।" रसेल नामके एक दूसरे यूरोपीय महाशयने लिखा है कि, "इस इमारतकी विशुद्ध शोभा, उसकी रचनाका परिमाण-सौन्दर्य्य, और भवनसम्बन्धी ऊँची कल्पनाशक्तिकी, यदि हमारे ईसाई-प्रार्थना-मन्दिरके क्षुद्र और दरिद्री भवनसे तुलना की जाय, तो दुखसे हमें अपना सिर नीचा करना पड़ेगा†।" सारांश यह कि, जिस इमारतके रचना-चातुर्य पर विदेशियोंको भी इतना आश्चर्य होता है, वह इमारत, सिर्फ दिल्ली शहर के लिए ही नहीं, किन्तु यदि समस्त भारतवर्ष के लिए भी भूषण हो, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं।

* "The size, the solidity, and rich materials of the Jumma-Musjeed impressed me more than anything of the sort which I have seen in India."

—*Bishop Heber.*

† There is a chaste richness, and elegance of proportion, and a grandeur of design in all its parts, which are painful contrast to the *mesquin* and paltry architecture of our christian churches."

—*Russell.*



लाहौर-दरवाज़ा ।

दिल्ली शहर

दिल्लीका किला, जुम्मा मसजिद और वर्तमान दिल्ली शहर—ये तीन हिस्से मिलकर नई दिल्ली अथवा शाहजहानाबाद शहर बनता है। इस शहरके चारों ओर एक बड़ा शहरपनाह है, जिस का घेरा साढ़े पाँच मील है; और उसके किलेका कोट डेढ़ मील है। किलेमें दो दरवाजे हैं। उनका नाम क्रमशः 'लाहोर-गेट' और 'दिल्ली-गेट' है। कुल शहरमें दस दरवाजे हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं:—

१. 'कलकत्ता-गेट'—यह राजमहलके पास है। यहाँसे रेलवे स्टेशन की ओर रास्ता जाता है।

२. 'काश्मीर-गेट'—यह उत्तर में है। चर्च और कचहरियाँ इसके नजदीक हैं।

३. 'मोरी-गेट'—यह भी उत्तरमें है।

४. 'काबुल-गेट'—यह पश्चिममें है। इसके आगे सदर बाजार लगता है।

५. 'लाहोर-गेट'—यह पश्चिममें है; और यहाँसे चाँदनी-चौकको रास्ता जाता है।

६. 'फराशखाना-गेट'—यह नैऋत्यमें है।

७. 'अजमेर-गेट'—यह भी नैऋत्यमें ही है।

८. 'तुर्कमान-गेट'—यह दक्षिणमें है।

९. 'देहली-गेट'—यह भी दक्षिणमें है।

१०. 'राजघाट-गेट—यह पूर्व में है। यहाँ से जमुनाजीके घाट की ओर रास्ता जाता है।

किलेसे चलकर दिल्ली शहरमें प्रवेश करनेके लिए लाहोर-दरवाजे से आना पड़ता है। लाहोर-दरवाजेके भीतर आतेही एक बड़ा चौड़ा रास्ता मिलता है। यह रास्ता सीधा चाँदनी चौक की ओर जाता है। दिल्ली शहर का नामी चौक यही है। यहाँ धनशाली व्यापारियों और जौहरियों की दूकानें हैं। यहाँका बादशाही जमानेका वैभव अब नष्ट हो गया है; और फिरसे उसके प्राप्त होने की बहुत कम सम्भावना है। इस चौककी दूकानें बाहरसे बड़ी भड़कीली दिखाई देती हैं। परन्तु इस रास्ते पर पहले जैसे मूल्यवान् वस्त्र परिधान किये हुए अमीर-उमराव, उनके कीमती सामान और सोने-चाँदी से अलंकृत अच्छे अच्छे घोड़े, उनके नाना प्रकारसे शृंगारित हाथी, तथा विविध रङ्गके मियानोंके झुंड दिखाई देते थे, उनका अब कहीं पता नहीं है—उनकी जगह पर अब यहाँ अर्वाचीन इक्के, तांगे और घोड़े-गाड़ियाँ बहुत हैं। रास्तेसे गुजरते हुए चारों ओर नेचेदार हुक्कोंकी धूम खूब दिखाई देती है। हर एक दूकानमें हुक्का अवश्य होता है। पहले के मुसलमानोंको ऐशो-आरामकी जो आदत थी, उसका कुछ स्वरूप अब भी दिखाई देता है। वे लोग सदैव व्यसनासक्त रहकर विलासितामें मग्न रहते थे। हाँ, अब अँगरेजी राज्यमें विद्याका प्रचार बहुत कुछ हो रहा है, अतएव इन लोगों का ऐशो-आराम भी अब बहुत कुछ कम हो गया है; और ये लोग भी अब उन्नतिके मार्गपर अग्रसर हो रहे हैं। यहाँके सुशिक्षित लोग बड़े सभ्य हैं; और बाहरवालोंको वे बड़े आदरकी दृष्टिसे

देखते हैं। तथापि, मुसलमानोंकी रीतिके अनुसार, औपचारिक बर्ताव और कोरा आदर-सत्कार यहाँ पर बहुत है। इसके सिवाय यहाँ पर व्यर्थ की बड़ाई मारनेवालोंकी भी कमी नहीं है। दिल्लीके चाँदनी चौकमें खड़े होनेपर 'दिल्ली-इन्स्टीट्यूट' नामकी एक बड़ी इमारत दिखाई देती है। इस इमारत की बनावट यूरोपियन ढंग की है; और इससे दिल्लीको एक नये प्रकार की शोभा प्राप्त हो गई है। यहाँ वाचनालय, अजायबघर, म्यूनिसिपालिटी, इत्यादि सार्वजनिक संस्थाएं हैं। ग्रामसंस्थाने इस इमारतको १,३५,४५७ रु० व्यय करके निर्माण किया है।

"दिल्ली-इन्स्टीट्यूट" के सामने, चाँदनी चौकके एक ओर, १२८ फुट ऊँचा एक सुंदर और दर्शनीय मीनार है। इस मीनारका नाम 'क्लाक टावर' है; और दिल्लीकी म्यूनीसिपालटीने २५,५०० रुपये खर्च करके उसको बनवाया है। इस मीनारसे चाँदनी-चौक को यद्यपि बहुत कुछ शोभा प्राप्त हुई है, तथापि मुग़ल बादशाहों के प्राचीन मीनारोंकी बराबरी यह नहीं कर सकता। इस मीनारके शीर्षभागपर चारों ओर बड़ी बड़ी घड़ियाँ हैं। वे प्रत्येक पलमें, समर्थ रामदास स्वामीके शब्दोंमें, मानो दर्शकोंसे कह रही हैं कि, "भाइयो, घटिकाएं निकल गईं, पल निकल गये; और घंटा टन-टन बजता है। इसी तरह तुम्हारे जीवनका भी नाश हो रहा है। इसलिए इस संसारमें आकर परमात्माका नाम लो; और कुछ परोपकारका कार्य कर जाओ!"

चाँदनी-चौकमें प्राचीन ऐतिहासिक स्थानोंमेंसे दो स्थान देखने लायक हैं—एक रोशनुद्दौला की मसजिद; और दूसरा कोतवाली।

रोशनुद्दौला की मसजिद सन् १७२१ ईस्वीमें, मुहम्मदशाह बादशाहके जमानेमें, रोशनुद्दौला जफरखांने बनवाई थी। यह मसजिद है तो छोटी ही; परन्तु अत्यन्त कमनीय है। इसके गुम्बज पर सोनेके मुलम्मेका काम किया गया है; इसलिए इस मसजिदको सोनेकी मसजिद भी कहते हैं। नादिरशाहने जिस समय दिल्लीपर आक्रमण करके वहाँके लोगोंको कतल करवाया, उस समय उसने इसी मसजिदकी छतपर खड़े होकर वहाँकी कतलका अवलोकन किया था! दीन प्रजाजनोंका करुणा-पूर्ण क्रन्दन सुनकर उसके हृदयमें रत्तीभर भी दया उत्पन्न न हुई! प्रत्युत, उनके रुधिर-प्रवाहके साथही साथ उस नराधम नरपिशाचके हृदयमें आनन्दकी तरङ्गें उमड़ने लगीं थीं!! ऐसे पुरुषोंके लिए 'मानवसृष्टिके राक्षस' से अधिक और क्या उपमा दी जा सकती है? इस स्थानके पास ही कोतवाली की इमारत है। हडसन साहबने, सन् १८५७ ईसवी के बलवेके समय, बादशाहके पुत्रोंको मारकर, उनकी लाशें लोगोंको दिखलानेके लिए यहीं पर लाकर रक्खी थीं! बलवेके समय यद्यपि यह स्थान रक्तकी बूँदोंसे कलङ्कित हो गया था, तथापि आजकल वहाँ शान्ति-देवीका पूर्ण साम्राज्य है।

दिल्लीके चाँदनी-चौकका अवलोकन करनेवालोंके मनमें वहाँके 'विक्टोरिया-बाग' को देखनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। यह बाग अँग्रेजी ढँगपर लगाया गया है; और नगर-निवासियोंके विश्रामका वहां पूरा पूरा सुभीता किया गया है। इस उद्यानमें नेत्रोंका रंजन बहुत अच्छी तरह होता है। कर्णोंका रंजन होनेके लिए भी यहाँ पासही एक 'बैंडस्टैन्ड' की योजना की गई है। वहाँ हफ़्तेमें नियत

दिनोंपर सुन्दर वाद्य सुनाई देते हैं, जिन्हें सुनकर रंजनप्रिय जन-समुदायको वड़ा संतोष होता है। इस वागसे अलीमर्दानकी नहर वह रही है। इस जलाशयसे वागको विशेष शोभा प्राप्त हुई है। सुन्दर सरिता अथवा रमणीय सरोवर उद्यानश्रीके प्यारे क्रीड़ा-भवन हैं। इनके विना उसके विलास पूरे नहीं होते! अस्तु।

इस वागमें पत्थरका एक हाथी है। उसके पैरोंके पास एक लेख खुदा है, जिसमें लिखा है कि, शाहजहाँ वादशाह सन् १६४५ ईसवीमें ग्वालियर से यह हाथी की मूर्ति लाया। इसके सिवा चाँदनी-चौकमें और विशेष देखने लायक कुछ नहीं है।

काली मसजिद

दिल्ली शहरके चाँदनी-चौकको देखनेके वाद दर्शक लोग शहरके दक्षिणमें काली मसजिदकी इमारत देखनेके लिए उत्सुक होते हैं। यह मसजिद काली है, इसीलिए उसको 'काली मसजिद' नाम मिला है। यह 'तुर्कमन-गेट' के समीप है। इस दरवाजेका नाम 'तुर्कमन' इसलिए पड़ा कि, यहाँ पर शाह तुर्कमन नामका एक प्राचीन औलिया रहता था। सन् १२४० ईसवीमें उसका देहावसान हुआ। यहाँ पर उसकी कब्र है; और 'रज्जव' महीनेकी २४ वीं तारीखको यहाँ एक मेला लगता है। इसी पुरुषके कारण इस दरवाजेको 'तुर्कमन-गेट' नाम प्राप्त हुआ है। अस्तु। काली मसजिदकी इमारत वहुत पुरानी है। यह सन् १३८६ ईसवीमें; यानी फीरोजशाह तुग़लकके समयमें, वनी। वाहरसे यह इमारत दोमंजलीसी दिखाई देती है; परन्तु उसकी कुर्सी वहुत ऊँची है; और उसपर २८ फुटकी ऊँचाई पर प्रार्थना का स्थान है। मसजिदकी कुल ऊँचाई ६६ फुट है।

इस मसजिदका काम चौदहवीं शताब्दीकी शिलपकलाका दर्शक है। स्टीफन नामक एक महाशयने इसके सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा है—"इस मसजिदकी मेहराबों और अर्धगोलाकृत शीर्षभागकी रचना बड़ी विलक्षण है। इस इमारतके पत्थर एक अद्भुत प्रकारके चूनेसे जमाये गये हैं। यह इमारत चौदहवीं शताब्दीके कलाकौशलका नमूना है। दीवारोंपर लाल रंगकी जालियां हैं। उनका बहुतसा भाग लापरवाहीके कारण लुप्त हो चला है। यह इमारत भड़कीली नहीं है; किन्तु बिलकुल सादी दिखाई देती है। बिशप हीबरने कहा है कि, "यह मसजिद अरबी भाषाकी कथाओंमें वर्णित मसजिदोंके नमूने पर बनी है।"

जैन-मंदिर

जुम्मा-मसजिदसे एक तङ्ग रास्ता जाता है। उसी रास्ते से एक ऊँचासा कोट दिखाई देने लगता है। यह जैन-मंदिर है। इसका सभा-मंडप संगमरमरका बना है। इस मन्दिरमें बुद्धकी मूर्ति हाथी-दांतके नक्काशीदार सिंहासनमें बैठाई गई है। यह मन्दिर भारतके अन्य जैनमंदिरोंके समान ही बनाया गया है। फ़र्ग्युसन जैसे साहबों ने स्पष्ट स्वीकार किया है कि, शिल्पशास्त्रकी दृष्टिसे इस देवालयके कई एक भाग वर्णन करने योग्य हैं। ध्यानमें रखने लायक बात तो यह है कि, दिल्लीमें मुसलमानी बादशाहतके समयमें भी यह मन्दिर सुरक्षित बना रहा। इस प्राचीन जैनमंदिरसे यह सिद्ध होता है कि; किसी समयमें दिल्लीमें बौद्ध धर्म प्रचलित था। प्राचीन इतिहास-अन्वेषकोंको इस मंदिरका दर्शन विशेष महत्त्वका मालूम होता है। सर्वसाधारणको शायद यह विशेष आनन्ददायक न मालूम होगा।

चौथा प्रकरण ।

इन्द्रप्रस्थ

महाभारतकी कौरव-पांडवोंकी कथाओंने जिस इन्द्रप्रस्थका नाम अजर-अमर कर दिया है, और जिसका नाम हिन्दुओंने अनेक बार सुना है, वह सुप्रसिद्ध नगर दिल्लीके दक्षिणमें दो मीलकी दूरी पर है। यहाँ पांडवोंके समयकी धन-सम्पन्न नगरी अब नहीं है। सिर्फ मुसलमानी किलेका कुछ जीर्ण भाग और उसमें कुछ प्राचीन मसजिदें हैं। आज-कल यहां पर न तो वे उत्तुंग देवालय हैं; और न वे रमणीय उद्यान। यहाँकी निर्जन तथा उध्वस्त दशाको प्राप्त—परंतु इतिहासकी दृष्टिसे अत्यंत पवित्र एवं महत्व-पूर्ण—भूमिका अवलोकन करने पर प्रत्येक हिन्दू दर्शकका हृदय गद्गद हो जाता है। यह सोचकर, कि हम पांडवोंके इन्द्रप्रस्थमें खड़े हैं, उसे बड़ा गौरव मालूम होता है; और उस सुंदर नगरीकी विपदावस्थाको देखकर उसे अत्यंत खेद होता है। पांडवोंकी पुण्यभूमि अवलोकन करनेकी उत्सुकतासे हृदयमें उठी हुई आनन्द-तरंगें क्षणभरमें विलीन हो जाती हैं; और वहाँ जाते ही शोकका साम्राज्य हृदयमें छा जाता है। अस्तु। मनकी यह हालत हो जाती है, तथापि दर्शकोंको इस स्थानके देखनेकी जिज्ञासा विशेष रहती है; और दिल्ली जाने पर उसका अवलोकन किये विना वे कदापि नहीं रहते।

इन्द्रप्रस्थ नगरका विस्तारपूर्वक वर्णन महाभारतमें दिया ही है। तो भी उसका थोड़ासा वृत्तांत यहां पर दे देना आवश्यक जान पड़ता है। इस नगरकी कथा इस प्रकार है:—

द्रौपदीका स्वयंवर होनेके बाद, उसके साथ पांडव हस्तिनापुर को रवाना हुए। तब कौरवराज धृतराष्ट्रके मनमें यह डर पैदा हुआ कि, ज्योंही ये हस्तिनापुरमें आवेंगे त्योंही राज्यके बँटवारेके लिए मेरे पुत्रों में और इनमें झगड़ा शुरू हो जायगा। इसका प्रतिबन्ध करनेके लिए उन्होंने विदुरके द्वारा धर्मराज युधिष्ठिरको यह संदेशा भेजा कि, तुम लोग हस्तिनापुर न आकर वहांसे थोड़ी ही दूर पर जो खांडव-वन अथवा इन्द्रवन नामक भारी जङ्गल है, उसको साफ करके वहाँ पर एक नया शहर बसाओ और वहीं पर तुम अपने भाइयोंके साथ राज्य करो। धर्मराज धर्मराज ही थे। उन्होंने इस बातको तुरन्त स्वीकार कर लिया; और इन्द्रवन को जलाकर, तथा साफ करके, वहाँ पर एक बड़ा भारी नगर बसाया। इसीको इन्द्रप्रस्थ अथवा खांडवप्रस्थ नाम दिया गया। महाभारतमें आदिपर्वके २०७ वें अध्यायमें इस नगरका बहुत ही सुंदर वर्णन किया गया है। उससे जान पड़ता है कि, यह नगरी पृथ्वी पर मानो एक इन्द्रनगरीके ही समान थी। उसमें बड़े बड़े मनोहर उद्यान, जलाशय, इत्यादि बने थे। भवनों की शोभा अत्यंत निराली थी। हाट, बाट, बाजार, चौक, इत्यादि अपनी सम्पत्ति और वैभवमें कुबेरपुरीको भी मात करते थे।

सारांश यह है कि, यह नगरी ऐसी सुंदर और विलक्षण थी कि, कौरवोंसे पांडवों द्वारा मांगे गये ग्रामोंमें उसको अग्रस्थान प्राप्त हुआ। पांडवोंने कौरवोंको यह समाचार भेजा था:—

इन्द्रप्रस्थं वृकप्रस्थं जयन्तं वारणावतम् ।
देहि मे चतुरो ग्रामान् पंचमं किंचिदेव तु ॥

अर्थात् इन्द्रप्रस्थ, वृकप्रस्थ, जयंत, वारणावत—ये चार गांव तो हमें अवश्य दो—फिर पाँचवाँ चाहे जौनसा दे दो। आखिर कौरवोंने पांडवोंको ये गांव न दिये। यही नहीं, किन्तु यहां तक कह दिया कि, हम तो तुम्हें उतनी मिट्टी भी न देंगे जितनी सुई की नोक पर भी आ सके। उसका परिणाम भारतीय युद्ध है।

इसी शहरमें पांडवोंने राजसूय यज्ञ सम्पन्न किया; और मयासुर की बनाई हुई विचित्र सभा इसी शहरमें थी। इस नगरीका नाम महाभारतमें अनेकों बार आया है। इसके अतिरिक्त अन्य चार प्रस्थ भी सिर्फ नाम मात्रके लिए मौजूद हैं। उनके स्थान दर्शकोंको दिखलाये जाते हैं। इन प्रस्थों अथवा पतोंके नाम इस प्रकार हैं:—पानीपत, सोनपत, तिलपत और बाघपत। ये सब दिल्लीके मैदानमें जमनाके पश्चिमी किनारे पर बसे हुए थे।

इन्द्रप्रस्थमें पांडवोंके समय की नगरीका अब कुछ भी अंश शेष नहीं रहा है। तथापि इस स्थानकी पवित्रता अभी तक मौजूद है; और श्रद्धालु हिन्दू जनोंकी दृष्टिसे जो अत्यन्त पूज्य क्षेत्र हैं उनमें वह अभी तक गिना जाता है। पद्मपुराणमें इन्द्रप्रस्थकी महिमाका वर्णन करते हुए कहा है:—

यमुना सर्वसुलभा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा।
इन्द्रप्रस्थे प्रयागे च सागरस्य च संगमे ॥

अर्थात् "यमुना सर्वत्र सुलभ है; परन्तु इन्द्रप्रस्थ, प्रयाग और समुद्र-संगम, इन तीन स्थलोंमें दुर्लभ है।" वहाँ पर यमुनाके किनारे

'निगमोद्बोध' नामक तीर्थ तो बहुत प्रसिद्ध है; और वहाँ यात्रीगण जाया करते हैं। इस तीर्थके अतिरिक्त यहाँ पर छोटे छोटे तीर्थ और देवता अनेक हैं।

दिल्ली शहरसे जब हम इन्द्रप्रस्थ देखनेके लिए जाते हैं, तब पहले हमें 'लाल-दरवाजा' नामक एक बहुत बड़ा प्राचीन दरवाजा मिलता है। यह शेरशाहकी राजधानीका एक प्रसिद्ध दरवाजा था। इस दरवाजेके सामनेकी ओर हुमायूँ बादशाहका बनवाया हुआ 'पुराना किला' देख पड़ता है। यही प्राचीन इन्द्रप्रस्थ है। इस किलेको हुमायूँ बादशाहने "दीने-पनाह" नाम दिया था। हुमायूँ जब इस किलेसे भाग गया, तब उसके प्रतिपक्षी शेरशाहने इस किलेका नाम शेरगढ़ अथवा शाहगढ़ रखा था। प्रथमतः सन् १५३३ ईस्वीमें हुमायूंने इस किलेको बनवाना शुरू किया; और फिर इसके सात वर्ष बाद शेरशाहने उसके आसपास उत्तम कोट बनवाकर उसको सुशोभित कर दिया। इस कोटका घेरा लगभग एक मीलका है। इस किलेके मध्यभागमें, यानी इन्द्रप्रस्थकी भूमिपर, अब राजमन्दिरों के सुवर्ण-कलश नहीं चमकते; बल्कि उस पुण्यभूमि पर अकिंचन जनोंकी पर्णकुटिकाएँ मात्र दृग्गोचर होती हैं!

इस किलेमें 'किलाकोना मसजिद' और 'शेरमन्दिल' नामकी दो प्राचीन दर्शनीय इमारतें हैं। इनमें पहली इमारत लाल रंग और संगमरमरके पत्थरकी बनी हुई है; और उसकी रचना बड़े कौशलकी है। यह पठान बादशाहोंके शासनकालमें, सन् १५४० ईस्वीमें तैयार हुई। शिल्प-कला-विशारदोंकी दृष्टिसे इसकी रचना बहुत श्रेष्ठ है; और हिन्दुस्तानकी शिल्पकलाके इतिहासके रच-

यिता मिस्टर फर्ग्युसनने इसकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की है। उन्होंने लिखा है कि, इटलीके निवासी, जिस तरह वेनिसके 'कँपनॉइल' नामक अत्युच्च राजमहलको अपनी राजसत्ता तथा विजयवैभवका दर्शक समझते थे, उसी प्रकार पठान लोग इस मसजिदके अत्युच्च मीनारको, प्रार्थनामन्दिरका सिर्फ एक भाग ही न मानकर, अपने अभ्युदय और राजसत्ताका कीर्तिस्तंभ मानते थे। उनका धर्मोपदेशक इस मीनार परसे सब लोगोंको, प्रार्थनामें सम्मिलित होनेके लिए, बड़े ताल-सुरसे, पुकारा करता था। उस समय बादशाहको भी अपना काम-काज छोड़कर महलोंसे शीघ्र ही वहाँ जाना पड़ता था। हुमायूँ बादशाह इस मसजिदके निकट शेरमन्दिल नामक राज-प्रासादमें रहा करता था। एक दिन नियमानुसार काजीजीने इस मीनार पर चढ़कर बादशाहको प्रार्थनाके लिए बुलाया। बादशाह उसी समय जल्दीमें उठकर दौड़ा, जिससे जीनेकी एक सीढ़ीसे उसका पैर फिसल पड़ा, उसे भयङ्कर चोट आई; और उसीमें सन् १५५६ ईस्वीके जनवरी महीनेकी २६ वीं तारीखको उसका अन्त हो गया!

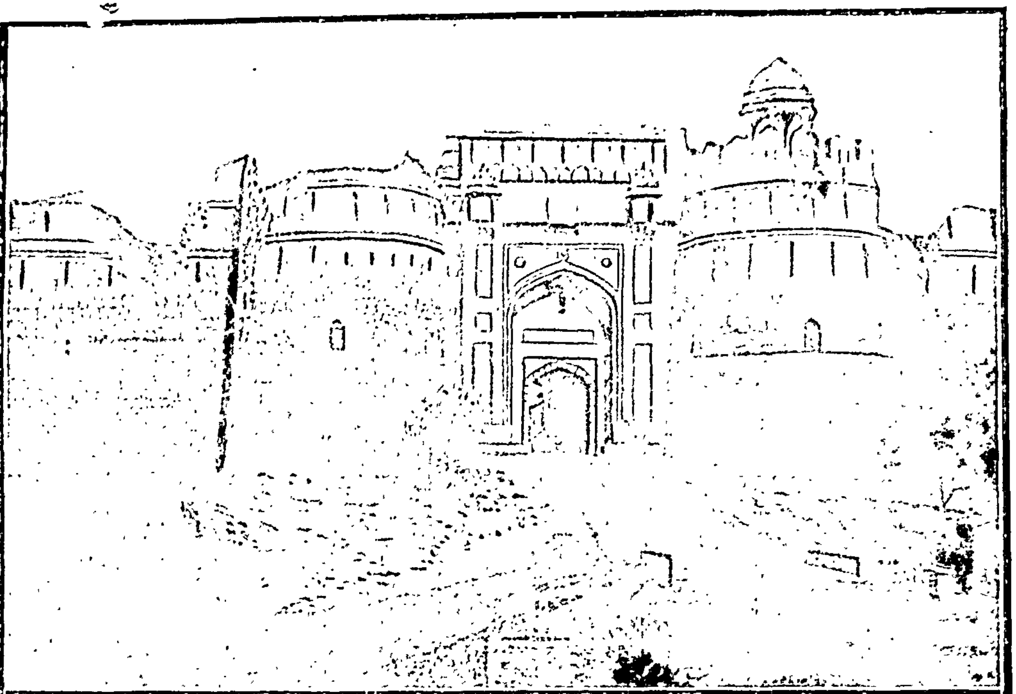
इन्द्रप्रस्थमें दिखाई देनेवाले उपर्युक्त मुसलमानी ऐतिहासिक स्थानोंको अवलोकन करनेसे दर्शकोंको एक प्रकारका उद्वेगजनक दृश्य दिखाई देता है। जहाँ खड़े होकर अर्जुनने अपने गाण्डीव धनुषसे इन्द्रप्रस्थ नगरीके कोटकी रक्षा की, वहाँ अब 'किलाकोना मसजिद' खड़ी हुई है! जिस महलमें भगवान् श्रीकृष्ण और पाँडवोंकी कल्याणकारी मंत्रणाएं हुआ करती थीं, उस महलके ठौर पर अब शेरमन्दिल अथवा शेरशाहका महल खड़ा है! इस महलके

सामने आजकल जो गिरी हुई जगह दिखाई दे रही है, उसी जगह राजसूय यज्ञका महोत्सव हुआ था, जिसका वृत्तान्त वहाँके लोग अब तक बतलाया करते हैं! निस्सन्देह, विचारशील पुरुषके लिए इन्द्रप्रस्थका यह घोर परिवर्तन अत्यन्त विलक्षण है! अहा! कालचक्रकी महिमा कितनी अगाध है, सो हमें इन्द्रप्रस्थ नगरीके इस विपर्यासले अच्छी तरह मालूम होती है। जहाँ अनेक प्रकार की राजनैतिक मंत्रणाएं हुईं, जहाँ अनेकों राज्य-क्रान्तियाँ हुईं, जहाँ लक्ष्मी मूर्तिमान् वास करती थी, जहाँके विषयमें कहा गया है कि:—

रम्याश्च विविधास्तत्र पुष्करिण्यावनावृताः।
तडागानि च रम्याणि बृहन्ति सुबहूनि च ॥ १ ॥

जहाँ रत्नोंका तेज चमकता था; और शस्त्रोंकी दिव्य ज्योति चमचमाती थी, वहाँ अब दो यवन-मन्दिर अपने गतवैभव पर शोक करते हुए खड़े हैं! दिल्लीका 'पुराना किला' अपने नामके अनुसार पुराना होकर शनैः शनैः विनाशको प्राप्त हो रहा है; और वहाँका सारा भूप्रदेश निर्जन होकर भयानक वन रहा है! अहा! उसकी यह दशा देखकर किसका हृदय दुःखसे न भर जायगा? अहा! किसी सहृदय आंग्ल कविने क्या ही अच्छा कहा है:—

"The Niobe of nations! There she stands,
Childless and crownless, in her voiceless woe,
An empty urn within her wither'd hands,
Whose holy dust was scatter'd long ago;
The *Pandawa's* tomb contains no ashes now;



पुराना क़िला।

The very sepulchres lie tenentless,
Of their heroic dwellers: dost thou flow,
Old *Jumna* ! through a marble wilderness ?
Rise, with thy *azure* waves, and mantle her distress."

अर्थात् हे दुखी राष्ट्र ! आज तू पुत्रहीन और राज्य-श्री-हीन वर्तमान है। आज तेरे अधिकार में कोई भी वस्तु नहीं है। तेरी पवित्र सम्पत्ति शताब्दियों पूर्व नष्ट हो चुकी। पांडवोंकी समाधिकी राख भी बाकी नहीं है। उनका अपना भवन निर्जन पड़ा है। वहाँके शूरवीर निवासियोंका पता भी नहीं है। हे बूढ़ी जमना ! क्या आज तू जनशून्य संगमरमर की पहाड़ियोंमें बहती है ? उठ, खड़ी हो; और इसके दुखोंको दूर कर !



पांचवां प्रकरण

दिल्लीके आसपासके स्थान

हुमायूँका मकबरा

इन्द्रप्रस्थ नगरी अथवा पुराने किलेका अवलोकन करनेके बाद यात्रीगण बहुधा हुमायूँ बादशाहकी कबर देखनेकेलिए आते हैं। उस स्थलसे यह एक मीलके अन्तर पर है। वहाँसे इधर आते हुए बीच में 'लाल बंगला' नामकी एक इमारत मिलती है। यहाँ पर हुमायूँ और शाहआलम बादशाहकी रानियोंकी कबरें हैं। फिर 'अरबकी सराय' नामकी एक छोटीसी बस्ती है। इसके दो दरवाजे दर्शनीय हैं। इस गांवको हुमायूँ बादशाहकी पत्नीने बसाया था। यहाँ पर अरब लोग रहा करते थे। इसी लिए इस स्थानका 'अरबकी सराय' नाम पड़ा है। यहाँसे हुमायूँ बादशाहकी कबर बिलकुल समीप है।

इस मकबरेमें प्रवेश करते समय दूसरे दरवाजेके पास एक लेख देख पड़ता है। उससे यह मालूम होता है कि, इस इमारतको हमीदा बानू बेगम, उर्फ हाजी बेगम नामक हुमायूँ बादशाहकी रानीने, अपने पतिके स्मारकमें, बनवाया। इस इमारतका काम सोलह वर्ष तक जारी रहा; और इसके बनवानेमें पन्द्रह लाख रुपया खर्च हुआ। स्वयं हमीदा बानू बेगम और राजघरानेके अन्य कई-

एक पुरुषोंकी कब्रें भी यहीं पर हैं। यह इमारत मुगल बादशाहत की बिलकुल प्रारम्भिक शिल्प-कलाका नमूना है। यह इमारत चौकोन है, और इसके चारों ओर अठपहलू कोने हैं। इसका मध्यभाग अठपहलू है; और उसपर एक अर्धगोलाकृति शिखर, अथवा गुम्बज है। उसके चारों ओर चार अठपहलू मीनार हैं। इस इमारत का ढांचा अत्यन्त उत्तम है; और इसीके नमूने पर आगरे का ताजमहल बना है। इस इमारतमें और ताजमहलमें इतना अन्तर है, जितना एक ग्रामीण स्त्री और एक राजकुलकी रूप-ऐश्वर्य्य-संपन्न भुवनसुन्दरीमें होता है। ताजमहलमें जो कल्पना-शक्ति, कवित्व और प्रतिभा है, वह इसमें बिलकुल ही नहीं है। तो भी यह कबर बहुत अच्छी है; और अपनी सादगीसे ही दर्शकों के चित्तको आकर्षित करती है।

हुमायूँ बादशाहकी कबरकी सादगीमें भी एक प्रकारका कौतुक है। अर्थात् वह सादगी अत्यन्त मनोरम और दर्शनीय है। सिकन्दरामें अकबरकी कबर और शहादरामें जहाँगीरकी कबर भी सादगीमें प्रसिद्ध है। परन्तु उनकी सादगीकी अपेक्षा इस इमारत की सादगी अधिक मनोहारी है। इस इमारतमें भी ठौर ठौर पर संगमरमरका काम किया गया है। उससे इमारतकी शोभा और भी बढ़ गई है। पठान बादशाहोंने जो इमारतें बनवाईं उनमेंसे कुतुबमीनारको छोड़कर, बाकी सब इमारतें, इस मुगल शिल्पकलाके पहले कामके आगे, रद हो जाती हैं। कनिंगहम साहबका कथन है कि, इस इमारतके शिल्प-कार्यमें प्राचीन शिल्प-कार्यकी अपेक्षा कुछ अधिक नवीन सुधार हुए हैं। वे सुधार ये हैं कि मूल

इमारतके चारों कोनों पर चार सुन्दर मीनारोंकी इसमें कल्पना की गई है; और इमारतके गुम्बजोंकी बैठक चौड़ी नहीं की गई है। यह इमारत बहुत साफ और बड़ी है, अतएव दूरसे बहुत सुन्दर दिखाई देती है; परन्तु ताजमहल जैसा साफ और हवादार है, वैसी यह नहीं है।

ऊपर कहा है कि, हुमायूँ बादशाहकी प्रिय पत्नी, महा-प्रतापी अकबर बादशाहकी माता, हमीदा बानू बेगमने इस कबरको बनवाया और उसकी क़बर भी इसी इमारतमें है। इस बेगमका अपने पति पर बड़ा प्रेम था; और इसलिए दर्शकोंकी दृष्टिमें मानों वह यहां अपने पतिके सन्निध अब भी बराबर निवास करती है!

इसी इमारत में दारा, फर्रुखशियर, रफीउद्दौला, दूसरे आलमगीर, इत्यादि बादशाहोंकी कबरें हैं। इन सबमें सिर्फ हुमायूँ बादशाहकी क़बर ही विशेष हृदयाकर्षक दिखाई देती है। शेष कबरें उन बादशाहोंकी योग्यताको देखते हुए बिलकुल ही साधारण हैं। सच है, जिन्होंने कुछ भी सुकर्म्म नहीं किये, जिनके शासनमें प्रजाका कल्याण नहीं हुआ, अथवा जिन्होंने दूसरोंके साथ थोड़ा भी उपकार नहीं किया, उनके स्मारक यदि धुँधले हों, तो इसमें कोई आश्चर्य्य नहीं है।

शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह

दिल्लीमें शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह बहुत प्रसिद्ध है। शेख निजामुद्दीन औलिया मुहम्मद तुगलकके ज़मानेमें, सन् १३२१ ईसवीके लगभग, एक नामी साधु पुरुष हो गया है। यह महापुरुष

अपने महान् साधुत्वके लिए प्रसिद्ध है। यह फरीदुद्दीन गुंजशकर नामक एक सुप्रसिद्ध औलियाका चेला था। गुंजशक्कर औलिया बड़ा अलौकिक पुरुष था। कहते हैं कि, यह साधु मंत्रके जोर पर मिट्टीके ढेलेकी शक्कर बना देता था। इसकी गुरु-परम्परा अजमेरके मुईनुद्दीन चिश्ती नामक प्रसिद्ध साधु तक पहुँचती है। मुईनुद्दीन चिश्ती अजमेरमें मुसलमानोंका अत्यन्त वंद्य और परमपूज्य साधु था। यह परम्परासे निजामुद्दीनका चेला था। इसलिए लोगोंको इसमें बड़ी श्रद्धा थी। शेख निजामुद्दीन औलिया बड़ा दानशूर था; और उसका खर्च किसी राजासे भी अधिक रहा करता था। चाहे इस कारणसे हो कि, लोगों पर इसका बड़ा प्रभाव था; और चाहे अन्य किन्हीं कारणोंसे हो, तुगलक बादशाह इससे बहुत द्वेष करता था। इसलिए दिल्ली जाकर इस औलियाके महत्वको सदाके लिए नष्ट कर देनेका उसने मनसूबा बाँधा। औलियाके शिष्योंको जब यह मालूम हुआ कि, बादशाह अपनी बड़ी भारी सेनाके साथ हमारे गुरुजी पर आक्रमण करनेके लिये आ रहा है, तब वे गुरुजीके पास गये; और हाथ जोड़कर बोले, "महाराज, बादशाह आपसे नाराज है; और वह आप पर चढ़ाई करनेके लिए आ रहा है; अतएव आप शीघ्र ही दिल्लीको छोड़ दीजिए।" इस पर इस औलियाने अत्यन्त शान्ति के साथ उत्तर दिया कि, "दिल्ली दूर अस्त"—यानी दिल्ली अभी बहुत दूर है। जब बादशाह दिल्ली आ जायगा, तब देखा जायगा। चमत्कार यह हुआ कि, बादशाह दिल्ली आ ही न पाया। उसके दिल्ली आनेके पहले ही उसके पुत्रने उसका वध कर डाला! भावुक और

श्रद्धालु जनोंकी समझ है कि, बादशाह इस साधु पुरुषके प्राण हरण करनेकी दुष्ट बुद्धिसे आ रहा था, इसी लिए उसको यह प्रायश्चित्त मिला। स्लीमन साहबकी राय है कि, यह साधु ठगों का नेता था; और उसीकी सम्मति से बादशाह का खून हुआ। जो हो, इसमें सन्देह नहीं कि, अब तक इस साधुके विषयमें लोगोंकी असीम श्रद्धा है; और उनकी दृष्टि से वह बड़ा पूज्य है। इस साधुके कहे हुए 'दिल्ली दूर अस्त' ये शब्द आजकल इस कहावतके रूपमें बदल गये हैं कि, "दिल्ली दूर है।" अँगरेजीमें भी इसी अर्थकी एक कहावत है। वह यह है:—

'There is many a slip between the cup and the lip.'

अस्तु। यह साधु सन् १३२४ ईस्वीमें, लगभग ब्यानवे वर्ष का होकर, परलोक सिधारा। इसी साधुकी कबर पर यह दरगाह बनी हुई है; इस लिए इसको निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह कहते हैं। यह दरगाह भी दिल्लीमें एक दर्शनीय स्थान है।

निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके पास एक छोटासा गांव बसा हुआ है, जहां प्रति वर्ष एक बड़ा भारी मेला हुआ करता है। दरगाहके प्रवेश-द्वार पर सन् १३७८ का सन् खुदा हुआ है। इस को फीरोजशाह तुगलकने बनवाया। इसके पास एक छोटासा तालाब है, जो बहुत पुराना है। लोगोंका कहना है कि इस औलियाके शापसे उसका पानी खारा हो गया है।

मुख्य दरवाजेसे अन्दर जानेपर कुछ छोटी छोटी कबरें और मसजिदें मिलती हैं। वहीं पर शाहजहाँ बादशाहकी पटरानी कोकिलादेवी (बाई) की कब्र है। यह कब्र बड़ी सुन्दर है।

यहाँ पर पास ही एक बावड़ा है। उसका नाम 'चश्मे-दिल-खुश' है।

इस बावड़ी पर हिजरी सन् ७१३, यानी ईस्वी सन् १३१२ खुदा है। यहाँ पानीमें एक मेहराब है। कहते हैं कि, उसके द्वारा मुँहारेके अंदर पानी ले गये हैं। अस्तु। वहाँसे फिर दो दरवाजे मिलते हैं। उनसे जानेके बाद भीतर मुख्य दरवाजा मिलता है। यह इमारत दूर से बहुत ही सुंदर दिखाई देती है। इसकी मेहरावें, उनकी नकाशी और मुख्य गुम्बज, सभी बहुत उत्तम हैं। यह इमारत बिलकुल मुसलमानोंके ताजियोंके समान है। इसके बीचोंबीच निजामुद्दीन औलियाकी मुख्य कबर है। यह कबर बहुत पुरानी है; और उसकी इमारत कुछ अकबरके जमाने में और कुछ शाहजहांके जमानेमें बनाई गई। यहाँकी मुख्य कबर पर जरीके कीमती वस्त्र और पुष्पमालाएं चढ़ाते हैं; और बहुतसे मुसलमान भक्तिपूर्वक वहां पर दान-धर्म करते हैं। यहाँ पर औरङ्गज़ेब बादशाहने मजलिसखाना नामका एक महल बनाया है। इस इमारत पर कोई विशेष लेख खुदा हुआ नज़र नहीं आता। परन्तु दो स्थानों पर "किब्लेगाह-ए-खास-ओ-आम" (सब लोगोंके लिए प्रार्थना का स्थान) और "कबर-ए-शेख" (साधुकी कबर) लिखा है। यहांका वार्षिक उत्सव देखने लायक होता है।

निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके पास ही जमातखाना मसजिद नामकी एक दूसरी इमारत है। यह भी बड़ी सुन्दर और दर्शनीय है। कहते हैं कि, इसको खिजरखांने बनवाया था। यहांकी कारीगरी भी बहुत उत्तम है। इस इमारत के दरवाजे पर हिन्दू

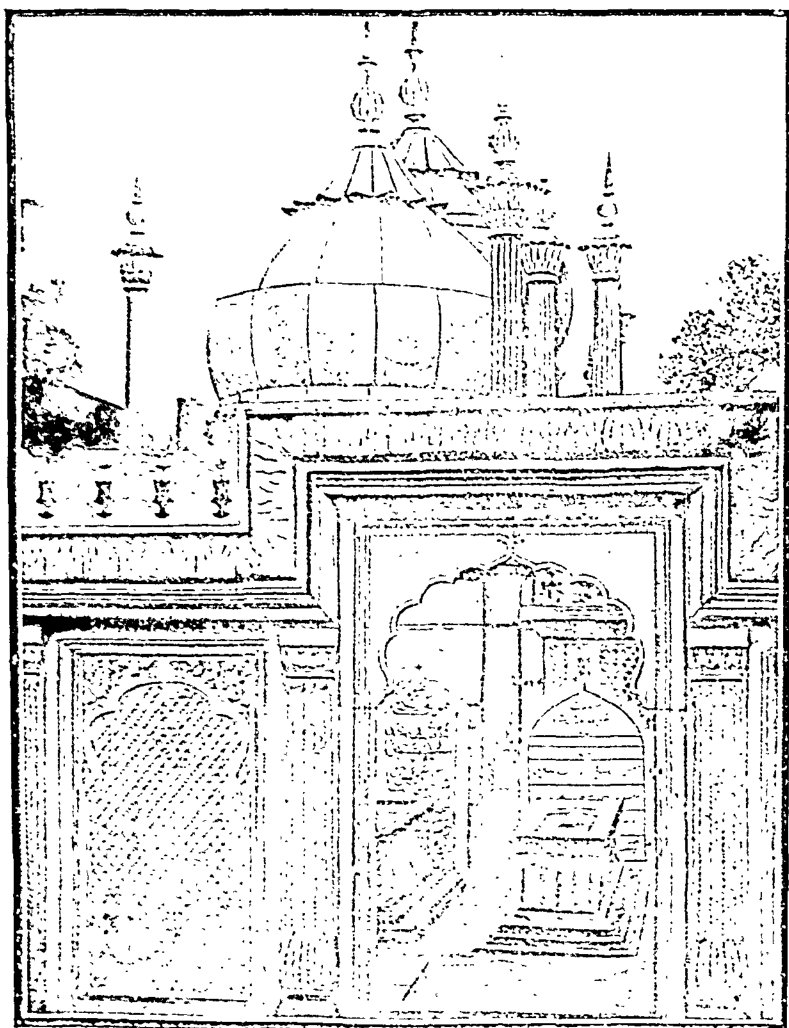
देवताओंकी भी मूर्तियाँ हैं। इमारतके मध्यभागमें एक सोनेका प्याला टंगा हुआ है। कहते हैं कि, यह बहुत पुराना है।

जहानारा बेगमकी कबर

शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके दक्षिणमें कई बड़े बड़े लोग तथा राजकुलके नरनारियोंकी कबरें हैं। इन कबरोंमें शाहजहाँ बादशाहकी प्यारी बेटी जहानारा बेगम की कबर है। यह बड़ी पितृ-भक्त थी; और शाहजहाँके कैदमें रहते समय बराबर अन्त तक उसकी सेवामें रही। इसकी कबर बिलकुल सादी है; और उसपर कोई आच्छादन नहीं है, प्रत्युत, उसके मध्य-भागमें दूब लगानेके लिए जगह छोड़ दी गई है। इस कबरका मुख्य पत्थर छै फुट लम्बा है; और उसके ऊपर अरबी भाषामें "परमेश्वर ही जीवन और परमेश्वर ही पुनर्जन्म" लिखा है। उसके नीचे कुरानका साङ्केतिक अक्षर 'मिम्' लिखा है। उसके नीचे फारसी भाषामें निम्नलिखित अर्थका मजमून है :—

"Save the green herb, place naught above m
head,
Such pall alone befits the lowly dead;
The fleeting poor Jehanarah lies here
Her sire was Shah Jahan and Chist her Pir,
My God the Ghazi monarch's proof mak
clear."

अर्थात् "सिवा हरी दूबके मेरे ऊपर—अर्थात् मेरी समाधि प
और कुछ न रखना। खाकसारके लिए यही काफी है। नश्वर औ
ीब जहानारा यहाँ निवास करती है। उसके पितृ शाहजहाँ औ



जहाँनारा का मक़बरा ।

गुरु चिश्ती थे। परमात्मा राजा के प्रमाणको और भी सिद्ध करे।" इस राजकन्याकी यह लीनता और रसिकता देखकर दर्शकोंको 'विनयो हि सतिव्रतम्' वाली उक्तिका स्मरण हो आता है; और वे क्षणभरके लिए कौतूहलसागरमें निमग्न होजाते हैं। इस कबरपर दिये गये सन्से जान पड़ता है कि, यह सन् १६८१ ईसवीमें बनाई गई।

जहानाराकी कब्रके बाईं ओर शाहआलम बादशाहके लड़के मिर्जा अलीगोर, और दाहनी ओर अकबरशाहकी दूसरी बेटी जमीलुन्निसां की कबर है। इन कबरोंके पास, पूर्व ओर मुहम्मदशाह बादशाहकी कबर है। यह अभागी बादशाह सन् १७४८ ईसवीमें मृत्युको प्राप्त हुआ। मयूरसिंहासन पर बैठनेवाला अन्तिम बाद-शाह यही था। इसकी कबरके पास उसकी बेटीकी कबर है, जो नादिरशाहके बेटेको ब्याही थी। इस कब्रका प्रवेशद्वार संगमरमर का बना है; और उसपर बेलबूटोंका काम बहुत बढ़िया किया गया है। इसके नजदीक एक तीसरी कबर है, जो दूसरे अकबरशाहके लड़के शाहजादा जहाँगीर की है। यह लड़का पागल था। इसने दिल्लीके रेजीडेन्ट मिस्टर सेटन पर गोली चलाई थी, जिससे इसको इलाहाबादमें लाकर कैद किया था।

खुसरो कविकी कबर।

इन स्थानोंको देखनेके बाद, मुख्य आँगनमें आने पर, 'चबूतरा-यारानी' और खुसरो कविकी कबर, ये दो रमणीय स्थल दृष्टि पड़ते हैं। इनके सिवा, वहाँ पर और भी अनेक साधु-सन्तोंकी

कबर हैं। "चबूतरा-यारानी" पर निजामुद्दीन औलिया और उसके मित्र लोग बैठा करते थे। इसी लिए उसको 'मित्रोंका चबूतरा' नाम प्राप्त हो गया है। अमीर खुसरू हिन्दुस्तानका एक विख्यात कवि था। उसकी मधुर कविताके कारण उसे "मधुरभाषी तोता" नाम प्राप्त हुआ था। उसकी कबर पर 'अद्वीम्-उल-मिसल' यानी 'अद्वितीय पुरुष' ये शब्द भी लिखे हैं। इस नामसे फारसी भाषामें हिजरी सन् ७२५ सिद्ध होता है। यह उसकी मृत्युका सन् (१३२४ ईसवी) है। अमीर खुसरो निजामुद्दीनका प्रिय मित्र था। इसने मुहम्मद तुगलकके राजमहलमें चारों ओर भ्रमण करके अनेक प्रासादिक पद्य तैयार किये हैं। कवितादेवी उसपर पूर्ण प्रसन्न थी। तुगलक बादशाहके राजमहलमें गुजरातके राजाकी देवलदेवी नामकी एक लावण्यवती कन्या थी। कहते हैं कि, यही इस कविकी कवित्व-स्फूर्तिका मुख्य कारण है।

कहते हैं कि, इस सौन्दर्य्य-लतिका पर उसने बहुत सुन्दर कविताएँ बनाई हैं। इसकी कविताएँ बहुत प्रेमपूर्ण और मधुर हैं; और अब तक लोगोंके मुँहसे सुनी जाती हैं। हिन्दुस्तानमें अनेकों कवि हो गये हैं; और उनके काव्योंने उनकी कीर्तिको अमर कर दिया है; परन्तु उनकी कबरें या समाधियाँ बहुत ही कम दिखाई देती हैं। गीतगोविन्दके रचयिता कवि जयदेवकी समाधि पूर्व-प्रान्तमें सुनी जाती है; और कवि खुसरोकी कबर दिल्लीमें प्रत्यक्ष देखी जाती है। इनके सिवाय हिन्दुस्तान के कवियोंके स्मारक-मन्दिर और कहीं भी नहीं पाये जाते। एक संस्कृत कविका सुभाषित है :—

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशःकाये जरामरणजं भयम्॥

अर्थात् उन रससिद्ध सुकृती कविश्वरों की जय हो, कि जिनके यशरूपी शरीरके लिए जरा और मरणका कभी भय नहीं है।

परन्तु इससे यह नहीं कहा जा सकता कि, हमारे कवियोंके लिए किसी प्रकारके स्मारककी आवश्यकता नहीं है। संस्कृत कवि कालिदास, भवभूति, दंडी, बाण अथवा हिन्दी कवि तुलसीदास, सूरदास, केशवदास, बिहारी, इत्यादिके नाम पर यदि आज कोई स्मारक होते, तो उनसे दर्शकोंको निस्सन्देह बहुत आनन्द होता। आज भी दिल्ली में अमीर खुसरोकी मनोरम कबर देखनेसे जान पड़ता है कि, जैसे उसकी सुन्दरता दर्शकोंको, इस कविके काव्य-माधुर्यका स्मरण दिलानेके लिए, बुला रही है; और स्वयं कबरके भीतरी मंडपमें जाने पर ऐसा भास होता है कि, मानो इससे निकलनेवाली मंजुल प्रतिध्वनि किसी संस्कृत कविकी वाणीमें यह कह रही है कि:—

वाणी ममैव सरसा यदि रंजयित्री
न प्रार्थये रसविदामवधानदानम्।
सायंतनीषु मकरन्दवतीषु भृंगाः
किं मल्लिकासु परमंत्रणमारभन्ते॥

अर्थात् मेरी कवितामें यदि रस है; और पढ़नेवालेको यदि उससे आनन्द होता है, तो मैं रसिक लोगोंसे उसकी तरफ़ ध्यान देनेकी प्रार्थना नहीं करता। सायंकालको भौंरा पुष्परस से भरी हुई मल्लिकाकी तरफ आनेके लिए क्या किसीकी सलाह लेता है?

अस्तु। कवि खुसरोकी कबरका दर्शन करके बाहर आनेके बाद थोड़ी ही दूर पर दौरानखां और आजमखाँ नामक दो प्रसिद्ध पुरुषोंकी कबरें हैं। इनके बाद वहाँ दो फुटके अन्तर पर 'चौंसठ खम्भा' नामक एक दरगाह मिलती है। इस इमारतमें चौंसठ खम्भे हैं। इसीलिए इसको 'चौंसठ खंभा' नाम प्राप्त हुआ है। इसकी बनावट और रचना शाहजहाँके समयकी इमारतोंके समान सुन्दर और मनोहारी है। इसे देखनेसे जान पड़ता है कि, मानों यह इमारत 'दीवान-ए खास' नामक सौन्दर्य्य-मन्दिरका पहलेका नमूना ही है। इस इमारतमें सब जगह बढ़िया संगमरमरका काम किया हुआ है। इसका आकार चौरस है। इस इमारतमें अकबर बादशाहके सेनापतिके लड़के अजीमखांकी कबर है। यह अजीमखाँ गुजरातका गवर्नर था। यह प्राचीन धर्म्मका कट्टर अभिमानी था। अतएव इसको अकबर बादशाहका नवीन धार्मिक सुधार पसन्द नहीं था। परन्तु अकबरने कभी उससे किसी प्रकार का आग्रह नहीं किया; और उसको उसके ही मतानुसार चलने दिया। यह मनुष्य बड़ा धर्मात्मा था; और गरीब-गुरबों-को सर्वदा अन्नदान किया करता, तथा मुहरें बाँटा करता था। इसलिए उसके विषयमें दिल्लीके गरीब लोगोंमें इस अर्थकी एक कहावत प्रचलित हो रही है कि, "परोपकारी अजीमखां गरीबोंको सिर्फ़ भोजन ही नहीं देता; किन्तु साथही दक्षिणा भी देता है।" निस्सन्देह, जो सज्जन अपने धनका उपयोग परोपकारमें करते हैं, उनकी कीर्ति अजरामर हो जाती है।

सफदर-जङ्गका मकबरा

हुमायूँ बादशाहकी कबरसे अन्त तक जो रास्ता जाता है, उसके सिरे पर नवाब मनसूरखां उर्फ सफदरजंगकी कबर है। नवाब सफदरजङ्ग दिल्लीकी राजनीतिका एक प्रसिद्ध सूत्रधार था; और अयोध्याके पहले नवाब सआदतखांके बाद उसकी गद्दीका स्वामी हुआ। यह दिल्ली के बादशाह अहमदशाहका प्रधान मंत्री था। अतएव दिल्लीके राजनैतिक मामलोंमें इसका मुख्य हाथ रहता था। सन् १७५३ ईसवीमें दिल्लीमें इसकी मृत्यु हुई। उसकी यह कबर उसके पुत्र, अयोध्याके तीसरे नवाब सुजाउद्दौलाने, तीन लाख रुपये खर्च करके, बनवाई है। इस इमारतमें सफदरजङ्ग के साथ उसकी बेगमकी भी कबर है। इस कबरकी रचना ताजमहलके नमूने पर की गई है; और इसके मध्य-भागमें संग-मरमरका काम, तथा उसमें लालरंगकी कारीगरी बहुत शोभाय-मान देख पड़ती है। इस इमारतके चारों कोने जितने सुन्दर होने चाहिएं, उतने सुन्दर नहीं हैं—तोभी, इसमें सन्देह नहीं, कुल मसजिद दर्शनीय है। इस इमारतके ऊपर चढ़कर देखनेसे आसपासका दृश्य बहुत ही मनोहर दिखाई देता है। यह इमारत ९९ फीट ऊँची है।

सफदरजंगके मकबरेसे कुछ अन्तर पर एक मार्ग जाता है। वहाँ 'हौज-ए-खास' नामका एक स्थान है। यहाँ पर पहले सुलतान अलाउद्दीन खिलजीके समयका एक प्राचीन तालाब था। वहाँ फीरोजशाह तुगलकने सन् १३५४ ईसवीमें एक विद्या-मन्दिर बनवाया था, जिसमें यूसुफ-बिन-फजल-हुसेनी

अस्तु। कवि खुसरोकी कब्रका दर्शन करके बाहर आनेके बाद थोड़ी ही दूर पर दौरानखां और आजमखाँ नामक दो प्रसिद्ध पुरुषोंकी कबरें हैं। इनके बाद वहाँ दो फुटके अन्तर पर 'चौंसठ खम्भा' नामक एक दरगाह मिलती है। इस इमारतमें चौंसठ खम्भे हैं। इसीलिए इसको 'चौंसठ खंभा' नाम प्राप्त हुआ है। इसकी बनावट और रचना शाहजहाँके समयकी इमारतोंके समान सुन्दर और मनोहारी है। इसे देखनेसे जान पड़ता है कि, मानों यह इमारत 'दीवान-ए खास' नामक सौन्दर्य्य-मन्दिरका पहलेका नमूना ही है। इस इमारतमें सब जगह बढ़िया संगमरमरका काम किया हुआ है। इसका आकार चौरस है। इस इमारतमें अकबर बादशाहके सेनापतिके लड़के अजीमखांकी कबर है। यह अजीमखाँ गुजरातका गवर्नर था। यह प्राचीन धर्म्मका कट्टर अभिमानी था। अतएव इसको अकबर बादशाहका नवीन धार्मिक सुधार पसन्द नहीं था। परन्तु अकबरने कभी उससे किसी प्रकार का आग्रह नहीं किया; और उसको उसके ही मतानुसार चलने दिया। यह मनुष्य बड़ा धर्मात्मा था; और गरीब-गुरबों-को सर्वदा अन्नदान किया करता, तथा मुहरें बाँटा करता था। इसलिए उसके विषयमें दिल्लीके गरीब लोगोंमें इस अर्थकी एक कहावत प्रचलित हो रही है कि, "परोपकारी अजीमखां गरीबोंको सिर्फ़ भोजन ही नहीं देता; किन्तु साथही दक्षिणा भी देता है।" निस्सन्देह, जो सज्जन अपने धनका उपयोग परोपकारमें करते हैं, उनकी कीर्ति अजरामर हो जाती है।

सफदर-जङ्गका मकबरा

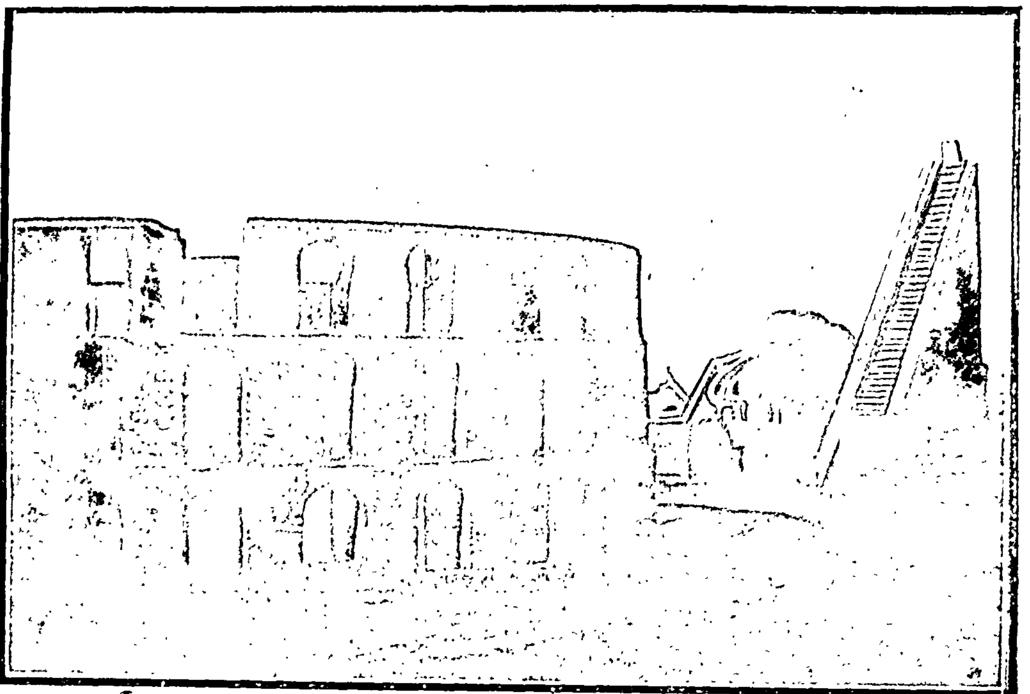
हुमायूँ बादशाहकी कबरसे अन्त तक जो रास्ता जाता है, उसके सिरे पर नवाब मनसूरखां उर्फ सफदरजंगकी कबर है। नवाब सफदरजङ्ग दिल्लीकी राजनीतिका एक प्रसिद्ध सूत्रधार था; और अयोध्याके पहले नवाब सआदतखांके बाद उसकी गद्दीका स्वामी हुआ। यह दिल्ली के बादशाह अहमदशाहका प्रधान मंत्री था। अतएव दिल्लीके राजनैतिक मामलोंमें इसका मुख्य हाथ रहता था। सन् १७५३ ईसवीमें दिल्लीमें इसकी मृत्यु हुई। उसकी यह कबर उसके पुत्र, अयोध्याके तीसरे नवाब सुजाउद्दौलाने, तीन लाख रुपये खर्च करके, बनवाई है। इस इमारतमें सफदरजङ्ग के साथ उसकी बेगमकी भी कबर है। इस कबरकी रचना ताजमहलके नमूने पर की गई है; और इसके मध्य-भागमें संग-मरमरका काम, तथा उसमें लालरंगकी कारीगरी बहुत शोभाय-मान देख पड़ती है। इस इमारतके चारों कोने जितने सुन्दर होने चाहिएं, उतने सुन्दर नहीं हैं—तोभी, इसमें सन्देह नहीं, कुल मसजिद दर्शनीय है। इस इमारतके ऊपर चढ़कर देखनेसे आसपासका दृश्य बहुत ही मनोहर दिखाई देता है। यह इमारत ९९ फीट ऊँची है।

सफदरजंगके मकबरेसे कुछ अन्तर पर एक मार्ग जाता है। वहाँ 'हौज-ए-खास' नामका एक स्थान है। यहाँ पर पहले सुलतान अलाउद्दीन खिलजीके समयका एक प्राचीन तालाब था। वहाँ फीरोजशाह तुगलकने सन् १३५४ ईसवीमें एक विद्या-मन्दिर बनवाया था, जिसमें यूसुफ-बिन-फजल-हुसेनी

नामके एक विद्वान् पुरुषको अध्यापक नियत किया था। उसकी कवर अभी तक वहाँपर मौजूद है। उसके पास ही फीरोजशाहका मकवरा है। यह बादशाह सन् १३८८ ईसवीमें मृत्युको प्राप्त हुआ। अवश्य ही, यह कब्र उसके बाद बनाई गई है।

राजा जयसिंहकी वेधशाला

सफदरजंगके मकवरेसे पाँच मीलकी दूरीपर कुतुबमीनारकी इमारत है। यहाँसे 'अजमेरगेट' की ओर दूसरी सड़क जाती है। उसके दरमियानमें जयपुरके राजा जयसिंहकी वेधशाला है। यह अत्यन्त दर्शनीय है; और उस विद्वान् तथा ज्योतिष-शास्त्रविशारद राजाका एक उत्तम स्मारक है। राजा सवाई जयसिंह हिन्दुस्तानके इतिहासमें एक अद्वितीय रत्न था। यह राजा राजनीति, रणभूमि और पंडितोंकी सभामें एकसा चमकता था। वर्तमान जयपुर नगर इसी राजा ने बनवाया; और वहाँपर अपनी राजधानी नियत की। दिल्लीके दरबारमें इसका अच्छा प्रभाव था; और मराठोंको "चौथ" तथा "सरदेशमुखी" की सनदें दिलाने तथा उनके हितसाधन करनेका अधिकांश श्रेय इसीको है। बड़े बाजीराव पेशवाको मालवेकी सूबेदारी इसीने प्राप्त करा दी थी। इसने ज्योतिष-शास्त्रका अच्छा अध्ययन किया था; और उसके लिए उसने दिल्ली, उज्जैन, काशी, इत्यादि स्थानोंपर वेधशालाएँ बनाई हैं। 'कल्पद्रुम' इत्यादि इसके कुछ ग्रन्थ भी प्रसिद्ध हैं। ऐसे बहुगुणसम्पन्न राजाकी इस वेधशालाको देखकर प्रत्येक दर्शक



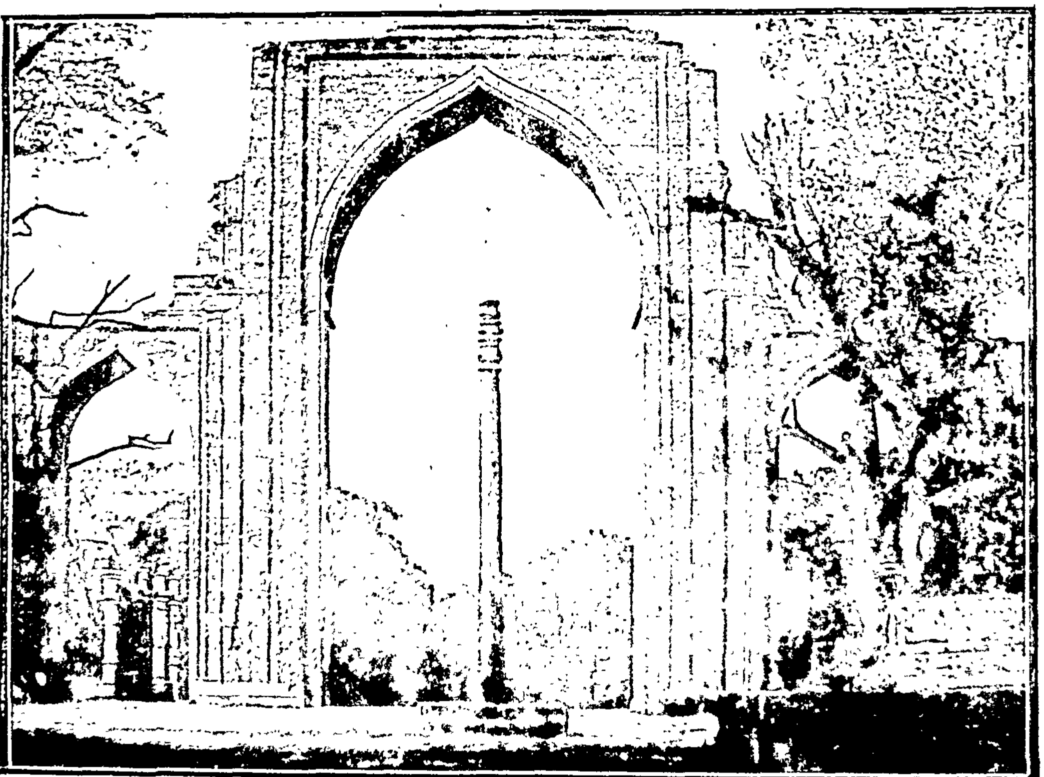
वेध-शाला ।

के हृदयमें आनन्दकी लहरें उमड़ने लगती हैं; और उसकी गुणग्राहकता पर बड़ा कौतूहल होता है।

दिल्लीकी यह वेधशाला अभी तक अस्तित्वमें है। उसका असली नाम 'साम्राट्-यन्त्र' है। परन्तु यह नाम उच्चार करनेमें कठिन मालूम होता है। इसलिए आजकल इसको "जंतर-मंतर" कहते हैं। यह वेधशाला सन् १७२४ ईसवीमें बनवाई गई। ग्रहोंका वेध लेनेके लिए जो शंकुयंत्र तैयार किया गया है, वह जीनेके आकारका है। उसका कर्ण ११८ फुट ५ इंच है। आधार उसका १०४ फुट और लम्ब ५६ फुट ७ इंच है। परन्तु अब यह इमारत बहुत खराब होगई है। इस इमारतके पास एक छायायंत्र बनाया गया है। यह इमारत रोमन लोगोंके नाटकगृहके समान वृत्ताकार है; और उसके बीचमें एक जीना है, जो बराबर छत तक चला गया है। चारों ओर, क्षितिज से एक बिन्दु में आनेवाली, अर्धवृत्ताकार मेहराबें बनी हुई हैं। ये वेधशालाकी याम्योत्तर रेषामें एक विशिष्ट अन्तर पर हैं; और बगलकी याम्योत्तर रेषा दिखलाती हैं। ज्योतिष-शास्त्रज्ञोंको वेध लेनेके लिए जिन जिन शास्त्रीय साधनोंकी आवश्यकता होती है, उन सबका यहां अच्छी तरह प्रबन्ध किया गया है। यहाँ पर त्रिकोण और उसके अंश बहुत अच्छी तरह लगा रखे हैं, जिनसे दिनका काल-मापन ठीक ठीक होता है; और घटिकाओं तथा पलोंका भी ठीक ठीक बोध हो जाता है। इस प्रकारके दो छायायंत्र पास ही पास हैं। इससे जान पड़ता है कि, एकके मापनकी परीक्षा दूसरे में की जाती होगी। इस वेध-शालासे, उसके रचयिताकी विशाल

बुद्धि और ज्योतिषशास्त्रपारंगतताका अच्छा अनुमान होता है। राजा जयसिंहके बाद इस वेधशालाका वैसा उपयोग करनेवाला और कोई मनुष्य नहीं निकला; और इसी कारण इस वेधशालाकी बड़ी दुर्दशा हो रही है। तथापि जो जो विद्वान् पुरुष दिल्लीमें जाते हैं और इस छायाचित्र तथा वेधशालाका दर्शन करते हैं, वे राजा सवाई जयसिंहकी तारीफ किये विना नहीं रहते। वर्तमान समयमें यह इमारत, और उसके पासका माधवगंज नामक गांव, सवाई जयसिंहके वंशज, जयपुर-रियासत के वर्तमान अधिपति, के अधिकारमें है। आशा है, आप अपने पूर्वजोंके इस अत्युत्तम स्मारकको सुरक्षित रखेंगे। क्योंकि अपने पूर्वजोंकी कृतिकी रक्षा करना भी एक पवित्र कार्य है।





लोह-स्तम्भ ।

छठा प्रकरण

हिन्दू राजाओंके प्राचीन स्मारक

लोहस्तम्भ

जब हम कुतुबमीनार देखनेके लिए जाते हैं; तब वहाँके विस्तीर्ण भूप्रदेश पर हमें अनेक प्राचीन और जीर्ण किले, कोट और इमारतें दिखाई देने लगती हैं। ये सब उस समयके प्राचीन स्मारक-चिन्ह हैं, जब कि दिल्लीमें हिन्दू राजाओंकी स्वतंत्र राज्यसत्ता और राज्यवैभव मौजूद था। अब इसमें कुछ भी सन्देह नहीं रहा है कि, यहाँ पर उन शक राजाओंकी वृहत् राजधानी थी, कि जिनको ईसवी सन्‌के ७८ वें वर्षमें राजा विक्रम ने जीता था। यहाँके लोहस्तम्भसे मालूम होता है कि, सन् ३१९ ईसवीमें यहाँ गुप्त राजाओंकी राजधानी होगी। परन्तु इसके बाद, आठवीं शताब्दीके मध्य तक, अर्थात् तुंवरवंशीय राजा अनंगपाल तक, यहाँ राजधानी थी, अथवा नहीं, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। कनिंगहम साहबके लेखसे यह जान पड़ता है कि, राजा अनंगपाल जब तक अवतीर्ण नहीं हुआ था, तब तक यह राजधानी विध्वंसावस्थामें थी। इससे जान पड़ता है कि अनंगपालने इसे फिर बसाया। हां, प्राचीन ऐतिहासिक सामग्रीसे इतना अवश्य सिद्ध होता है कि, दिल्ली में तुम्वर घरानेके राजाओंका राज्य अनेक वर्षों तक था।

यहां तक कि उनकी सत्ता हिमालयसे लेकर विंध्याचल पर्वत तक फैली हुई थी। इस समय जहां कुतुबमीनार और उसके आस-पासका प्रदेश है, वहीं इन राजाओंकी नगरी थी। उन्होंने जो नगरी बसाई; और बादमें चौहान वंशके राजाओंने उसमें जो सुधार किये, उनका सम्पूर्ण स्वरूप आज दिखाई नहीं देता; परन्तु उनके जमानेके कुछ स्मारक अब तक दिखाई पड़ते हैं, उनका संक्षिप्त वृत्तान्त यहाँ दिया जाता है।

यह लोह-स्तम्भ भारतकी अपूर्व अलौकिक वस्तुओंमेंसे एक है। हिन्दुस्तानमें आज तक पीतलकी बड़ी बड़ी मूर्तियाँ और पंचधातुके, छोटे-बड़े सब प्रकारके, पुतले बहुतसे बने थे; परन्तु लोहरसका इतना बृहत् स्तम्भ अब तक किसीने तैयार नहीं किया था। वैज्ञानिक उन्नतिके वर्तमान युगमें ऐसे अद्भुत कार्य चाहे सहजहीमें हो जायँ; परन्तु आश्चर्य्य इस बातका है कि, इतने पुरातन कालमें हमारे भारतवर्षमें ऐसे ऐसे अलौकिक कार्य हुए हैं। यह स्तम्भ अखंड है; और बिलकुल लोहरसका बना हुआ है। इसकी कुल ऊँचाई २५ फुट है; और धरतीसे वह २२ फुट ऊँचा है। पहले लोग समझते थे कि, यह धरतीमें बहुत नीचे तक गड़ा है। परन्तु सन् १८७२ ईसवीमें प्राचीन-वस्तु-अन्वेषकोंने इसकी गहराईका, बड़ी सूक्ष्म दृष्टिसे, निरीक्षण करके यह निश्चित किया कि, इसकी गहराई सिर्फ तीन फुट है। उनका मत यह है कि, धरतीके भीतर, वृक्षोंकी जड़ें, जिस तरह नीचे नीचे जाकर वृक्षके तने को मजबूत बनाती हैं, उसी तरह इस स्तंभके नीचे लोहेकी खपच्चियाँ लगाकर उसे पक्का बनाया है। इस स्तंभका [illegible] है। कुछ अन्वेषकोंका अनुमान है कि,

इस स्तम्भका वजन साढ़े सत्रह टनसे भी अधिक है। यह स्तम्भ शुद्ध लोहेका है; और उसका विशिष्ट गुरुत्व ७·६६ है।

इस स्तम्भका मध्य भाग चिकना है; और उसपर निम्नलिखित संस्कृत लेख खुदा है:—

यस्योद्वर्तयतः प्रतीपमुरसा शत्रून्समेत्यागतान्।
वंगेष्वाहववर्तिनोभिलिखिता खड्गेन कीर्तिर्भुजे॥
तीर्त्वा सप्तमुखानि येन समरे सिंधोर्जिता वाल्हिका।
यस्याद्याप्यधिवास्यते जलनिधिर्वीर्यानिलैर्दक्षिणः॥ १॥
खिन्नस्येव विसृज्य गां नरपतेर्गामाश्रितस्येतराम्।
मूर्त्या कर्मजितावनिं गतवतः कीर्त्या स्थितस्य क्षितौ॥
शान्तस्येव महावने हुतभुजो यस्य प्रतापो महान्।
अद्याप्युत्सृजति प्रणाशितरिपोर्यत्नस्य शेषः क्षितिम्॥२॥
प्राप्तेन स्वभुजार्जितं च सुचिरं चैकाधिराज्यं क्षितौ।
चन्द्राह्वेन समग्रचन्द्रसदृशीं वक्त्रश्रियं बिभ्रता॥
तेनायं प्रणिधाय भूमिपतिना धावेन विष्णौ मतिं।
प्रांशुर्विष्णुपदे गिरौ भगवतो विष्णोर्ध्वजः स्थापितः॥३॥

ये तीन श्लोक, प्रत्येक पंक्तिमें दो चरणोंके क्रमसे, छै पंक्तियोंमें खुदे हैं। ऊपर लिखे हुए श्लोकोंका भावार्थ यह है कि, "यह स्तम्भ मानो उस चन्द्र नामके राजाका भुज ही है कि, जिसने, वंग देश में ऐक्य करके आक्रमण करनेवाले शत्रुओंकी नाकमें दम करके, खड्गसे अपनी कीर्ति लिख रखी है। उस राजा ने सिन्धु नदीके सप्तमुखोंको पार करके वाल्हिक लोगों को जीता। दक्षिणी समुद्र तो उसकी प्रताप-वायुसे अभी तक सुगन्धित हो रहा है। जैसे

किसी बड़े भारी जंगल में प्रज्वलित प्रचंड बड़वानल, प्रायः समस्त जंगलको भस्मीभूत करके शान्त हो जाने पर भी, कुछ अवशिष्ट अवश्य रहता ही है, उसी प्रकार शत्रुओंकी चेष्टाओंको पूर्ण रीतिसे विफल करके, यद्यपि यह राजा खिन्नतासे इस पृथ्वीको छोड़कर, मूर्तिमात्रसे, स्वपुण्याज्जित स्वर्गलोकको चला गया है, तथापि कीर्तिरूपमें वह यहाँ अवश्य वर्त्तमान है। अपने भुजाओंके पराक्रमसे प्राप्त किया हुआ चक्रवर्त्तित्व जिसने चिरकाल तक भोगा, जिसके मुखकी क़ान्ति पौर्णिमाके चन्द्रके समान है, उस चन्द्रराजने, भगवान् विष्णुके प्रति अपने चित्त को भक्तिपूर्वक अर्पण करके, विष्णुपद नामक गिरि पर, भगवान् विष्णु का यह उच्च ध्वज स्थापित किया है।"

यह राजा चन्द्र कौन है, अथवा कब हुआ, इसका अभी तक निर्णय नहीं हुआ है। इन श्लोकोंमेंसे अन्तिम श्लोकके तीसरे चरणमें 'धावेन' शब्द है। उसके अर्थके विषयमें मतभेद है। कई लोगोंने 'धावेन' का अर्थ किया है—"धाव' नामक राजाने", और कई लोगों का मत है कि, 'धावेन' शब्दकी जगह 'भावेन' शब्द हो सकता है, जिसका अर्थ "भक्तिसे" होता है। ऐसी दशामें यही कहना पड़ता है कि, राजाके नामका निर्णय अभी सन्देहावस्थामें ही है।

इस लोहस्तम्भके विषयमें एक दन्तकथा पहले प्रकरणमें दी जा चुकी है। उसी तरहकी एक दन्तकथा और है। यह दन्तकथा शाहजहाँ बादशाहके यहाँ रहनेवाले किसी खड्गराय नामक कविने लिखी है। उसका सारांश यह है कि, व्यास नामक किसी ऋषि, अथवा ब्राह्मणने, तोमर राजाको पच्चीस अंगुल लम्बी सोने

की एक सलाई दी; और उसको, अच्छे मुहूर्त पर, जमीनमें गाड़ देनेके लिए कहा। तदनुसार उसने सम्वत् ७९२ (सन् ७३६ ईसवीमें) वैशाख वद्य १३ को, अभिजित नक्षत्रमें चन्द्रके रहते समय, उसको जमीनमें गाड़ दिया। उस समय व्यासने उसको यह आशीर्वाद दिया कि "तुमसे राज्य कभी नहीं जायगा। यह खूंटी वासुकी के मस्तक पर गड़ी है।" परन्तु राजाने व्यासके इन वचनोंकी प्रतीति लेने के लिए उस सलाईको उखाड़कर देखा, तो वह रक्तसे भरी हुई निकली। इसपर राजाने अत्यन्त भयभीत होकर उस ब्राह्मणको फिर बुलाया; और सारा समाचार प्रकट किया। उस समय ब्राह्मणने राजाको फिर उस सलाईको गाड़नेकी आज्ञा दी। तदनुसार राजाने उसको गाड़नेका प्रयत्न किया; परन्तु १९ अंगुलसे अधिक वह नहीं गड़ सकी। इस पर उस ब्राह्मणने कहा, "राजा, अब तुम्हारा राज्य बहुत दिन न टिकेगा। इस सलाईको तरह वह अब ढीला हो गया। वह सिर्फ १९ वर्ष और टिकेगा। इसके बाद चौहान राजा होंगे, और फिर तुर्क लोग राज्य करेंगे।" ब्राह्मणका यह भाषण सुनकर राजा बड़ा संतप्त हुआ; और उस ब्राह्मणको विदा किया। इसी प्रकारकी दन्तकथाएँ दिल्लीमें लोहस्तम्भ देखते समय सुननेमें आती हैं, जिनको सुनकर दर्शकोंको अत्यन्त कौतूहल होता है।

लालकोट और रायपिथौरा

राजा अनंगपालके नामसे प्रसिद्ध होनेवाला उपर्युक्त लोहस्तम्भ देखकर दर्शकगण आश्चर्यचकित होते हैं कि, इतनेमें उनको चौहान राजाके समयके लालकोट और रायपिथौरा नामक प्राचीन

किले दिखाई देने लगते हैं। ये दोनों इमारतें यद्यपि आज गिरी दशामें हैं, तथापि इनको देखकर चौहान राज्यसत्ताका अब भी स्मरण हो आता है। अहा! कालकी क्या ही अतर्क्य लीला है! इन किलोंमें आजकल बस्ती बिलकुल ही नहीं है, अतएव नितान्त निर्जन और उदास दिखाई देते हैं। इनमेंसे लालकोटका किला पृथ्वीराजने बनवाया है। इस कोटके एक कोनेसे राय-पिथौरा नामक किलेकी दीवारें स्पष्ट दिखाई देती हैं। लालकोट पृथ्वीराजकी राजधानीका कोट था; और उसको मजबूत बनानेके लिए फिरसे यह दूसरा किला बनवाया गया था। लालकोट और रायपिथौराका विस्तार शाहजहानाबाद (नई दिल्ली) से करीब आधेसे अधिक था। लालकोटका घेरा सवा दो मील है, और उसकी दीवारें ऊँची तथा भारी हैं। उसका कोट तीस फुट ऊँचा है; और दीवारोंकी उँचाई कमसे कम साठ फुट होगी। इस किले का आधा भाग अब तक मौजूद है, और उसका खंदक तथा मारके की जगहें अच्छी दिखाई देती हैं। उसके बुर्ज प्रायः नष्ट हो गये हैं; तो भी कुछ बुर्जोंके चिन्ह स्पष्ट दिखाई देते हैं। पश्चिम ओर तीन दरवाजे अच्छी तरह पहचाने जा सकते हैं; और जान पड़ता है, उनकी चौड़ाई १७ फुट होगी।

कहते हैं कि, रायपिथौरा नामक किला मुसलमानोंकी पहली चढ़ाईके बाद पृथ्वीराजने बनवाया। इस किलेका घेरा साढ़े चार मील था। परन्तु यह इमारत कुछ जल्दी-जल्दीमें बनवाई गई थी—अतएव, जितनी चाहिए, उतनी मजबूत यह नहीं बन सकी। तथापि कहते हैं कि यह किला बहुत भारी था; और उसमें दस दर-

वाजे थे। उनमेंसे आठ दरवाजोंका अब भी पता लगता है। इस किलेमें हिन्दुओं और बौद्धोंके मिलाकर कुल सत्ताईस मन्दिर थे। उनके हजारों खम्भे और कलश हिन्दू धर्मका द्वेष करनेवाले यवन बादशाहोंने छिन्नविच्छिन्न कर दिये। हाँ, उनका दीन स्वरूप अब भी अपने दुर्भाग्यके लिए रो रहा है!

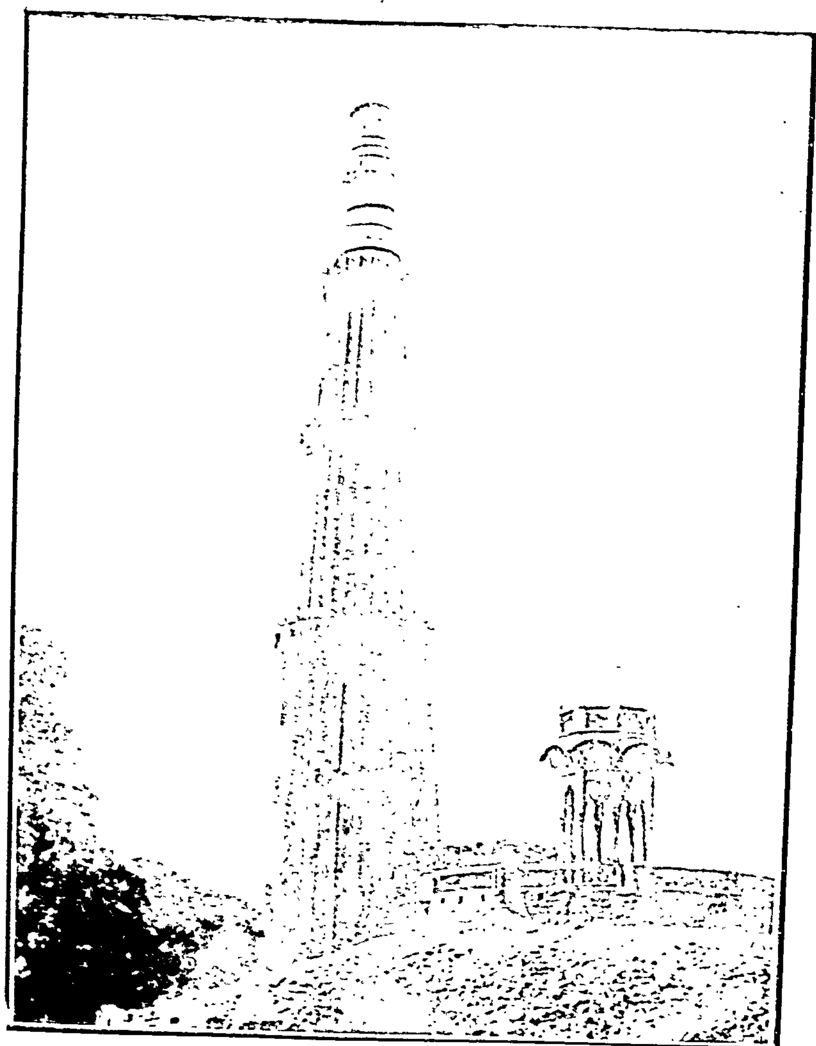
दिल्लीके लालकोटकी तैयारीके विषयमें एक स्थान पर सम्वत् ११९७ का उल्लेख है, जिससे जान पड़ता है कि, यह सन् १०६० ईस्वीमें बनवाया गया। इसके बाद रायपिथौरा किला बनाया गया। राजा पृथ्वीराज प्राचीन हिन्दू राजाओंमें श्रेष्ठ थे; और भाट लोगोंने उनके पराक्रमका विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इस विषयमें चन्द नामक राजपूत भाट (कवि) का 'पृथ्वीराजरासो' बहुत प्रसिद्ध है।



सातवाँ प्रकरण

कुतुबमीनार

भारतमें जो अलौकिक और विचित्र इमारतें पाई जाती हैं उन्हींमें कुतुबमीनार भी एक है। यह गगनचुम्बि अत्युत्तम इमारत दिल्लीसे ग्यारह मील दूर है। इस इमारतको भूकम्प और विद्युत्-आघातसे यद्यपि थोड़ासा धक्का पहुँचा है तथापि उन आघातोंसे भी सुरक्षित रहकर वह अब तक अपनी अपूर्वतासे समस्त संसारको चकित कर रही है। यदि पेरिसका 'एफेल टावर' नामक लोहेका मीनार, जो पेरिस-प्रदर्शनीके समय हालहीमें बनाया गया है, छोड़ दिया जाय, तो सारे संसारमें इस मीनारके बराबर ऊँचा मीनार नहीं है। यह इमारत जमीनसे २३८ फुट १ इञ्च ऊँची है। उसके निचले भागका व्यास ४७ फुट २ इञ्च और शीर्षभागका व्यास ९ फुट है। इस मीनारका बिलकुल निचला खंड २ फुट ऊँची कुर्सी पर है, बीच की इमारत २३४ फुट १ इञ्च ऊँची है; और अन्तिम गुम्बजकी ऊँचाई २ फुट है। इस प्रकार कुल मिलाकर उपर्युक्त २३८ फीट १ इञ्चकी ऊँचाई होती है। कहते हैं कि, पहले यह मीनार ३०० फुट ऊँचा था; और कुल सात खंडका था। परन्तु आजकल उसके बिलकुल अन्तिम खंड सहित, उसमें केवल पाँच ही खंड हैं।



कुतुबमीनार ।

कुतुबमीनारकी इमारत मुसलमान बादशाहोंने बनवाई है; परन्तु यह बृहत् कार्य मुसलमान कारीगरोंने किया, अथवा हिन्दू कारीगरोंने किया, यह एक बड़ा भारी प्रश्न है। गजनीके महमूदने जिस तरह मथुराके राजमहलका सामान और सोमनाथके मन्दिरके दरवाजे गजनी ले जाकर अपना महल सुशोभित किया, उसी तरह संभव है कि, इस मीनार का बहुतसा नक्काशीका काम हिन्दू देवालयोंसे लिया गया हो। यदि यह बात सच है, तो इस इमारतके शिल्पकौशलका बहुतसा श्रेय हिन्दू कारीगरोंको भी देना होगा। कलकत्तेके प्रसिद्ध प्राक्कलीन-वस्तु-अन्वेषक डा० राजेन्द्रलाल मित्रने पिछले दिनों इस विषयमें वाद उपस्थित किया था; और उन्होंने यह सिद्ध किया था कि, यह अलौकिक इमारत हिन्दुओंके कलाकौशलका ही स्मारक है। इस मीनार पर कुछ नागरी अक्षर खुदे हुए हैं, इससे भी इस बातकी पुष्टि होती है कि, इसकी रचनामें हिन्दू शिल्पकारोंका हाथ था। अस्तु। इसकी रचनाके विषय में कुछ भी मतभेद क्यों न हो; परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, यह इमारत भारतके लिए अवश्य ही एक गौरव का कारण है।

कुतुबमीनार सन् १३२५ ईसवीमें पूरा हुआ। इससे मालूम होता है कि, यह इमारत लगभग छै सौ वर्षसे दिल्लीकी राज्य-क्रान्तियों और उथला-पथलोंका अवलोकन कर रही है। अतएव इस इतिहासप्रसिद्ध इमारतको देखकर प्रत्येक मनुष्यको, उसके विषयमें, अभिमान और आदरभाव मालूम होता है।

कुतुबमीनारकी अत्युच्च इमारत पर खड़े होकर, आसपास दृष्टि डालने से, दस कोस विस्तारवाले प्राचीन दिल्ली शहरकी सैकड़ों विध्वंसित इमारतें दृष्टिगोचर होती हैं, जिनको देखनेसे यह मालूम होता

है कि, मानो यह कुतुबमीनार, यह दिखलानेके लिए, कि देखो मैं कैसा सबमें श्रेष्ठ हूँ, बड़ी शानके साथ खड़ा है! उसकी विशाल रचना, उसकी सुन्दर नक्काशी, उसका भव्य स्वरूप, और उसकी कायदेकी उँचाई, देखकर दर्शकोंको आनन्द और आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। सारे संसारकी कब्रोंमें जिस तरह आगरेका ताज-महल श्रेष्ठ है, उसी प्रकार सारे मीनारोंमें दिल्लीका कुतुबमीनार श्रेष्ठ है। जिस तरह ताजमहलका अप्रतिम सौन्दर्य्य देखकर रसिक दर्शकोंको अत्यन्त हर्ष होता है; और आश्चर्यके कारण वे यह नहीं सोच सकते कि, "ताजमहल हृदयमें रखें, अथवा हृदय ही ताज-महलमें रख दें"—बस यही हाल यहाँ भी दर्शकोंका होता है। कुतुबमीनारकी इमारत एक बार देख लेने पर फिर हमें कभी उसका विस्मरण नहीं हो सकता। मतलब यह है कि, यह इमारत संसार में एक अपूर्व वस्तु है। पेरिसका 'एफेल टावर' नामक मीनार लोहेका है, अतएव उसकी बात हम नहीं कहते; किन्तु अलेक्जेन्ड्रि-याका पाम्पीका जयस्तम्भ, केरोकी हसनकी मसजिदका मीनार, अथवा सेंटपीटर्सबर्ग का 'अलेक्जेन्ड्राइन कालम' इत्यादि सब अत्यन्त ऊँची ऊँची इमारतोंको कुतुबमीनारके आगे अपना मस्तक झुकाना पड़ेगा।

यह मीनार यद्यपि इतना ऊँचा है, तथापि उसके भीतरका जीना बहुत अच्छा है। पाँचों खंडोंमें सब मिलाकर कुल ३७६ सीढ़ियाँ हैं। भीतरकी ओर वायु और प्रकाशकी यथायोग्य सुविधा है; और प्रत्येक खंड पर गैलरियाँ बनी हुई हैं, अतएव दर्शकोंको बड़ा आराम रहता है। प्रत्येक खंड पर गैलरी होनेके कारण ऐसा जान

पड़ता है कि, मानों इस इमारतमें ठौर ठौर पर कमरबन्द कसे हैं। इससे इमारतको विशेष शोभा प्राप्त हुई है। इसके अतिरिक्त इस इमारत पर अनेक शिल्प-लेख भी हैं, जिनमें कुरानके वाक्य और परमेश्वरकी नाम-मालिका दी हुई है। इससे इमारतके बनानेवालों की ईश्वरभक्तिका अच्छा परिचय मिलता है।

कुतुबुद्दीनकी मसजिद

कुतुबमीनारके पास कुतुबुद्दीन बादशाहकी बनवाई हुई एक पुरानी मसजिद है। यह मसजिद उस समयका बिलकुल पहला स्मारक है, जब कि मुसलमानी धर्म्मका भारतवर्षमें प्रवेश हुआ। यह मसजिद, तथा इसके आसपासकी इमारतें, कुतुबुद्दीन, शमसुद्दीन अल्तमश और अलाउद्दीन खिलजी नामक तीन बादशाहोंके शासन-कालमें बनाई गई हैं। कुतुबुद्दीनकी मसजिदका नाम 'कुवत-उल्-इसलाम' है, जिसका अर्थ "इस्लाम धर्म्मकी शक्ति" है। इस मसजिदकी लम्बाई १५० फुट और चौड़ाई ७५ फुट है। इसके पूर्व और उत्तरके दरवाजे अभी तक मौजूद हैं; और उनके शिला-लेख स्पष्ट दिखाई देते हैं। यह इमारत, हिन्दू तथा जैनमन्दिरोंको तोड़कर, उन्हींकी सामग्रीसे बनाई गई है। इसलिए यह स्पष्ट जान पड़ता है कि, इसके प्रत्येक खम्भे पर जो नक्काशी है, वह हिन्दुओंकी है। इन खम्भोंके बेलबूटे, पुष्प-मालाएँ, और नाना प्रकारकी सुन्दर आकृतियाँ देखने लायक हैं। विशेषतः इस मसजिदके उत्तरकी ओरकी दालान में बहुत ही बढ़िया नक्काशी की हुई है। इस सम्पूर्ण हिन्दू-शिल्पकार्य के वर्तमान स्वरूप को देखकर अत्यन्त खेद होता है।

इस सम्पूर्ण इमारत को एक बार देखने से ऐसा भास होता है कि, इसके सब खम्भे और बेलबूटेदार पत्थर, जो पहले हिन्दू मन्दिरों में रामकृष्ण का भजन-पूजन देखते हुए आनन्द से वास करते थे, वे यहाँ पर अत्याचारपूर्व्वक लाये जाने तथा मुसलमानी धर्म्म की दीक्षा दिये जाने के कारण, मानो शोक सा कर रहे हैं! हिन्दुओं तथा जैनियों की मूर्त्तियां इस इमारत में न देख पड़ें—इसलिए उन पर चूने का बढ़िया मुलम्मा चढ़ाकर उनका स्वरूप बिलकुल बदल दिया गया था; परन्तु काल-गति से वह चूने का पलास्तर जीर्ण हो गया; और वे अदृश्य मूर्तियां अब धीरे धीरे दिखाई देने लगी हैं! यहाँ पर यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि हिन्दुओं की मूर्तियों पर आये हुए पटल कालान्तर से आप ही आप नष्ट हो गये; और उनका पहले का स्वरूप व्यक्त हो गया! क्योंकि, हमारे हिन्दू धर्म्म का यह विशेष गुण ही है कि, उस पर चाहे जितने सङ्कट आवें, पर-धर्म्म के कितने ही पटल उस पर आकर क्यों न जम जायँ, तथापि उसका असली उज्वल स्वरूप कभी नष्ट नहीं हो सकता। इसी अद्वितीय गुण के कारण, हमारा हिन्दू धर्म्म, मुसलमानों के धर्मोन्माद की कुछ भी परवा न करते हुए, बराबर टिका रहा। अस्तु। इस मसजिद में एक स्थान पर कृष्णजन्म का भी एक चित्र है; और एक सवत्सा धेनु का चित्र है। ये दोनों चित्र भी देखने लायक हैं।

इस मसजिद के प्रति मुसलमानों का पहले ही से बड़ा पूज्य-भाव है। कई मुसलमान इतिहासकारों और प्रवासियों ने इसका वर्णन किया है; और उसमें यह भी स्पष्टतापूर्व्वक स्वीकार किया है कि,



जैन-मन्दिर ।

यहाँ पर पहले हिन्दुओं का देवालय था। इब्नबतूटा नामक प्रवासी ने इसके विषय में यह लिखा है:—

"Its mosque is very large, and in beauty and extent has no equal. Before the taking of Delhi it had been a Hindu Temple."

अर्थात् "यह मसजिद बहुत बड़ी है; और सौन्दर्य तथा विस्तार में अपना सानी नहीं रखती। दिल्ली के हस्तगत करने के पहले यहाँ हिन्दुओं का मन्दिर था।"

खुसरो कवि ने इस मसजिद का इस प्रकार वर्णन किया है:—

"The mosque of it is the despository of the grace of God.
The music of the prayer of it reaches to the sky.

अर्थात् मसजिद क्या है, परमात्मा के अनुग्रह का निवासस्थान है। यहां की प्रार्थना स्वर्ग तक जाती है।

अस्तु। इस स्थानके पास सुलतान शमशुद्दीन अल्तमशकी कबर है। वह बड़ी सुन्दर है; और उसका प्राचीन हिन्दू-शिल्पकार्य अत्यन्त दर्शनीय है। इसके विषय में मि० फर्ग्युसनने लिखा है कि, "यह इमारत यद्यपि छोटी है, तथापि हिन्दू कारीगरोंके कौशल का यह अप्रतिम नमूना है, और प्राचीन दिल्लीकी दर्शनीय इमारतोंमें भी यह अग्रगण्य है।" इस कबरके अतिरिक्त यहाँ 'अलाई दरवाजा' नामक एक सुन्दर दरवाजा भी है, जिसकी नक्काशी अत्यन्त प्रशंसनीय है। कुतुब मीनार, कुतुबुद्दीनकी मसजिद, अल्तमशकी कबर और अलाई दरवाजा, ये सब इमारतें पठान राजाओंके

समय की हैं; और निस्सन्देह प्रशंनीय हैं। विशप हीवर नामक कुतूहलप्रिय प्रवासी ने पठानों की उपर्युक्त इमारतोंको देखकर कहा है कि, "इन पठान राजाओं ने राक्षस के समान इमारतें बनाई हैं और उनकी नक्काशी रत्नकारके समान सुन्दरकी है।" यह कथन यहाँ अक्षरशः सत्य प्रतीत होता है।

उपर्युक्त इमारतोंके अतिरिक्त दिल्लीमें फीरोजाबाद, तुगलकाबाद, बेगमपुर, आदि अनेक प्राचीन और इतिहास-प्रसिद्ध स्थान हैं वहाँपर भी मसजिदें और कबरें बहुत हैं। इनके सिवाय, सन् १८५७ के बलवेमें जिन अँग्रेज वीरोंने शूरता दिखलाकर रणभूमिमें अपने प्राण दिये, उनकी कबरें, स्मारक-स्तम्भ, इत्यादि अनेक अर्वाचीन बातें भी देखने योग्य हैं। इन सभीका वर्णन इस छोटी सी पुस्तकमें नहीं दिया जा सकता। तथापि, ये सभी स्थल दिल्ली जानेवाले दर्शकों के देखने योग्य हैं।

अस्तु। इसमें सन्देह नहीं कि, दिल्ली अथवा इन्द्रप्रस्थका यह पुराण-प्रसिद्ध और इतिहास-प्रसिद्ध स्थल देखकर यह अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि, काल-चक्र की गति कितनी विचित्र है। जहाँ हिन्दू राजाओंकी स्वतन्त्रता और राज्यसत्ता चमक रही थी वहाँ काल-चक्रकी गतिसे मुसलमानोंका राज्य आया; बादके जब मुसलमानी राज्यसत्ताका वैभव भी अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका, तब मराठोंका प्रभुत्व प्रस्थापित हुआ। इसके बाद मराठोंकी सत्ता भी न रही; और ब्रिटिश राज्यसत्ता यहाँ आकर संस्थापित हुई! इससे साफ मालूम होता है कि राष्ट्रके उत्थान और पतनका चक्र बराबर जारी है! जो हो, दिल्ली अथवा

इन्द्रप्रस्थ नगरका जब हम ऐतिहासिक दृष्टिसे अवलोकन करते हैं तब हमें कविकुलगुरु कालिदासके इस कथनकी सत्यता भली भांति प्रतीत हो जाती है किः—

"नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण।"

एक प्राचीन अंगल कविने भी राष्ट्रों के उत्थान और पतनके विषयमें ऐसा ही कहा है। वह कहता हैः—

"Empires and nations flourish and decay,

By turns command and in their turns obey."

अर्थात् "संसारका नियम है कि, बारी बारीसे सब राष्ट्रों और साम्राज्योंका उत्थान तथा पतन होता रहता है। क्रमशः वे दूसरों पर शासन करते, और फिर दूसरोंका शासन माननेके लिए बाध्य होते हैं!"

अस्तु। अंगरेजी राज्यमें भी हमारी इस वृद्धा दिल्ली माताने पूरा पूरा गौरव प्राप्त किया है। महारानी विक्टोरिया और महाराज सप्तम एडवर्डके राज्यारोहण-सम्बन्धी महोत्सव इस दिल्लीमें ही बड़ी धूमधामसे सुसम्पन्न हुए। बादको सन १९१२ ई० में सम्राट पंचम जार्ज ने स्वयं इस पवित्र भूमिमें पधारकर, इसे फिरसे इसका गौरवपूर्ण राजधानी-पद प्रदान किया; और अपने राज्यारोहणका अपूर्व उत्सव यहाँ सुशोभित कराके भारतवासियोंको आनन्दित किया। तबसे दिल्ली राजधानीका राजनैतिक महत्व, वर्तमान समयमें भी, दिन पर दिन बढ़ ही रहा है; और अब तो हमारी गवर्नमेंट की ओर से भी एक 'नवीन दिल्ली' बसाई गई है। आशा है कि, स्वातंत्र्यप्रिय ब्रिटिश साम्राज्यके द्वारा, दिल्ली राजधानीको एक बार फिर स्वराज्य शासनका गौरव प्राप्त होगा!

परिशिष्ट (क)



दिल्लीके प्राचीन राजा

राजाका नाम		शासनकी अवधि वर्ष	मास	दि[illegible]
१ राजा युधिष्ठिर	...	३३	८	२[illegible]
२ राजा परीक्षित	...	६०	१	
३ राजा जन्मेजय	...	८४	५	२[illegible]
४ राजा अश्वमेध	...	८२	८	२[illegible]
५ राजा धर्म	...	८८	२	[illegible]
६ राजा मनजित	...	८१	११	२[illegible]
७ राजा जसरथ	...	७५	८	[illegible]
८ राजा दीपपाल	...	७५	१०	१[illegible]
९ राजा उग्रसेन	...	७७	७	२[illegible]
१० राजा सूरसेन	...	७९	८	[illegible]
११ राजा भूपति	...	६१	५	[illegible]
१२ राजा रणजित	...	६५	१०	२६
१३ राजा वीरजित	...	६४	७	३
१४ राजा भीमसेन	...	५५	८	२६
१५ राजा शुकमलदेव	...	६२	०	३

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१६ राजा नरहरिदेव	...	६१	१०	४
१७ राजा सुजितरथ	...	७२	११	३
१८ राजा शूर	...	५८	०	८
१९ राजा पर्वत	...	५०	८	२१
२० राजा मधुकरशाह	...	५२	८	७
२१ राजा टोडरमल	...	४८	१०	२९
२२ राजा भीष्मदेव	...	४७	१०	२९
२३ राजा नरहरिरथ	...	४७	११	०
२४ राजा पूर्णमल	...	४४	८	१७
२५ राजा सारंगदेव	...	५६	०	०
२६ राजा रूप	...	५४	१०	२
२७ राजा अभिमन्यु	...	५१	११	८
२८ राजा धनपाल	...	४८	७	४
२९ राजा भीम	...	५८	५	१५
३० राजा लखमी देव	...	४८	११	२१
	कुल योग	१८५३	११	×

इसके वाद लखमीदेवके प्रधान वीरसेनने लखमीदेवको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशज:—

१ राजा वीरसेन	...	१७	७	०
२ राजा सूरसेन	...	३२	८	०

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
३ राजा अनन्तशाह	...	३७	८	२३
४ राजा वीरशाह	...	३२	१०	७
५ राजा हरिरूप	...	३५	६	१७
६ राजा सुलोचन	...	४३	१	४
७ राजा पर्वत	...	४२	६	२४
८ राजा सुरपाल	...	३८	२	५
९ राजा कूप	..	३५	४	१४
१० राजा पृथ्वीपाल	...	३१	८	११
	कुल योग	३४७	९	२६

इसके बाद पृथ्वीपालके मंत्री नरहरिनाथने पृथ्वीपालको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशज:—

१ राजा नरहरिनाथ	...	१५	१०	८
२ राजा जेतसिंह	...	२७	७	१५
३ राजा वैरामगत	...	२१	२	१३
४ राजा दीपपाल	...	३५	४	१
५ राजा महाबल	...	३५	८	७
६ राजा अमृतपाल	...	२८	८	१०
७ राजा जेतपाल	...	२८	११	१०
८ राजा माणिकचन्द	...	२६	७	२१
९ राजा कामचन्द	...	३२	५	१०
१० राजा हरगोरण	...	१७	०	११

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
११ राजा जीवनगौण	...	२३	६	२७
१२ राजा रंभ्यवंग	...	१३	७	२६
१३ राजा त्रिविक्रम	...	१०	२	१०
१४ राजा भारमल	...	२३	११	२४
१५ राजा भूपति	...	१०	२	२
१६ राजा उदितकंठ	...	३५	२	२०
	कुल योग	३८६	६	८

इसके बाद उदितकंठके 'मंत्री' ने उसको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१ राजा मंत्री (?)	...	२४	२	०
२ राजा चन्द्रपाल	...	१६	६	२४
३ राजा सुन्दरपाल	...	२१	४	१८
४ राजा देशपाल	...	१६	१	११
५ राजा रसिकपाल	...	१८	०	१२
६ राजा अनन्तपाल	...	१८	०	२२
७ राजा रामपाल	...	३७	११	१२
८ राजा गोविंदपाल	...	२८	७	२७
९ राजा भीमपाल	...	१६	१०	१३
१० राजा अमृतपाल	...	१६	७	१६
११ राजा हलपाल	...	१२	५	२७
१२ राजा भूपपाल	...	१४	६	२२

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१३ राजा हरिपाल	...	१३	८	४
१४ राजा मदनपाल	...	१७	७	१६
१५ राजा कर्णपाल	...	१५	२	२५
१६ राजा विक्रमपाल	...	१८	११	१३
	कुल योग	३११	५	८

राजा विक्रमपालको उसके वजीर सआदतखांने मारकर राज्य छीन लिया।

इसके बाद दिल्लीमें बड़ी गड़बड़ी मची। फिर सोलह पुरुषोंने राज्य किया। उनके नामः—

१ सआदतखां	...	२४	०	०
(इस सआदतखांको मार विक्रमाजितने राज्य ले लिया।)				
२ विक्रमाजित	...	३२	०	०
३ मुल्लकचन्द	...	०	२	२
४ विक्रमचन्द	...	१२	७	१८
५ कुलचन्द	...	०	२	२
६ रामचन्द	...	१३	११	७
७ कल्याणचन्द	...	१०	५	४
८ श्रीचन्द	...	१४	६	१४
६ सूरचन्द	...	२६	३	२१
१० भीमचन्द	...	१६	३	१
११ गोविन्दचन्द	...	२१	७	१२

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१२ भावति	...	१	०	०
१३ प्रतिमल	...	७	५	१६
१४ गोविन्द	...	२०	२	१७
१५ पूर्णप्रेम	...	७	७	१६
१६ महानन्द	...	१५	७	१८
	कुल योग	२२५	३	५

इसके बाद निम्नलिखित बारह राजाओं ने राज्य किया:—

१ राजा जयसिंह	...	१८	५	२१
२ राजा मालुसेन	...	१२	४	१२
३ राजा शूरसेन	...	१५	७	१२
४ राजा गन्धर्वसेन	...	११	३	१३
५ राजा देवसेन	...	१०	१	५
६ राजा भूसेन	...	५	१०	५
७ राजा कल्याणसेन	...	४	८	२१
८ राजा हरिसेन	...	१२	०	२५
९ राजा ब्रह्मसेन	...	८	११	५
१० राजा नारायणसेन	...	५	२	१८
११ राजा लखमीसेन	...	१६	७	१५
१२ राजा दामोदरसेन	...	११	५	१६
	कुल योग	१३२	८	१८

इसके बाद माधवसिंह उत्तर ओर से आया; और उसने दामोदरको मारकर उसका राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१ राजा माधवसिंह	...	१७	१०	६
२ राजा दीलसेन	...	१४	५	०
३ राजा राजसिंह	...	१२	३	२४
४ राजा शेरसिंह	...	१०	८	११
५ राजा वीरसिंह	...	२५	०	१५
६ राजा नृपसिंह	...	८	०	४
	कुल योग	८८	४	०

इसके बाद नृपसिंहको राजा धीरन्धरने मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१ राजा धीरन्धर	...	२२	७	०
२ राजा सेन	...	३५	१०	६
३ राजा लालजी	...	३५	२	८
४ राजा महानु	...	२०	३	६
५ राजा वीरनाथ	...	२८	५	२५
६ राजा जीवन	...	२२	२	२५
७ राजा उदयसिंह	...	२७	४	२६
८ राजा कुलानन्द	...	२२	३	८
९ राजा राजपाल	...	१३	२	६
	कुल योग	२२७	५	२९

इसके बाद पृथ्वीपाल पूर्व ओरसे आया, और उसने राजपालको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१ राजा पृथ्वीपाल	...	१४	७	१७
२ राजा उजनपाल	...	१२	७	१३
३ राजा उदयपाल	...	१३	७	१४
४ राजा चैनपाल	...	१६	२	१६
५ राय पिथौरा उर्फ पृथ्वीराज चौहान		३६	४	२५
	कुल योग	६५	४	२८



परिशिष्ट (ख)

दिल्लीके बादशाह

गोरी घराना

१ शहाबुद्दीन मुहम्मद ई० स० ११८६–१२०६

गुलाम घराना।

२ कुतुबुद्दीन	...	,,	१२०६–१२१०
३ शमसुद्दीन अल्तमश	...	,,	१२१०–१२३५
४ सुलताना रजिया	...	,,	१२३६–१२३६
५ मोहज़ुद्दीन बहराम	...	,,	१२३९–१२४१
६ अलाउद्दीन मसऊद	...	,,	१२४१–१२४२
७ नासिरुद्दीन महमूद	...	,,	१८४२–१२६६
८ बल्बन	...	,,	१२६६–१२८६
९ कैकुबाद	...	,,	१२८६–१२८८

खिलजी घराना

१० जलालुद्दीन	...	,,	१२८९–१२९५
११ अलाउद्दीन	...	,,	१२९६–१३१६
१२ मुबारिक	...	,,	१३१६–१३२०

तुगलक घराना

गयासुद्दीन	...	,,	१३२०–१३२६

१४ मुहम्मद ... ,, १३२६–१३५१
१५ फीरोजशाह ... ,, १३५१–१३८८
१६ गयासुद्दीन (दूसरा) ... ,, १३८८–१३८९
१७ अबू बकर ... ,, १३८९–१३९०
१८ मुहम्मद ... ,, १३९०–१३९४
१९ हुमायूँ ... ,, १३९४–
२० महमूद ... ,, १३९४–१४१४

सैयद घराना

२१ खिजरखां (तैमूरलंग का दीवान) ,, १४१४–१४२७
२२ मुबारिक ... ,, १४२७–१४३५
२३ मुहम्मद ... ,, १४३५–१४४५
२४ अलाउद्दीन ... ,, १४४५–१४५०

लोदी घराना

२५ बहलोलखां ... ,, १४५०–१४८८
२६ सिकन्दर ,, १४८८–१५१७
२७ इब्राहीम ... ,, १५१७–१५२५

मुगल घराना

२८ बाबर ... ,, १५२६–१५३०
२९ हुमायूँ ... { ,, १५३०–१५४० फिर १५५५–१५५६
३० अकबर ... ,, १५५६–१६०५
३१ जहाँगीर ... ,, १६०५–१६२७
३२ शाहजहाँ ... ,, १६२७–१६५८

३३ औरंगजेब	... ...	,,	१६५८–१७०७
३४ बहादुरशाह	... ...	,,	१७०७–१७१२
३५ जहाँदारशाह	...	,,	१७१२–१७१३
३६ फर्रुखशियर	...	,,	१७१३–१७१९
३७ मुहम्मदशाह	...	,,	१७१९–१७४८
३८ अहमदशाह	...	,,	१७४८–१७५४
३९ आलमगीर (दूसरा)	...	,,	१७५४–१७५९
४० शाह आलम	...	,,	१७५९–१८०६
४१ अकबरशाह	...	,,	१८०६–१८३७
४२ बहादुरशाह	...	,,	१८३७–१८५७



तरुण-भारत-ग्रन्थावली

[सम्पादक पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

स्थायी ग्राहक बनने के नियम

१—इतिहास, जीवनचरित्र सदाचार और नीति, विज्ञान, कविता, आख्यायिका, सुरुचिपूर्ण नाटक, उपन्यास, इत्यादि विषयों के उत्तमोत्तम ग्रन्थ सुलभ मूल्य पर प्रकाशित करना इस ग्रन्थावली का मुख्य उद्देश्य है।

२—आठ आना प्रवेशफीस भेजकर सब लोग इसके स्थायी ग्राहक बन सकते हैं।

३—स्थायी ग्राहकों को ग्रन्थावली के सब अगले और पिछले ग्रन्थ पौनी कीमत पर, यानी एक-चौथाई कमीशन काटकर, दिये जाते हैं। वे ग्रन्थावली के प्रत्येक ग्रन्थ की चाहे जितनी प्रतियां, चाहे जितनी वार, पौने मूल्य पर ही प्राप्त कर सकते हैं।

४—कोई भी नवीन ग्रन्थ निकलने पर दस-बारह दिन पहले उसका वी० पी० भेजने की सूचना स्थायी ग्राहकों को दे दी जाती है। ग्राहकों को वी० पी० वापस नहीं करना चाहिए; क्योंकि इससे कार्यालय को व्यर्थ की हानि उठानी पड़ती है।

५—जिन ग्राहकों का वी० पी० तीन बार लगातार वापस आता है, उनका नाम स्थायी ग्राहकों से अलग कर दिया जाता है।

६—प्रत्येक मातृभाषा-हितैषी का परम पवित्र कर्त्तव्य है कि इस ग्रन्थावली के स्थायी ग्राहक बनकर हमारे इस शुभ कार्य में सहायता करे। क्योंकि हमारा उद्देश्य केवल पुस्तकों का व्यापार ही नहीं है; बल्कि हिन्दी-साहित्य में सुरुचिपूर्ण ग्रन्थों का विस्तार करना हमारा मुख्य लक्ष्य है। हिन्दी-साहित्य की आवश्यकता को ही देखकर हम ग्रन्थों का चुनाव करते हैं।

—व्यवस्थापक

तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय, दारागंज, प्रयाग

ग्रन्थों का परिचय

१—अपना सुधार

[लेखक पं० नर्मदाप्रसाद जी मिश्र बी० ए० विशारद]

इस पुस्तक में क्रमशः मनुष्य के मन, शरीर और आचरण के सुधार के अनुभवपूर्ण साधन बतलाये गये हैं। निम्नलिखित विषयों पर इस पुस्तक में चर्चा की गई है:—

मानसिक सुधार में—१ पुस्तकावलोकन २ निरीक्षण ३ वर्गीकरण ४ तर्कना ५ तर्कशास्त्र और आत्म-विद्या ६ कल्पनाशक्ति ७ सौन्दर्य-निरीक्षण-शक्ति ८ स्मरणशक्ति ९ लेखन और भाषणशक्ति १० पुस्तकें ११ निज व्यवसायसम्बन्धी पुस्तकें १२ भाषाओं के अध्ययन की विधि।

शारीरिक सुधार में—१ शारीरिक सुधार का महत्व २ व्यायाम या कसरत ३ खान-पान ४ हवादार मकान ५ निद्रा ६ स्नान ७ शरीर और मन का सम्बन्ध।

आचरण-सुधार में—१ आचरण सुधार का महत्व २ आचरण और धर्म ३ आज्ञापालन ४ सत्यशीलता ५ उद्योगशीलता ६ सहानुभूति और प्रेम ७ आदर-सत्कार ८ संयम ९ द्रव्योपार्जन १० दृढ़ता या धैर्य ११ पवित्र आचरण १२ स्वाध्याय १३ महात्माओं के चरित्र १४ सत्संगति १५ आत्मालोचन १६ ईश्वर-प्रार्थना।

हिन्दी के अनेक विद्वानों और प्रतिष्ठित पत्रों ने पुस्तक की पूर्ण प्रशंसा की है। आप भी इस पुस्तक को मँगाकर अवश्य पढ़ें। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

२—फ्रांस की राज्य-क्रान्ति

[लेखक बाबू प्यारेलाल गुप्त]

अठारहवीं शताब्दी में फ्रांस की प्रजा ने राजाओं और राज-कर्मचारियों के अत्याचारों से पीड़ित होकर एक बड़ी भारी राज्यक्रान्ति की थी, जिसका प्रभाव यूरुप के समस्त देशों पर पड़ा; और वहां स्वतंत्रता की लहर बड़े वेग से बह निकली। बड़े बड़े सम्राटों के आसन डोल गये। उसी राज्यक्रान्ति का यह सुन्दर और विस्तृत इतिहास हमने प्रकाशित किया है। इतिहास होने पर भी इसके लिखने का ढंग इतना सरस है कि एक बार पुस्तक उठाकर फिर छोड़ने को जी नहीं चाहता। इसका रोमाञ्चकारी वृत्तान्त पढ़कर पाठक आश्चर्य-चकित हो जाते हैं। कुछ प्रसिद्ध पत्रों की सम्मतियां देखिये:—

"इतिहास होने पर भी इस पुस्तक के पढ़ने में उपन्यास का सा आनन्द आता है।" "सरस्वती"

"इसमें फ्रांस की उस प्रसिद्ध राज्यक्रान्ति का सजीव इतिहास चित्रित किया गया है, जिसने फ्रांस की बिलकुल काया पलट कर दी थी। पुस्तक हिन्दी का एक आदरणीय साहित्यांश समझा जाने योग्य है।" "प्रताप"

'This is a carefully written book on the history of the French Revolution × × × The description is orderly, and the language chaste and simple. The book will no doubt prove an addition to the historical literature in Hindi. 'मार्डन रिव्यू'

इस पुस्तक को आप अवश्य मँगाकर पढ़िये। आपका ज्ञान बढ़ेगा; और चित्त प्रसन्न होगा। मूल्य १।) रु०।

३—महादेव गोविन्द रानडे

[लेखक—पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी]

चतुर्वेदीजी चरित्रचित्रण में कितने चतुर हैं, सो हिन्दी-संसार भली भाँति जानता है। आप ही ने अँगरेज़ी, मराठी, बँगला, गुजराती, उर्दू, हिन्दी इत्यादि अनेक भाषाओं के ग्रन्थों से मसाला एकत्र करके देशभक्त महात्मा रानडे का यह अपूर्व चरित्र-ग्रन्थ लिखा है। जस्टिस रानडे भारतीय राष्ट्र के उन विधाताओं में थे, जिन्होंने वर्तमान युग के प्रारम्भिक काल में देश की जागृति में अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को लगा दिया था। धर्म, समाज, राजनीति, उद्योग-व्यवसाय, इत्यादि कोई भी भारतीय हित का ऐसा विषय नहीं था, जिसमें उन्होंने नवीन जीवन न डाला हो। रानडे का चरित्र भारतीय जागृति का सजीव इतिहास है। इसको पढ़कर हृदय में नवीन जीवन का संचार होता है। ग्रन्थ की कुछ समालोचनाओं का सार यहाँ दिया जाता है :—

"वस्तुगत्या लेखक ने पुस्तक के लिखने में बहुत परिश्रम किया है। लेखनशैली गम्भीर सारगर्भित और प्रभावोत्पादक है। यथावश्यकता लेखक ने अत्युपयोगी श्लोकों को देकर पुस्तक की मनोहरता को द्विगुणित कर दिया है।" "नवजीवन"

"पुस्तक बड़े अच्छे ढंग से लिखी गई है। आरम्भ में जो सम्पादकीय वक्तव्य है, उसमें रानडे के चरित्र की एक तरह पर आलोचना भी हो गई है। अन्त में महात्मा रानडे के कुछ चुने हुए वचन भी दिये गये हैं, जो अमूल्य हैं। महात्मा रानडे का चरित्र न केवल सब के पढ़ने, बल्कि ध्यानपूर्वक मनन करने की चीज़ है। उनकी चरित्र-सम्बन्धिनी जितनी पुस्तकें हिन्दी में

निकल चुकी हैं, प्रस्तुत पुस्तक उनसे बहुत कुछ विशेषता रखती है।" "हिन्दी-केसरी"

"इस सचित्र पुस्तक में पूज्य नेता रानडे महोदय का जीवन बड़ी सजीव भाषा में चित्रित किया गया है; और उनके स्वभाव, गुणों के आदर्श-चित्रण में लेखक ने बड़ी विद्वत्ता से काम लिया है। "प्रताप"

पुस्तक की पृष्ठ-संख्या दो सौ से ऊपर है। टाइटिल पेज रंगीन चित्र से सुशोभित; और मूल्य केवल बारह आने ।।।) है।

४—एब्राहम लिंकन

[लेखक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

"महात्मा लिंकन के गुण अनन्त हैं। उनका चरित्र शिक्षा और उपदेशों की खानि है। उन्होंने एक साधारण मजदूर के घर जन्म लिया था। किसी स्कूल या कालेज में उन्हें शिक्षा भी नहीं मिली थी। जीवन का अधिकांश देहात और खेती तथा मजदूरी के कामों में ही व्यतीत होने के कारण उन्हें अच्छे विद्वानों का सग भी बहुत ही कम मिलता था। परन्तु अपनी दिव्य बुद्धि और विचारशक्ति तथा अनुपम उद्योगशीलता से उन्होंने अपनी इतनी उन्नति की कि अन्त में अमेरिकन राष्ट्र ने उन्हें बड़े आग्रह से अपने देश का स्वामी यानी प्रेसिडेंट या राष्ट्रपति बनाया। यह लिंकन ही का उद्योग और अध्यवसाय था, जिसने हजारों विरोधी शक्तियों को नीचा दिखाकर अन्त में अमेरिका से मनुष्यों के क्रय-विक्रय अर्थात् गुलामी की पृथा को जड़ से उखाड़ कर फेंक दिया—यद्यपि इसी विरोध में उन्हें अपने प्राण भी खोने पड़े। महात्मा लिंकन का एक एक गुण अनुकरणीय है। उनका चरित्र एक ही बार नहीं, बल्कि बार बार पढ़ने और विचार करने की चीज़ है। प्रस्तुत

पुस्तक में उनके चरित्र की विशेषताएँ जिस आलोचनात्मक पद्धति से दिखाई गई हैं, उसे पढ़ते ही वे मन पर अंकित हो जाती हैं। पुस्तक की भाषा यथेष्ट सरल और स्पष्ट है"— "हिन्दी-केसरी"

"लिंकन वह पुरुष है, जो संसार में अपने दो हाथ और एक मस्तक लेकर आया; और केवल इन्हीं की सहायता से अमेरिका का प्रसिडेंट बना। निर्धन माता-पिता की सन्तान को पढ़ने में कितनी कठिनाइयां होती हैं; और उसका रास्ता कितना कांटों से घिरा होता है—पर लिंकन उस मार्ग पर कैसे बढ़ा; और अन्त में उसे सब से ऊंचा आसन कैसे मिला—यही इस पुस्तक में है। उस ऊंचे आसन पर बैठकर लिंकन ने गुलामी के खिलाफ़ तलवार निकाली; और पांच वर्ष संग्राम करके उसने इसका अन्त किया। उसका यह वाक्य सर्वत्र कहा जाता है कि "यदि गुलामी बुरी नहीं, तो संसार में कुछ भी बुरा नहीं।" ऐसे प्रसिद्ध पुरुष का जीवन-चरित्र पढ़ना प्रत्येक का धर्म है। बालकों को ऊंट-बैल की कहानियां न पढ़ाकर यदि ऐसी पुस्तकें पढ़ाई जायँ, तो भारतवासी अपने आपको पहचान सकते हैं। प्रत्येक पाठक से हमारा अनुरोध है कि वे इसे अवश्य पढ़ें"— "हिन्दी-समाचार"

उपर्युक्त दो समालोचनाओं से अधिक इस पुस्तक की हम प्रशंसा नहीं कर सकते। पुस्तक सचित्र है; और मूल्य ॥=) दस आने है। आप इसे अवश्य मँगाकर पढ़ें।

५—ग्रीस का इतिहास

[लेखक—बा० प्यारेलाल जी गुप्त]

ग्रीस देश के प्रारम्भिक इतिहास से लेकर रोम के शासन-काल तक का इतिहास, प्रसिद्ध प्रसिद्ध ग्रन्थकारों की सूची और उनका समय, ग्रीस की प्राचीन सभ्यता, वहां की धार्मिक, राजनैतिक,

सामाजिक क्रान्तियां, सिकन्दर बादशाह का पराक्रम, इत्यादि सभी बातों का सच्चा सच्चा वृत्तान्त यदि आपको जानना हो तो इस ग्रन्थ को एक बार अवश्य पढ़ जाइये। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा और प्रयाग-महिला-विद्यापीठ की परीक्षाओं में भी यह ग्रन्थ पढ़ाया जाता है। राष्ट्रीय विद्यालयों के लिए बहुत उपयोगी है। प्रत्येक विद्याप्रेमी को इस ग्रन्थ की एक प्रति मँगाकर अपनी लाइब्रेरी में अवश्य रखनी चाहिए। मूल्य १=) है।

६—रोम का इतिहास

[लेखक—प्रो० ज्वालाप्रसाद जी एम० ए०]

ग्रीस की तरह हमने रोम का इतिहास भी उपर्युक्त प्रोफेसर साहब के द्वारा लिखवाकर प्रकाशित किया है। रोम का इतिहास एक बहुत ही महत्वपूर्ण पुस्तक है। पश्चिमी जगत् में यह रोम के ही साम्राज्य का विकास था, जिसने भिन्न भिन्न दूरदेशस्थ ज़ातियों में एक-सम्बन्ध-सूत्र स्थापित किया; और एक दूसरे को नाना प्रकार के आचार-व्यवहार, विद्या, कलाकौशल, आदि से प्रभावित होने का अवसर दिया। यदि कोई मनुष्य आधुनिक यूरप की भिन्न भिन्न जातियों की सभ्यता, भाषा, शासनपद्धति, आदि को समझना चाहता है, तो उसके लिए यह आवश्यक है कि रोम और ग्रीस के इतिहासों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करे; क्योंकि एक बहुत बड़े अंश में इन्हीं दो देशों में उन सब का स्रोत पाया जाता है।

रोम का इतिहास भी साहित्य-सम्मेलन और प्रयाग-महिला-विद्यापीठ की परीक्षाओं में प्रचलित है। इसके प्रत्येक अध्याय के अन्त में परीक्षार्थ प्रश्न भी दे दिये गये हैं, तथा अन्त में रोम के इतिहास की मुख्य मुख्य घटनाएं तथा उनकी सनावली भी दे दी

पुस्तक में उनके चरित्र की विशेषताएँ जिस आलोचनात्मक पद्धति से दिखाई गई हैं, उसे पढ़ते ही वे मन पर अंकित हो जाती हैं। पुस्तक की भाषा यथेष्ट सरल और स्पष्ट है"— "हिन्दी-केसरी"

"लिंकन वह पुरुष है, जो संसार में अपने दो हाथ और एक मस्तक लेकर आया; और केवल इन्हीं की सहायता से अमेरिका का प्रसिडेंट बना। निर्धन माता-पिता की सन्तान को पढ़ने में कितनी कठिनाइयां होती हैं; और उसका रास्ता कितना कांटों से घिरा होता है—पर लिंकन उस मार्ग पर कैसे बढ़ा; और अन्त में उसे सब से ऊंचा आसन कैसे मिला—यही इस पुस्तक में है। उस ऊंचे आसन पर बैठकर लिंकन ने गुलामी के खिलाफ़ तलवार निकाली; और पांच वर्ष संग्राम करके उसने इसका अन्त किया। उसका यह वाक्य सर्वत्र कहा जाता है कि "यदि गुलामी बुरी नहीं, तो संसार में कुछ भी बुरा नहीं।" ऐसे प्रसिद्ध पुरुष का जीवन-चरित्र पढ़ना प्रत्येक का धर्म है। बालकों को ऊंट-बैल की कहानियां न पढ़ाकर यदि ऐसी पुस्तकें पढ़ाई जायँ, तो भारतवासी अपने आपको पहचान सकते हैं। प्रत्येक पाठक से हमारा अनुरोध है कि वे इसे अवश्य पढ़ें"— "हिन्दी-समाचार"

उपर्युक्त दो समालोचनाओं से अधिक इस पुस्तक की हम प्रशंसा नहीं कर सकते। पुस्तक सचित्र है; और मूल्य ।।=) दस आने है। आप इसे अवश्य मँगाकर पढ़ें।

५—ग्रीस का इतिहास

[लेखक—बा० प्यारेलाल जी गुप्त]

ग्रीस देश के प्रारम्भिक इतिहास से लेकर रोम के शासन-काल तक का इतिहास, प्रसिद्ध प्रसिद्ध ग्रन्थकारों की सूची और उनका समय, ग्रीस की प्राचीन सभ्यता, वहां की धार्मिक, राजनैतिक,

सामाजिक क्रान्तियां, सिकन्दर बादशाह का पराक्रम, इत्यादि सभी बातों का सच्चा सच्चा वृत्तान्त यदि आपको जनना हो तो इस ग्रन्थ को एक बार अवश्य पढ़ जाइये। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा और प्रयाग-महिला-विद्यापीठ की परीक्षाओं में भी यह ग्रन्थ पढ़ाया जाता है। राष्ट्रीय विद्यालयों के लिए बहुत उपयोगी है। प्रत्येक विद्याप्रेमी को इस ग्रन्थ की एक प्रति मँगाकर अपनी लाइब्रेरी में अवश्य रखनी चाहिए। मूल्य १=) है।

६—रोम का इतिहास

[लेखक—प्रो० ज्वालाप्रसाद जी एम० ए०]

ग्रीस की तरह हमने रोम का इतिहास भी उपर्युक्त प्रोफेसर साहब के द्वारा लिखवाकर प्रकाशित किया है। रोम का इतिहास एक बहुत ही महत्वपूर्ण पुस्तक है। पश्चिमी जगत् में यह रोम के ही साम्राज्य का विकास था, जिसने भिन्न भिन्न दूरदेशस्थ जातियों में एक-सम्बन्ध-सूत्र स्थापित किया; और एक दूसरे को नाना प्रकार के आचार-व्यवहार, विद्या, कलाकौशल, आदि से प्रभावित होने का अवसर दिया। यदि कोई मनुष्य आधुनिक यूरप की भिन्न भिन्न जातियों की सभ्यता, भाषा, शासनपद्धति, आदि को समझना चाहता है, तो उसके लिए यह आवश्यक है कि रोम और ग्रीस के इतिहासों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करे; क्योंकि एक बहुत बड़े अंश में इन्हीं दो देशों में उन सब का स्रोत पाया जाता है।

रोम का इतिहास भी साहित्य-सम्मेलन और प्रयाग-महिला-विद्यापीठ की परीक्षाओं में प्रचलित है। इसके प्रत्येक अध्याय के अन्त में परीक्षार्थ प्रश्न भी दे दिये गये हैं, तथा अन्त में रोम के इतिहास की मुख्य मुख्य घटनाएं तथा उनकी सनावली भी दे दी

गई है। कालेजों में जो विद्यार्थी रोम और ग्रीस का इतिहास लेते हैं, वे अपनी मातृभाषा हिन्दी के द्वारा यदि इन दोनों इतिहास-ग्रन्थों को पढ़ लिया करें, तो उनको परीक्षा पास करने में बड़ी सहायता मिल सकती है। पृष्ठसंख्या लगभग पौने दो सौ। मू० ।।।) बारह आने।

७—इटली की स्वाधीनता

[लेखक—पं० नन्दकुमारदेव शर्मा]

स्वर्गीय पं० नन्दकुमारदेव शर्मा इतिहासिक साहित्य के अध्ययन में बड़े पटु थे—इतिहास की कठिन कठिन गुत्थियां सुलझाने में उनको बड़ा आनन्द आता था। उन्होंने इटली की स्वाधीनता का यह इतिहास बहुत खोज के साथ लिखा है। मेजिनी, ग्यारीबाल्डी, केवूर, इत्यादि इटालियन देशभक्तों ने अनेक संकट और कठिनाइयां झेलकर अपनी मातृभूमि इटली को विदेशी अत्याचारी शासन से मुक्त कर के किस प्रकार स्वतंत्र बना दिया—इसका मनोरंजक और उपदेशप्रद इतिहास इस पुस्तक में आपको मिलेगा। इतिहास ही एक ऐसी चीज़ है कि जो हज़ारों वर्ष के पीछे की घटनाओं को एकदम सामने लाकर रख देता है; और विचारशील पुरुषों को उसमें सोचने-विचारने और उचित मार्ग ढूँढ़ने की बहुत कुछ सामग्री रहती है। इसलिए इतिहासिक पुस्तकों का अध्ययन करना प्रत्येक पढ़े-लिखे पुरुष का प्रधान कर्त्तव्य है। इटली की स्वाधीनता का यह इतिहास भी बहुत ही प्रभावशाली, मनोरंजक और उत्साहवर्द्धक है। मूल्य सिर्फ ।।) आठ आने।

८—मराठों का उत्कर्ष

[अनु०—श्रीयुत भास्कर रामचन्द्र भालेराव]

यह पुस्तक जस्टिस रानडे के "राइज़ आफ़ मराठा पावर" (Rise of Maratha Power) का अनुवाद है। छत्रपति शिवाजी महाराज ने दक्षिण में यवनों का दमन कर के किस प्रकार हिन्दू राज्य प्रस्थापित किया, हिन्दुओं की बिखरी हुई शक्ति का संगठन करके किस प्रकार उन्होंने अपने अनुकूल क्षेत्र तैयार किया, उस समय देश की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक दशा कैसी थी, इत्यादि बातों को जानने के लिए इस अनुपम ऐतिहासिक ग्रन्थ का अवश्य अध्ययन करना चाहिए। पुस्तक की विषय-रचना इस प्रकार है :—

१ मराठों के इतिहास का महत्व २ क्षेत्र कैसे तैयार किया गया ३ बीज कैसे बोया गया ४ बीज कैसे अंकुरित हुआ ५ वृक्ष में कोंपल निकली ६ वृक्ष में फल आये ७ शिवाजी का राज्यप्रबन्ध ८ महाराष्ट्र के साधु-महात्मा ९ जिंजी १० अशान्ति में शान्ति की स्थापना ११ चौथ और सर-देश-मुखी १२ दक्षिणी भारत में मराठे १३ मराठों के इतिहास की कुछ सुनी हुई बातें १४ पेशवाओं की डायरी से कुछ वृत्तान्त।

इस पुस्तक की समालोचना करते हुए "भगीरथ" ने लिखा है:—

"इस पुस्तक के विचार कैसे सार-गर्भित हैं—यह प्रश्न करने की आवश्यकता नहीं; क्योंकि उस पर न्यायमूर्ति महात्मा रानडे के कलम की छाप है। × × × × ऐसी पुस्तकों के पढ़ने से आत्म-विश्वास का विकास होता है। आजकल के ज़माने में, जब कि संसार में भारत के विरुद्ध साम्राज्यवादी अपना उल्लू सीधा करने के लिए भारतीयता के सम्बन्ध में व्यर्थ के आक्षेप करते

हों, प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है कि वह उनसे बचने के लिए ऐसी पुस्तकों का पाठ एवं मनन करे"— "भगीरथ"

पुस्तक सजिल्द है। टाइटिलपृष्ठ छत्रपति शिवाजी के चित्र से सुभूषित है। पृष्ठ-संख्या ३२९, मूल्य केवल डेढ़ रुपया १॥) है।

६—सचित्र दिल्ली

[लेखक—श्रीयुत रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे]

इतिहासिक दृष्टि से दिल्ली-इन्द्रप्रस्थ का महत्त्व बहुत बड़ा है। इस नगर ने जितने राजकीय परिवर्त्तन—जितनी राज्यक्रान्तियां—देखी हैं, उतनी शायद ही इस भूमंडल के किसी नगर ने देखी हों। इस नगरी की मिट्टी का एक एक कण चक्रवर्ती सम्राटों की इतिहासिकता से भरा हुआ है। उसीका अत्यन्त प्राचीन काल से लेकर अब तक का सचित्र वृतान्त इस पुस्तक में दिया गया है। कुल सात अध्याय हैं:—

१ प्राचीन और अर्वाचीन वृत्तान्त २ दिल्ली का किला और मुख्य राजप्रासाद ३ दिल्ली की जुम्मा-मसजिद ४ इन्द्रप्रस्थ का महाभारत से वर्णन ५ दिल्ली के आसपास के अन्य स्थानों का वर्णन ६ हिन्दू राजाओं के प्राचीन स्मारक ७ कुतुब-मीनार।

पुस्तक के अन्त में दो परिशिष्टों में सम्राट युधिष्ठिर से लेकर अन्तिम मुसलमान बादशाह बहादुरशाह तक प्रत्येक शासक का नाम और उसके राज्य करने की वर्षगणना भी दी हुई है। दिल्ली के सम्बन्ध में अब तक जितनी इतिहासिक खोज हुई है, सबका इसमें समावेश किया गया है। पुस्तक की भाषा और लेखनशैली साहित्यिक सौन्दर्य से परिपूर्ण होने के कारण इसके पढ़ने में बड़ा आनन्द आता है। "प्रताप" इसकी समालोचना करते हुए इस प्रकार लिखता है:—

"इस पुस्तक में इन्द्रप्रस्थ के प्राचीन इतिहास, इमारतों, किलों इत्यादि का बहुत अच्छा मनोरंजक वर्णन दिया गया है। ऐतिहासिक प्रमाण भी अच्छे दिये गये हैं। इसके बाद "दिल्ली" नामकरण तथा मुसल्मान बादशाहों के समय का सुन्दर वर्णन है। हिन्दी में अन्य भाषाओं की तरह ऐतिहासिक स्थानों के सम्बन्ध में बहुत कम पुस्तकें हैं। हमे इस पुस्तक को देखकर इसलिए बड़ी प्रसन्नता हुई है कि हिन्दी में यह एकदम नई वस्तु है।" "प्रताप"

पुस्तक में दिल्ली के मुख्य मुख्य स्थानों के दस सुन्दर हाफटोन चित्र भी लगाये गये हैं। टाइटिल-पेज, कागज, छपाई, सफाई अत्यन्त मनोरम, मूल्य सिर्फ बारह आने ।||) रखा गया है। आप भी इस पुस्तक की एक कापी मँगाकर अवश्य पढ़ें।

१०—सदाचार और नीति

[लेखक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

पुस्तक का विषय गम्भीर होने पर भी उसका विवेचन इतनी सरल रीति से किया गया है कि आबाल-वृद्ध नर-नारी सबके लिए पुस्तक उपयोगी होगई है। बीच बीच में इतिहास के मनोरंजक दृष्टान्त भी दिये गये हैं। संस्कृत और हिन्दी कवियों की मनोहर विताओं का भी समावेश किया गया है। पुस्तक में निम्नलिखित नौ अध्याय हैं:—

१ सदाचार की आवश्यकता और महत्व २ बालपन और गृह-शिक्षा ३ सदाचार और शिक्षा ४ सदाचार और व्यवहार ५ सदाचार और सत्कार्य ६ आत्म-निरीक्षण ७ आत्म-संयमन ८ सदाचार और श्रद्धा ९ समाज के नियम।

इस पुस्तक की समालोचना करते हुए "आर्य-मित्र" लिखता है:—

"इस पुस्तक में वाजपेयीजी ने अपनी ओजस्विनी भाषा द्वारा

सदाचार और नीति की मार्मिक मीमांसा की है। पुस्तक जहाँ ज्ञातव्य बातों से पूर्ण है, वहाँ उसके भावों की गम्भीरता और भाषा की अद्भुत छटा भी देखने लायक है। प्रत्येक हिन्दी जाननेवाले को इस महत्वपूर्ण पोथी का अध्ययन कर लाभ उठाना चाहिये।"

'आर्यमित्र"

पुस्तक का काग़ज़, छपाई इत्यादि बहुत उत्तम है। पृष्ठसंख्या १५८, मूल्य केवल ।ⅼ=) आने।

११—धर्म-शिक्षा

[लेखक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

हिन्दी भाषा में आर्य-हिन्दू-धर्म की शुद्ध शिक्षा देनेवाला अभी तक कोई ग्रन्थ नहीं था। इसलिए विद्यार्थियों और सर्वसाधारण को स्वधर्म का अध्ययन करने-कराने में बड़ी कठिनाई उपस्थित होती थी। इस कठिनाई को अब हमने दूर कर दिया है। आप हमारी "धर्मशिक्षा" को मँगा लीजिए, फिर आपको बड़े बड़े धर्म-ग्रन्थों को देखने का कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। इस एक ही ग्रन्थ में आर्य-हिन्दू-धर्म की सब बातें आपको मिल जायँगी। श्रुति, स्मृति, पुराण, उपनिषद्, गीता, षड्दर्शन, महाभारत, और अन्य अनेक धर्म-नीति-ग्रन्थों की खूब छानबीन करके यह "धर्मशिक्षा" तैयार की गई है। उपर्युक्त सब धर्म-ग्रन्थों के प्रमाण भी बीच बीच में दे दिये गये हैं। इसलिए पुस्तक की उपयोगिता और भी अधिक बढ़ गई है। हिन्दी, अँगरेजी के सब पत्रों ने और बड़े बड़े विद्वानों ने इस ग्रन्थ की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। इस ग्रन्थ में निम्नलिखित विषयों पर सप्रमाण निबन्ध लिखे गये हैं:—

१ धर्म २ धृति ३ क्षमा ४ दम ५ अस्तेय ६ शौच ७ इन्द्रियनिग्रह ८ धी या विवेक ९ विद्या या ज्ञान १० सत्य ११ अक्रोध या शान्ति

१२ धर्मग्रन्थ १३ चार वर्ण १४ चार आश्रम १५ पंच महायज्ञ १६ सोलह संस्कार १७ आचार १८ ब्रह्मचर्य या वीर्यरक्षा १९ दान २० तप २१ यज्ञ २२ परोपकार २३ ईश्वर-भक्ति २४ गुरु-भक्ति २५ स्वदेश-भक्ति यानी भारतवर्ष की महिमा २६ अतिथि-सत्कार २७ प्रायश्चित्त या शुद्धि २८ अहिंसा २९ गोरक्षा ३० ब्राह्म मुहूर्त ३१ स्नान-संध्या ३२ व्यायाम ३३ भोजन ३४ निद्रा ३५ ईश्वर ३६ जीव ३७ सृष्टिरचना ३८ पुनर्जन्म ३९ मोक्ष— इन विषयों का क्रमशः पांच खंडों में धार्मिक विवेचन है; और छठे खंड में सत्संगति, सन्तोष, साधुवृत्ति, दुर्जन, मित्र, बुद्धिमान, पंडित और मूर्ख, एकता, दैव, राजनीति, कूटनीति, साधारण नीति, इत्यादि अनेक विषयों पर चुने हुए सैकड़ों श्लोक अर्थ-सहित दिये हैं, जो कंठाग्र कर लेने से जीवन भर को काम देते हैं।

स्कूल-पाठशालाओं में उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों को यह पुस्तक अनेक स्थानों में पढ़ाई जाती है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में भी कोर्स के तौर पर नियत है। आप यदि किसी पाठशाला या स्कूल के संचालक हैं, तो अवश्य इस "धर्म-शिक्षा" को अपने यहां जारी कर दीजिए। एक पोथी मँगाकर देखिये, तो स्वयं आप इसको देखकर मुग्ध हो जायँगे। कुछ आलोचनाओं का सार यहां दिया जाता है:—

"The very fact that in only about four months time since the publication of the first edition of it another had to be brought out testifies to the value and the immense popularity of this book. It contains beautifully well-written short essays—a sort of lay sermons—on a number of subjects of morality and ethics and as such it makes an excellent text book for students in school. It is in fact written with that aim in view and therefore those interested in

सदाचार और नीति की मार्मिक मीमांसा की है। पुस्तक जहाँ ज्ञातव्य बातों से पूर्ण है, वहाँ उसके भावों की गम्भीरता और भाषा की अद्भुत छटा भी देखने लायक है। प्रत्येक हिन्दी जानने-वाले को इस महत्वपूर्ण पोथी का अध्ययन कर लाभ उठाना चाहिये।" 'आर्यमित्र'

पुस्तक का कागज़, छपाई इत्यादि बहुत उत्तम है। पृष्ठसंख्या १५८, मूल्य केवल ।।=) आने।

११—धर्म-शिक्षा

[लेखक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

हिन्दी भाषा में आर्य-हिन्दू-धर्म की शुद्ध शिक्षा देनेवाला अभी तक कोई ग्रन्थ नहीं था। इसलिए विद्यार्थियों और सर्वसाधारण को स्वधर्म का अध्ययन करने-कराने में बड़ी कठिनाई उपस्थित होती थी। इस कठिनाई को अब हमने दूर कर दिया है। आप हमारी "धर्मशिक्षा" को मँगा लीजिए, फिर आपको बड़े बड़े धर्म-ग्रन्थों को देखने का कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। इस एक ही ग्रन्थ में आर्य-हिन्दू-धर्म की सब बातें आपको मिल जायँगी। श्रुति, स्मृति, पुराण, उपनिषद्, गीता, षड् दर्शन, महाभारत, और अन्य अनेक धर्म-नीति-ग्रन्थों की खूब छानबीन करके यह "धर्मशिक्षा" तैयार की गई है। उपर्युक्त सब धर्म-ग्रन्थों के प्रमाण भी बीच बीच में दे दिये गये हैं। इसलिए पुस्तक की उपयोगिता और भी अधिक बढ़ गई है। हिन्दी, अँगरेजी के सब पत्रों ने और बड़े बड़े विद्वानों ने इस ग्रन्थ की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। इस ग्रन्थ में निम्न लिखित विषयों पर सप्रमाण निबन्ध लिखे गये हैं:—

१ धर्म २ धृति ३ क्षमा ४ दम ५ अस्तेय ६ शौच ७ इन्द्रियनिग्रह ८ धी या विवेक ९ विद्या या ज्ञान १० सत्य ११ अक्रोध या शान्ति

१२ धर्मग्रन्थ १३ चार वर्ण १४ चार आश्रम १५ पंच महायज्ञ १६ सोलह संस्कार १७ आचार १८ ब्रह्मचर्य या वीर्यरक्षा १९ दान २० तप २१ यज्ञ २२ परोपकार २३ ईश्वर-भक्ति २४ गुरु-भक्ति २५ स्वदेश-भक्ति यानी भारत-वर्ष की महिमा २६ अतिथि-सत्कार २७ प्रायश्चित्त या शुद्धि २८ अहिंसा २९ गोरक्षा ३० ब्राह्म मुहूर्त ३१ स्नान-संध्या ३२ व्यायाम ३३ भोजन ३४ निद्रा ३५ ईश्वर ३६ जीव ३७ सृष्टिरचना ३८ पुनर्जन्म ३९ मोक्ष— इन विषयों का क्रमशः पांच खंडों में धार्मिक विवेचन है; और छठे खंड में सत्संगति, सन्तोष, साधुवृत्ति, दुर्जन, मित्र, बुद्धिमान, पंडित और मूर्ख, एकता, दैव, राजनीति, कूटनीति, साधारण नीति, इत्यादि अनेक विषयों पर चुने हुए सैकड़ों श्लोक अर्थ-सहित दिये हैं, जो कंठाग्र कर लेने से जीवन भर को काम देते हैं।

स्कूल-पाठशालाओं में उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों को यह पुस्तक अनेक स्थानों में पढ़ाई जाती है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में भी कोर्स के तौर पर नियत है। आप यदि किसी पाठशाला या स्कूल के संचालक हैं, तो अवश्य इस "धर्म-शिक्षा" को अपने यहां जारी कर दीजिए। एक पोथी मँगाकर देखिये, तो स्वयं आप इसको देखकर मुग्ध हो जायँगे। कुछ आलोचनाओं का सार यहां दिया जाता है:—

"The very fact that in only about four months time since the publication of the first edition of it another had to be brought out testifies to the value and the immense popularity of this book. It contains beautifully well-written short essays—a sort of lay sermons—on a number of subjects of morality and ethics and as such it makes an excellent text book for students in school. It is in fact written with that aim in view and therefore those interested in

the full development of the moral, the religious and the patriotic instincts in the students should find the book particularly suited for the purpose. The subject, the tenor and the style of the book is in marked contrast to those generally found in the text-books at present, prescribed for use in Government or Government-aided institutions. We earnestly commend the publication to the attention of the members of the text-book committees.—

"सर्चलाइट"

"पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी हिन्दी के पुराने और प्रसिद्ध लेखक हैं। आप हिन्दी-केसरी, हिन्दी-चित्रमयजगत्, आर्यमित्र, आदि कई पत्रों के सम्पादक रह चुके हैं, आपने कितनी ही महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखी हैं। हर्ष की बात है कि यह "धर्मशिक्षा" भी वाजपेयीजी की ही ललित लेखनी द्वारा लिखी गई है × × × पुस्तक "धर्मशिक्षा" देने के लिये बहुत उपयोगी है। इसमें एक बात जो खास रखी गई है, वह यह है कि सनातनी तथा आर्यसमाजी दोनों समानरूप से इस पुस्तक-द्वारा लाभ उठा सकते हैं पुस्तक की भाषा परिमार्जित, छपाई सुन्दर और कागज उत्तम है। ऐसी किताबों को स्कूल की धार्मिक शिक्षा में रख देने से बहुत लाभ हो सकता है।"

"आर्यमित्र"

"वाजपेयीजी की इस कृति को बिना किसी हिचकिचाहट के हिन्दूधर्म की कुंजी कह सकते हैं। इसे आप पढ़ें—आपको हिन्दूधर्म की सभी मोटी मोटी बातें, मोतियों की तरह गुँथी मिल जायंगी। विद्यार्थियों के लिए, कोमलमति बालकों के लिए, तो यह अत्यन्त आवश्यक चीज़ है। हमारी हार्दिक इच्छा है कि हिन्दी-प्रदेशों के शिक्षा-विभाग इस—बड़े परिश्रम और खोज से

लिखी हुई—पुस्तक को अपनावें; और प्रान्त के बालकों में इसका और इसकी अमूल्य शिक्षाओं का प्रचार करें" —"मतवाला"

"अनेक धर्मशास्त्रों का अवलोकन करके पंडितजी ने इसकी रचना की है; और स्थान स्थान पर प्रमाणस्वरूप श्रुति, स्मृति तथा पुराणादि ग्रन्थों के श्लोक भी इसमें उद्धृत किये गये हैं। साथ ही इसमें राष्ट्रीयता का भाव भी परिलक्षित किया गया है। इस लिये राष्ट्रीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के लिये यह विशेष उपयोगी है; और स्त्री-पुरुष सब के लिए यह समान लाभदायक है"—"बंगवासी"

"× × × इसमें प्रायः मतभेद-रहित धार्मिक विषयों का बड़ा सुन्दर, सयौक्तिक और हृदयग्राही वर्णन किया गया है। पुस्तक बड़े काम की और संग्रह करने योग्य है। जगह-जगह गीता, उपनिषदों और स्मृतियों से प्रमाण भी दिये गये हैं।"

"स्वतन्त्र"

"बहुत दिन से शिक्षा से सम्बन्ध रखनेवाले लोग इस बात की आवश्यकता अनुभव कर रहे थे कि धार्मिक और नैतिक शिक्षा देनेवाली पुस्तकों का हिन्दी में प्रणयन हो। × × × इधर शिक्षा-संस्थाओं में इस विषय के पढ़ाने की ओर विशेष ध्यान आकृष्ट होने लगा है। ऐसी अवस्था में वाजपेयीजी ने इस पुस्तक को लिखकर बड़ा अच्छा किया। × × × इस पुस्तक को सब तरह से उपयोगी बनाने में कोई कसर नहीं रखी गई है। हम आशा करते हैं कि शिक्षा-संस्थाएं इसे अपने यहां पाठ्यग्रन्थ बनाकर लेखक का परिश्रम सफल करेंगी।" —"सैनिक"

"The nature of the book is didactic. It deals with teachings *re*-a practical moral life. The author has treated the life of an individual in society in its various aspects. He has taken pains to support his statements with copious extracts

from Hindu religious books. The book gives excellent moral teaching to youngmen"— "लीडर"

पुस्तक पौने तीन सौ सफे की है; और मूल्य सर्वसाधारण की सुविधा के लिए सिर्फ १) रु० रखा गया है ।

१२--गार्हस्थ्य-शास्त्र

[लेखक—पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी]

यह ग्रन्थ भी हिन्दी भाषा में बिलकुल अपूर्व है । आजकल हमारे देश में स्त्रीशिक्षा का बहुत प्रचार हो रहा है; पर गार्हस्थ्य-शास्त्र की शिक्षा न मिलने के कारण उनकी वह शिक्षा अधूरी ही रह जाती है। इसी न्यूनता की पूर्ति के लिए हमने यह ग्रन्थ तैयार किया है। उच्चश्रेणी की कन्याओं और घर में बहू-बेटियों के लिए यह पुस्तक मानो कल्पवृक्ष है। गृह-प्रबन्ध की कोई भी बात ऐसी नहीं जिसका इसमें वर्णन न हुआ हो। पुस्तक में छै खंड करके निम्नलिखित विषयों का विवेचन किया गया है:—

१ गार्हस्थ्यशास्त्र और स्त्री-शिक्षा २ गृहस्थी का प्रारम्भ ३ घर कैसा हो ४ घर की स्वच्छता ५ वायु का प्रबन्ध ६ शौचकूप और शौचक्रिया ७ स्नान और स्नानागार ८ शयन और शयनागार ९ भंडार-घर १० रसोई-घर ११ घर की फुलवाड़ी १२ आमदनी और खर्च १३ रुपया कैसे और कहां रखें १४ कपड़े और उनकी व्यवस्था १५ कपड़े धोना १६ कपड़े रँगना १७ फसल पर सामान खरीदना १८ आभूषणों की उपयोगिता और निरुपयोगिता १९ त्योहार उत्सव और धर्मादाय २० यात्रा २१ गृहशोभा का सामान २२ सामान की सफाई २३ वर्तन-भांडे २४ चिराग़बत्ती २५ नौकर-चाकर २६ गाय-भैंस २७ जल का प्रबन्ध २८ भोजन २९ चाय-पानी ३० स्त्रियों के व्यवसाय ३१ सौर का प्रबन्ध ३२ शिशुपालन ३३

रोगी-सेवा ३४ स्त्री-रोग-चिकित्सा ३५ बाल-रोग-चिकित्सा ३६ अन्य रोग ३७ विष और विषैले जन्तु ।

पुस्तक की उपयोगिता के विषय में कुछ पत्रों की सम्मतियाँ देखिये:—

"इस पुस्तक में गृहस्थी-सम्बन्धी सभी उपयोगी विषयों की चर्चा है। बालिकाओं के पाठ्यक्रम में इसे स्थान मिलना चाहिए। यह पुस्तक प्रत्येक बालिका और महिला के पढ़ने योग्य है। वाजपेयीजी का ज्ञान गार्हस्थ्य-शास्त्र के सम्बन्ध में श्लाघ्य है। इसमें ऐसी व्यवहारिक बातों का जिक्र है, जिसे सम्भवतः अधिकांश पुरुष-समाज जानता ही न होगा।"

"प्रताप"

"इस पुस्तक में यह भली भाँति बताया गया है कि गृह-प्रबन्ध कैसे करना चाहिए। हिन्दी में स्त्री-शिक्षा और गृह-प्रबन्ध-सम्बन्धी पुस्तकों का बेतरह अभाव है। सुयोग्य ग्रन्थकार ने उक्त अभाव को इस पुस्तक द्वारा दूर करने का प्रशंसनीय उद्योग किया है। आशा है, हिन्दी-भाषियों में इसका समुचित आदर होगा।"

"स्वतन्त्र"

"अपने विषय की शायद यह प्रथम पुस्तक है। × × × इसमें गृहस्थी के दैनिक काम में आनेवाली बातों को, यथोचित रीति से, स्पष्टीकरण कर समझाने की चेष्टा की गई है। यह पुस्तक प्रत्येक गृहस्थ के पास रहनी चाहिए। भाषा सरल है। लेखक ने इस पुस्तक को हिन्दी-संसार के सामने रखकर उसकी एक भारी कमी पूरी की है।"

"कर्मवीर"

"अँगरेज़ी साहित्य में "डोमेस्टिक एकोनोमी" और "डोमेस्टिक साइंस" पर बहुत साहित्य पाया जाता है; पर वह पश्चिमी समाज के अनुकूल होने के कारण हमारे घरों के लिए उसका कुछ भी उपयोग नहीं हो सकता। हमारे लिए तो ऐसा ही "गार्हस्थ्य-शास्त्र" चाहिए, जो हमारी गृहस्थियों की आवश्यकताओं के अनु-

कूल लिखा गया हो। यह पुस्तक इसी ढङ्ग की है। इसमें छः खंड करके घर के भिन्न भिन्न भागों की व्यवस्था, आय-व्यय इत्यादि के प्रबन्ध की सब बातें, घर के सामान इत्यादि के संग्रह, उसके संरक्षण के उपयोगी उपाय, स्त्रियों के फ़ुरसत के समय के काम, इत्यादि विषयों के भिन्न भिन्न प्रकरणों पर लगभग चालीस निबन्ध दिये गये हैं। पुस्तक के अन्त में बालकों, स्त्रियों और सर्वसाधारण के रोगों पर अनेक सरल घरेलू नुसखे भी दिये गये हैं। प्रत्येक गृहस्थ और गृहिणी को यह पुस्तक मँगाकर अवश्य पढ़नी चाहिए।"

"सैनिक"

"The aim of the writer of this treatise on domestic economy is to give the reader some sound and suitable directions *re.* the numerous needs and duties of house-hold life. The wide range which he has covered shows diligence on his part. The language is simple. The book should prove useful to girls and even grown-up ladies."

—"लीडर"

"गार्हस्थ्यशास्त्र पर संसार की सभी उन्नत भाषाओं में एक से एक बढ़ कर ग्रन्थ हैं। परन्तु हमारे यहां इस विषय की ओर नहीं के बराबर ध्यान दिया गया है। स्त्री-शिक्षा की ओर हमारे समाज ने बहुत कम ध्यान दिया है। हमारी बहनों और बहू-बेटियों में गार्हस्थ्यशास्त्र की अनभिज्ञता के कारण समाज के अनेक गृहस्थ्य जो कष्ट पाते हैं, वह किसीसे छिपा नहीं है। बाजपेयीजी की यह पुस्तक समाज की गृहस्वामिनियों और भावी गृहस्वामिनियों के बड़े मसरफ़ की है। गृहस्थी की छोटी छोटी बातों से लेकर घरेलू नुसखे तक इस पुस्तक में दे दिये गये हैं। पुस्तक प्रत्येक गृहस्थ के घर में रहने लायक है"।

"मतवाला"

"We are glad to find this first attempt to write a book in Hindi on such an useful subject as domestic economy. * * * He (author) covers a wide range of subjects connected with domestic economy which should form a very important subject of study in Girls' Schools in this country. It is a book written in simple Hindi and eminently adapted to the needs and requirements of girls whether in Middle, High or Normal schools or at home. It should also prove useful and of considerable help to even grown up ladies in their successfully discharging the duties of a house-hold life."—

"सर्चलाइट"

घर-गृहस्थी के सम्बन्ध में जानने योग्य सब बातों का इस पुस्तक में बड़ी अच्छी विधि से समावेश किया गया है। भाषा खूब प्राञ्जल और प्रभावपूर्ण है। इस पोथी को कन्याशालाओं, कन्याविद्यालयों के कोर्स में रख देने से बड़ा हित साधन होगा। हम चाहते हैं कि प्रत्येक कुटुम्ब में इस पुस्तक की एक एक प्रति रखी जाय।"

"आर्यमित्र"

"यह गृहस्थों के लिये बड़े काम की है; और इसे पढ़कर वह अपने जीवन को सुधार सकते हैं। गृहस्थ-सम्बंधी सभी विषयों पर इसमें प्रकाश डाला गया है। विशेषतः पढ़ी-लिखी गृह-देवियों के लिये यह बहुत ही उपादेय है; और खासकर उन्हीं के लाभ के लिये सरल भाषा में इसका प्रणयन किया गया है। इसलिए उनको इसका अध्ययन करके अपने गार्हस्थ्य जीवन को सार्थक बनाना परमावश्यक है। × × × इसकी छपाई-सफाई बहुत ही अच्छी है

और प्रायः पौने तीन सौ पृष्ठों में समाप्त हुई है। मूल्य सिर्फ १) रु० है।"
"वंगवासी"

१३—हृदय का कांटा

[लेखिका—श्रीमती कुमारी तेजरानी दीक्षित बी० ए०]

इस सामाजिक उपन्यास की लेखिका एक सुशिक्षित और विदुषी महिला हैं। हिन्दी भाषा में अनेक पुरुषों ने उपन्यास लिखकर नाम पैदा किया है; पर कुमारी तेजरानीजी दीक्षित एक पहली ग्रेजुएट महिला हैं, जिन्होंने यह उपन्यास लिखा है; और खूब लिखा है। इसकी प्रशंसा हिन्दी और अँगरेज़ी के सभी पत्रों ने मुक्तकंठ से की है। कुछ समालोचनाओं का सारांश यहां दिया जाता है:—

"यह एक सामाजिक उपन्यास है। एक ज़मींदार का लड़का महेशचन्द्र, अपनी कुरूपा स्त्री प्रतिभा से विमुख होकर अपनी साली मालती की सौन्दर्य-आग में कूदता है; और फिर उसीके पीछे अपना सर्वस्व खोकर जगह जगह संसार में ठोकरें खाता है, तब कहीं उसे होश आता है; और वह अपनी पतिव्रता पत्नी की विभूतियों पर न्योछावर हो जाता है। बालिका कनक और मालती के चरित्र-चित्रण-द्वारा, वर्त्तमान हिन्दू-समाज में लड़कियों और विधवाओं का क्या हाल है, इस पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। महेश-द्वारा त्यक्त किये जाने पर, मालती के वेश्या हो जाने पर, एक स्वयंसेवक द्वारा उसका उद्धार पाना, देश के स्वयंसेवकों के लिये अनुकरणीय आदर्श है। चरित्र-चित्रण मालती और महेश के समान ही प्रतिभा का भी अच्छा हुआ है। × × × इसमें कोई सन्देह नहीं अगर हमारे घरों की महिलाएं प्रतिभा सी वीर पतिपरायण और

कर्मनिष्ट हों, तो गृहस्थ आश्रम वड़ा ही सुखकर हो जाय × × × पुस्तक एक कुमारी की पहली कृति है। इसलिए प्रशंसा और प्रोत्साहन के लायक है। हम लेखिका महाशय को, इस प्रथम प्रयास में बहुत कुछ सफलता प्राप्त करने के लिए, बधाई देते हैं; और आशा करते हैं कि भविष्य में हिन्दी-साहित्य में वे नवीन विचारों से पूर्ण अपनी सुन्दर कृतियों को लेकर एक महत्व-पूर्ण स्थान प्राप्त कर लेंगी।"

"प्रताप"

"पुस्तक अच्छे ढंग से लिखी गई है। कहीं अश्लीलता नह आने पाई। घर में बाल-बच्चे सब इसे पढ़ सकते हैं—" "आर्यमित्र"

"हर्ष की बात है कि हिंदी के उपन्यास-क्षेत्र में अब महिला-लेखिका का भी दर्शन होने लगा। प्रस्तुत उपन्यास उदीयमान लेखिका कुमारी तेजरानी दीक्षित बी० ए० की पहली कृति है। हिंदू विधवा लोभनों में पड़कर किस प्रकार पतित होती हैं, इसका इसमें वड़ा रोमाञ्चकारी चित्र खींचा गया है। × × × पुस्तक उपादेय है। पढ़ने में खूब जी लगता है।"

"विश्वमित्र"

"हम कुमारीजी के इस प्रथम प्रयत्न का हृदय से स्वागत करते हैं। उपन्यास रोचक है। चरित्र-चित्रण भी अच्छा है। भाषा में लेखिका की सहृदयता टपकी पड़ती है। भाषा में कविता और रचना-सौन्दर्य भी है। × × × उपन्यास-प्रेमियों को एक बार इसे मँगाकर अवश्य पढ़ना चाहिए।"

"अभ्युदय"

"Miss Tej Rani Dikshit is well-known to early all the readers of Hindi magazines as a hort-story writer of eminence and specially as an uthoress of nursery tales and rhymes. She has ow produced a novel "Hridaya-ka-kanta", which bound to make a hit with those who are fond of

wholesome fiction. She has dealt with the common theme of the miseries of a Hindu wife, illiterate, and rather plain, but faithful to the end. Widowhood in India is a terrible phenomenon. It has been portrayed effectively. The story is touching and * * * * *
the achievement is full of promise." "ट्रिब्यून"

"× × × पुस्तक की भाषा सरल, सुरुचिपूर्ण और माधुर्यमय है। इस उपन्यास का आरम्भिक अंश जितना चित्ताकर्षक है, वैसा ही इसका अन्त भी शिक्षाप्रद है। ऐसे मौलिक उपदेशपूर्ण उपन्यासों से हिन्दू-समाज और हिन्दी भाषा का बहुत कुछ उपकार होने की सम्भावना है।" "मतवाला"

"कुमारी तेजरानी के इस उपन्यास में स्वाभाविकता है, सरलता है; और है स्त्री-जीवन का यथार्थ चित्र। × × × × श्रीमती तेजरानी के इस प्रथम प्रयत्न को हम आदर की दृष्टि से देखते हैं—इस लिए की कथानक में स्वाभाविकता है, चरित्रों में शिथिलता नहीं है; और सब से अधिक यह कि स्त्रीजीवन को स्वयं एक कुमारी ने अपनी कलम से चित्रित किया है—" "कर्मवीर"

"In the Hridaya ka kanta" attempt has been made to portray and picture some of the most important aspects of our social life. On one side while it draws our attention prominently to the helplessness of the widows—particularly the girl widows in the Hindu homes—and to the defective character-building of our English-educated youths, on the other it also brings into bold relief the

purity of love, the strength of character, the intense devotedness and the superb power of forbearance of a Hindu wife. We have no hesitation in saying that Kumari Tejrani is a promising authoress and she deserves every encouragement. The book is neatly printed and attractively got up. **"सर्चलाइट"**

इससे अधिक पुस्तक की और क्या प्रशंसा की जा सकती है? पुस्तक का कागज, छपाई बहुत बढ़िया है। आवरण पृष्ठ तो इतना सुन्दर सचित्र सजाया गया है कि देखकर चित्र प्रफुल्लित हो जाता है। निदान पुस्तक का अन्तर्बाह्य सभी रमणीय है। मूल्य सिर्फ १॥) डेढ़ रुपया न्योछावर मात्र है। अवश्य देखिये।

पुस्तकें मिलने का पता—

मैनेजर तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय,

दारागंज, प्रयाग।

हमारी पुस्तकें

निम्न लिखित स्थानों पर भी मिलेंगी:—

(१) हिन्दी-पुस्तक-एजेन्सी,

नं० २०३, हैरिसन रोड, कलकत्ता।

(२) कलकत्ता-पुस्तक-भंडार,

नं० १७१ ए०, हैरिसन रोड, कलकत्ता।

(३) गंगा-पुस्तक-माला-कार्यालय,

अमीनाबाद पार्क, लखनऊ।

(४) साहित्य-भवन-लिमिटेड,

जानसेनगंज, प्रयाग।

(५) हिन्दी-मन्दिर,

जानसेनगंज, प्रयाग।

(६) हिन्दी-पुस्तक-एजेन्सी,

ज्ञानवापी, बनारस।

(७) रत्नाश्रम-पुस्तकालय,

चौक, आगरा।

(८) साहित्य-रत्न-भांडार,

किनारी बाजार, आगरा।

(९) हिन्दी-भवन,

हास्पिटल रोड, लाहोर।

(१०) ए० एच० ह्वीलर एण्ड को०

(रेलवे स्टेशनों के बुकस्टालों पर)

मैनेजर तरुण-भारत-ग्रन्थावली, दारागंज, प्रयाग

॥ श्रीः ॥



बीरबलकी हाज़िर जवाबी और चतुराई ।



स्त्रीके बराबर न कोई बहादुर है न डरपोक

—:*:—

एक दिन अकबर बादशाह और बीरबल दरबारमें बैठे हुए थे। यकायक बादशाहने कहा,—"बीरबल! शहरमें जाकर दो आदमी तलाश कर लाओ। उनमेंसे एक बहादुर हो और दूसरा डरपोक हो।"

बीरबल आज्ञा पाते ही नगरमें चला गया और एक स्त्रीको पकड़ लाया। उसे बादशाहके हुजूरमें पेश करके अर्ज़ की, कि जहाँपनाह! डरपोक और बहादुर हाज़िर हैं।

बादशाहने कहाः—“मैंने तो दो आदमी मँगाये थे, तुम एक ही किस तरह लाये?” वीरबलने जवाब दियाः—“जगत्-रक्षक! इस स्त्रीमें वीरता और कायरपन दोनों गुण हैं।” बादशाहने पूछाः—“यह किस तरह? मुझे समझा कर कहो।” वीरबल बोलाः—“जिस समय आँधी चल रही हो, मूसलाधार मेह बरस रहा हो, बिजली कड़क रही हो, रात ऐसी अँधेरी हो कि हाथको हाथ न सूझता हो, रास्तेमें चोर बदमाश खूनी फिरते हों, वैसे समयमें भी यह स्त्री-ज़ात अपनी जान को हथेली पर रखकर, अपने प्राणोंका मोह त्यागकर, श्मशान-भूमिमें भी, अपने यारके पास वेधड़क चली जाती है। तब आप ही सोचिये, यह क्या कम बहादुरी का काम है? लेकिन यह रातके समय पतिके साथ एक पलँग पर पड़ी हुई भी, ज़रासे खटके से ऐसी डरती है कि, पतिकी छातीसे लग जाती है। तब डरपोकपनमें भी इसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। आपने दो मनुष्य मँगाये थे। मैंने एकही में वीरता और डरपोकपन दोनों गुण दिखा दिये। बादशाह वीरबलकी इस चतुराईसे प्रसन्न हुआ और उसे खूब इनाम दिया।

पीर, बवर्ची, भिश्ती, ख़र ।



एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे इस भाँति कहाः—"लाओ बीरबल ऐसा नर, पीर बवर्ची भिश्ती ख़र ।"

बीरबलने कहाः—"जहाँ पनाह ! अभी तलाश करके लाता हूँ ।" वह बाज़ार गया और वहाँसे एक अपढ़ मूर्ख ब्राह्मणको पकड़ लाया और उसे बादशाहके सामने पेश करके अर्ज़ कोः—"जगत-रक्षक ! इस एक मनुष्यमें चारों गुण हैं ।" बादशाहने पूछाः—"कैसे ?" बीरबलने उत्तर दिया :—"यह ब्राह्मण होनेसे सबका गुरु है, इसवास्ते यह पीर है । खाना पकाकर खिलाता है; इसवास्ते बावर्ची है । भिश्ती मुसलमानोंको पानी पिलाता है और यह हिन्दुओंको जल पिलाता है । भिश्ती का और इसका काम एकही है; इस वास्ते यह भिश्ती है । जब सेठ साहूकार बड़े आदमी सफर करते हैं; तब रास्तेमें जो कुछ गठरी मुटरी होती है उसे इसी पर लाद देते हैं; इस वास्ते यह ख़र—गधा है । जहाँ-पनाह ! इस एक आदमीमें चारों गुण हैं या नहीं ?" बादशाहने ब्राह्मणमें चारों गुण मान लिये और बीरबलको इनाम दिया ।

चार सवालोंका एक जवाब।

एक दिन अकबरने बीरबलसे कहा, कि किसी उस्तादने अपने शागिर्दसे यह सवाल किया था:—

"पान सड़े घोड़ा अड़े, विद्या बीसर जाय।
अहरे पर बाटी जले, चेला कौन उपाय॥"

चेलेने इन चारों सवालोंका एक ही जवाब दिया था। तुम बताओ कि वह क्या जवाब था?" बीरबलने कहा:— "जहाँ-पनाह! उसने यह जवाब दिया था:—"गुरुजी! फेरी नहीं।" इसका साफ मतलब यह है, कि 'पान न फेरने से सड़ जाता है। 'घोड़ा' रोज़-रोज़ न फेरनेसे अड़ने लगता है। पढ़ी हुई 'विद्याको' बारम्बार न फेरनेसे पढ़नेवाला उसे भूल जाता है। इसी तरह 'बाटियाँ' न फेरनेसे जल जाती हैं। बादशाहने इस जवाबको मंजूर किया और बीरबल को इनाम दिया।

मुसल्मान हिन्दू नहीं बन सकता।

एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलको हुक्म दिया:—"एक मुसल्मानको हिन्दू बनाओ। बीरबलने कहा:—"जहाँ-पनाह! एक हफ्तेमें यह काम हो सकेगा। बादशाहने इतनी मुहलत मंजूर की। हफ्ते-भरके दरम्यानमें बीरबल एक गधेको पकड़ कर जमुना पर ले गया

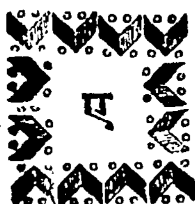
और उसे साबुनसे मल-मल कर धोने लगा। बादशाहने इत्तिफाकसे बीरबलको गधा धोते देख लिया और पूछाः — "बीरबल! यह क्या करते हो?" बीरबलने जवाब दियाः— "गधेको घोड़ा बनाना चाहता हूँ!" बादशाहने कहा "बीरबल! आज तू पागल तो नहीं हो गया? कहीं गधा भी धोनेसे घोड़ा हो सकता है?" बीरबलने कहाः—"जगत-रक्षक! जब गधा घोड़ा नहीं हो सकता, तब मुसलमान हिन्दू कैसे हो सकता है?" बीरबलके इस जवाबको सुनकर बादशाह ला-जवाब हो गये।

मैं बैंगनका नौकर हूँ या आपका ?

एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे कहा "बीरबल! बैंगनका साग बड़ा स्वाद होता है।" बीरबलने कहाः—"जहाँपनाह! इसमें क्या शक है? बैंगन बड़ा मजेदार होता है, तभी तो उसे सब कोई चाहके साथ खाते हैं।" इस बातके कुछ ही दिन पीछे बादशाह बोलेः —"बीरबल! बैंगन तो बहुत ख़राब और अपथ्य होता है।" बीरबल बोलाः—"बेशक, वह बड़ा नुक़सान करता है और कितनीही बीमारियाँ पैदा करता है, इसलिये उसका न खाना ही अच्छा है।" बीरबलका यह जवाब सुनकर बादशाह गुस्सेके मारे लाल हो गया और बोलाः—"बीरबल! तूतो बड़ा झूठा जान पड़ता है। उस दिन तो तैने बैंगनकी तारीफ

की थी और आज उसकी निन्दा करता है।" वीरबल बोला:—"हुजूर! मेरा क़सूर माफ हो। आप ही इन्साफ करें, कि मैं बैंगनका नौकर हूँ या आपका।" बादशाह यह जवाब सुनकर हँस पड़े और वीरबल से राज़ी हो गये।

तदबीर बड़ी है या तक़दीर?



क रोज़ अकबर बादशाहने अपने दरबारियोंसे यह सवाल किया:—"तदबीर बड़ी है या तक़दीर?" बादशाहके इस सवालको सुनकर समस्त दरबारियोंने एक-मत होकर यह जवाब दिया:—"जहाँपनाह! तक़दीरके मुक़ाबिलेमें तदबीर बड़ी है।" वीरबलने अभी कुछ उत्तर न दिया था। जब उससे भी पूछा गया तो उसने कहा:—"जगत् रक्षक! तदबीरसे तक़दीर बड़ी है।" बादशाहने कहा:—"वीरबल! तुम कैसी बात कहते हो? अगर कोई शख़्स कुछ तदबीर—उद्योग न करे, तो क्या तक़दीर उसे खानेको दे देगी?" बीरबल बोला:—"हुजूर! आदमी चाहे जितनी तदबीर क्यों न करे, जो तक़दीरमें नहीं लिखा है वह उसे हरगिज़ न मिलेगा। इसलिये मेरी समझमें तदबीरसे तक़दीर ही बड़ी है।" वीरबलकी यह बात सुनकर बादशाह बोला—"वीरबल! अगर तुम तक़दीरको ही बड़ी समझते हो, तो कोई सुबूत देकर अपनी बातको ठीक साबित करो।" वीरबल बोला:—"पृथ्वीनाथ! इस बातका सुबुत इसी वक्त नहीं

मिल सकता। कोई अवसर आने दीजिये। मौक़ा मिलते ही मैं सबूत दिये विना न रहूँगा।" वादशाहने कहा--"वहुत ठीक" और पीछे आप दरवारको वरख़ास्त करके महलोंमें चले गये।

इस वातके थोड़ेही दिन पीछे, एक रोज़ शामके वक्त वादशाह अपने मुख्य-मुख्य दरवारी, वीरवल, अबुलफज़ल, फ़ैज़ी और टोडरमल प्रभृतिको साथ लेकर नदीकी सैर करनेको गये। सब लोग किश्तीमें सवार थे। अनेक प्रकारकी चित्त प्रसन्न करनेवाली वातें हो रही थीं। इतनेमें वाद्शाहको उस दिनकी "तदवीर और तक़दीरवाली वात" याद आ गयी। वाद्शाहने वीरवलसे पूँछा :—"वीरवल! क्या तुम अव भी तक़दीरको ही वड़ी समझते हो?" वीरवलने उत्तर दिया :—"जहाँ-पनाह! मैं तो उस रोज़ अर्ज़ कर ही चुका। जो जवाव उस दिन था वही आज है।"

वादशाह वीरवलसे वही पहला जवाव आज फिर पानेसे एकदम लाल हो गये। उन्होंने अपने हाथकी अंगूठी निकाल कर चट जमुनाके गहरे पानीमें डाल दी। जहाँ अँगूठी डाली गयी थी, वहाँ जमुना-जल अथाह था। वादशाहने अँगूठी गिराकर कहा :—"वीरवल! अव यह अँगूठी तुमको एक महीनेके भीतर मेरे पास हाज़िर करनी होगी। अगर तुम्हारी तक़दीर वड़ी होगी, तो तुमको यह अँगूठी इस अवधिके अन्दर मिल ही जायगी। अगर तुम यह अँगूठी एक महीनेके भीतर मुझे न दे सकोगे, तो मैं निश्चय ही तुम्हारा सिर तनसे जुदा

करा दूंगा।" बादशाहकी यह बात सुनकर सब लोगोंके होश उड़ गये। सबको निश्चय हो गया कि, अब बीरबल निस्सन्देह थोड़े दिनोंका मिहमान है। क्योंकि इस अथाह अगम्य जलमेंसे अँगूठीका हाथ आना कठिन ही नहीं, वरन असम्भव है। लेकिन बीरबलको इस बातसे ज़रा भी भय न हुआ। वह जहाँका तहाँ चुपचाप बैठा रहा। जब सैर ख़तम हो चुकी, तब बादशाहने जमुना-किनारे सन्तरियोंका सख़्त पहरा बिठला दिया और हुक्म दे दिया कि, एक महीने तक यहाँ मनुष्यकी ज़ात भी न आने पावे।

इस बातको जब सत्ताईस दिन पूरे हो गये, तब बादशाहने बीरबलसे फिर कहा :—"बीरबल! क्या अँगूठी तुम्हारे पास आ गयी? अगर अबतक वह तुमको नहीं मिली है, तो अब उसका मिलना बिल्कुल कठिन है। अब उसके मिलनेकी आशा त्याग दो और तक़दीरके मुक़ाबिलेमें तदबीरको बड़ी मान लो।" बीरबल बोला :—"जहांपनाह! अभी निराश होनेकी कोई वजह नहीं है। क्योंकि अभी तो अवधिमें ही तीन दिन बाक़ी हैं। तीन दिनमें तो क्यासे क्या हो सकता है। तक़दीरसे कहीं तदबीर भी बड़ी हो सकती है? अन्तमें तक़दीर ही की जय होगी।" बीरबलके इस जवाबसे बादशाह और भी अधिक नाराज़ हो गया, परन्तु मुद्दत बाक़ी रहनेके कारणसे कुछ न बोला।

जब शेषके तीन दिन भी पूरे हो गये, तब बादशाहने बीरबलको बुलाकर उससे अँगूठी माँगी। बीरबलने कहा :—

"जगत-रक्षक! मेरी तक़दीर अच्छी नहीं है, इससे अँगूठी नहीं मिली।" वादशाहने कहा :—"तो अब तुमको फाँसी दी जायगी।" वीरवल बोला:—"इसमें क्या शक है? वेशक अब मुझे फाँसी मिलनी चाहिये। मैं मरनेको तैयार हूं, क्योंकि मेरी तक़दीरमें शायद मेरी मृत्यु इसी तरह होनी लिखी है।" वादशाहने कहा—"मुझे तुम पर दया आती है। अगर अब भी तुम अपनी ज़िद्द छोड़ दो, तो वच सकते हो।" बीरवलने कहा :—"वादशाह सलामत! अब आप मुझपर रहम न कीजिये, वल्कि जल्दी फाँसीकी आज्ञा दीजिये।" वादशाहने कहा :—"अच्छा ऐसा ही होगा।"

पीछे वादशाहने सिपाहियोंको बुलाकर हुक्म दिया कि, इसे फाँसीके मैदानमें ले जाओ और फाँसी दे दो। सिपाही आज्ञा पाते ही वीरवलको, हथकड़ी वेड़ी पहनाकर, नङ्गी तलवारोंके पहरेमें, फाँसी लगनेके स्थानमें ले गये। नगरके हज़ारों आदमी वीरवलको देखनेके लिये वहाँ जमा हो गये। सबके मुँहसे यही निकलता था कि हाय! हाय! वीरवलसा बुद्धिमान, न्यायी और दानी पुरुष आज वेक़सूर फाँसी पाता है! इसके मर जानेसे हज़ारों मनुष्योंको महादुःख हो जायगा! अब ग़रीव निस्सहाय दीन-दुखियोंकी वात कौन सुनेगा? सब छटपटाते थे, किन्तु किसीका कुछ वश न चलता था।

फाँसीका ठीक समय हो जाने पर जल्लादों ने वीरवलको फाँसीके तख़्ते पर चढ़ाया और उससे पूछा कि, तुम्हारी अन्तिम

इच्छा क्या है?" बीरबल इस बातका जवाब देने ही वाला था, कि इतनेमें एक फ़क़ीर भीड़को चीरता हुआ बीरबल के पास आया और बोला :—बीरबल! आज तक़दीर ख़राब होनेसे तुझे फाँसी लगनेवाली है। लेकिन इस समय तू एक धर्म्मका काम कर। मुझे बड़े ज़ोरसे भूख लग रही है। बाज़ारसे मछली मँगा और तू खुद अपने हाथोंसे पकाकर मुझे खिला। इस पुण्य-कार्यसे तेरा अवश्य भला होगा।" पहले तो बीरबलने अपने ब्राह्मण होनेके कारणसे मछली पकानेसे इन्कार किया, किन्तु पीछे अपने शुभचिन्तक मित्र-बन्धुओंके कहनेसे उसने इस बातको स्वीकार कर लिया।

एक आदमी दौड़ा हुआ मछली लेने गया और एक मछुएसे मरी हुई मछली ले आया। बीरबल उसे चीरने लगा। चीरते-चीरते उसे एक जगह सख़्तसी मालूम हुई। उसने उस जगहसे उसके दो टुकड़े कर डाले। टुकड़ोंके साथही बादशाहकी अँगूठी ज़मीन पर गिर पड़ी। पासके आदमियोंने यह तो देखा कि कुछ चीज़ गिरी, मगर यह किसीने न जाना कि अँगूठी गिरी है। बादशाह भी खिड़कीमें खड़े हुए, बीरबलको मछली चीरते देख रहे थे, किन्तु उन्हें फ़क़ीरके विषयमें कुछ भी मालूम न था।

बीरबलने बिना किसीसे कहे सुने अँगूठी तो हाथमें दबा ली और राज-कर्म्मचारियोंसे कहा:—"एक बार मुझे बादशाह सलामतसे फिर मिल लेने दो। इस अन्तिम समयमें मुझे उनसे

एक बहुत ही ज़रूरी बात अर्ज़ करनी है। राज-कर्म्मचारियोंने बीरबलकी बात मंज़ूर कर ली और उसे बादशाहके सामने ले गये। उधर बादशाहने जब बीरबलको अपने पास आते देखा, तो मनमें समझा कि बीरबल "तदबीर" की मुख्यता स्वीकार करने आता है। लेकिन कुछ भी क्यों न हो, मैं उसे अब किसी भाँति क्षमा न करूँगा।

बादशाह मनमें ऐसे कतर-ब्यौंत लगाही रहे थे कि, बीरबल उनके सामने जा पहुँचा। बीरबल कुछ बोला भी न था कि, बादशाह बोले :—बीरबल ! कुछ भी क्यों न हो, अब मैं तुमको किसी भाँति क्षमा नहीं कर सकता। अब तुम्हारे दिन निस्सन्देह पूरे हो गये। इस समय तुम यदि "तदबीर" की मुख्यता स्वीकार भी कर लो ; तो भी तुम फाँसी चढ़े बिना नहीं रह सकते।" बीरबल बोला—"जहाँ-पनाह ! मैं 'तदबीर की मुख्यता' स्वीकार करने नहीं आया हूँ, मैं तो श्रीमान् से यह स्वीकार कराने आया हूँ कि 'तदबीर से तक़दीर ही बड़ी है।" बादशाहने कहा—"यह कैसे ?" बीरबलने बादशाहके सामने अँगूठी रख दी। बादशाहने उसको उठाकर बहुत कुछ उलट-पुलट कर देखा और पीछे कहा—"बीरबल ! यह अँगूठी बेशक मेरी वही अँगूठी है। तूने इसे किस तरह पाया ?" बीरबलने कहा—"हुज़ूर ! मेरी तक़दीर इसे ले आई ; नहीं तो आज प्राण जानेमें क्या कसर थी ?" पीछे बीरबलने फ़क़ीरका आना और मछली मँगाना, चीरना

आदि सारी बातें व्यौरेवार कह सुनाईं। बादशाहको इस बातसे बड़ा अचम्भा हुआ।

अकवर शाहने वीरवल की फाँसीका हुक्म रद्द किया और उसे कई लाख रुपये इनाम दिये। साथही यह भी स्वीकार किया कि, बेशक "तदवीरसे तक़दीरही बड़ी है।" उधर रैयतने जब यह सुसमाचार सुना, तब वह अत्यन्त प्रसन्न हुई और बादशाहको आशीर्वाद देने लगी।

मिहतरोंने भी मुसल्मान होना मञ्जूर न किया।

एक दिन अकवर बादशाहने कहा:—"वीरवल! अगर तुम मुसल्मानी-मत क़बूल कर लो, तो तुमको बहुत सा इनाम मिले।" वीरवलने कहा:—"जहाँ-पनाह! इस बातका जवाब अच्छी भाँति विचार कर कल दूँगा।"

वीरबलने घर जाकर शहरके मिहतर बुलवाये और उनसे कहा कि बादशाह तुमलोगोंको मुसल्मान बनाना चाहता है। इस बातके सुनते ही मिहतर घबरा गये। दूसरे दिन सवेरे ही वे बादशाहके पास पहूँचे और कहने लगे :—"जगत-रक्षक! चाहें हमको सूली चढ़वा दीजिये, मगर हमको मुसल्मान न कराइये। हमें मरना मंजूर है, किन्तु मुसल्मान होना किसी भाँति स्वीकार नहीं।" जिस समय मिहतर बादशाहसे

उपरोक्त प्रार्थना कर रहे थे, उस समय बीरबल भी वहाँ मौजूद था। उसने कहा—"दिल्लीपति! जब मिहतरोंको ही अपना धर्म छोड़कर मुसलमान होना ना-पसन्द है, तब दूसरा कौन इस मतको पसन्द करेगा?" बादशाह बीरबलका जवाब सुनकर हँसने लगा।

दक्खन देशके आदमी मूर्ख होते हैं।

एक दिन किसीने बादशाहसे कहा :—"जहाँपनाह! दक्खन देशके आदमी बहुत ही मूर्ख होते हैं।" बादशाहने बीरबलसे कहा कि इसकी परीक्षा होनी चाहिये। बीरबलने पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्खन—चारों दिशाओंसे बहुत ही सुन्दरी और गानेमें निपुण चार रण्डियां बुलाईं। उनके आनेपर महफ़िल सजाई गई। बादशाह बीरबल और सब दरबारी नाच देखनेको महफ़िलमें आ जमे। रातभर खूब नाच हुआ। जब दिन निकलनेमें आध घण्टा रह गया, तब बादशाहने पश्चिम वाली रण्डीसे पूछा :—"बीबी! अब कितनी रात होगी?" उसने जवाब दिया :—"जगत्‌रक्षक! अब तो रात बहुत ही थोड़ी मालूम होती है।" बादशाहने कहा :—"तूने यह बात किस तरह जानी?" वह बोली :—"हुज़ूर! मेरी नथका मोती ठण्डा हो गया है, इससे मैंने जाना कि रात थोड़ी ही शेष रही है।" पीछे बादशाहने यही सवाल पूरब-

की रण्डीसे किया। उसने जवाब दिया—"बेशक, अब रात थोड़ी ही रही है ; क्योंकि मुंहका पान मीठा मालूम होता है।" यही बात जब उत्तरवालीसे पूछी गई, तब उसने जवाब दिया :—"सरकार! चिराग़की रोशनी मन्दी पड़ गई है, इससे मालूम होता है कि निस्सन्देह रात थोड़ी ही रह गई है, सबसे पीछे दक्खनवाली रण्डीकी बारी आई। बादशाहने उससे पूछा :—"अब कितनी रात होगी?" वह बोली :—"अब दिन निकलनेमें बहुत देरी नहीं है।" बादशाहने पूछा :—"तूने किस तरह यह बात जानी?" वह बोली :—"मुझे पाखानेकी हाजत होने लगी है। इससे मालूम हुआ, कि अब प्रभात होनेमें देर नहीं है।"

दक्खनवाली रण्डीका यह जवाब सुनकर बादशाह समेत सारी सभा हँसने लगी। बादशाहने कहा :—"बेशक दक्खनके आदमी महामूर्ख ही होते हैं। उन लोगोंको बातचीतकी तमीज़ नहीं होती।"

चोर पहचाननेकी अजीब अटकल।

किसी साहूकारका बहुतसा रुपया चोरी हो गया। उसने नौकर-चाकरोंको बहुत कुछ धमकाया और उनसे पूछा कि किसने चोरी की है। परन्तु सबने यही जवाब दिया कि हमलोग इस चोरीके विषयमें कुछ भी नहीं जानते। साहूकार बिचारा हार झखमार कर बैठा रहा। किसीने

कहा कि, अगर तुम वीरवलसे कहो तो वह वेशक चोरको पकड़ देगा और तुम्हारा माल भी निकलवा देगा।

साहूकार वीरवलके पास गया और उसे चोरीका सारा हाल सुनाया। वीरवलने पूछा :—"तुमको किस पर सन्देह है?" साहूकारने कहा—"मेरे घरु नौकर हैं तो पुराने और विश्वासी, किन्तु मेरा शुवह उन्हीं पर है। लेकिन मैं किसी एक का नाम लेकर नहीं कह सकता कि, फलाँ आदमीने चोरी की है।"

इस वातको समझकर वीरवलने कुछ तिनके मँगवाये। उन्हें वरावर-वरावर नापकर उनपर मन्त्रसा पढ़ने लगा। पीछे एक-एक तिनका प्रत्येक नौकरके हाथमें दे दिया और उनसे कह दिया कि इन तिनकोंको सव जने रात-भर अपने-अपने पास रक्खो। कल सवेरे मुझे अपना-अपना तिनका दिखाना। जिसने चोरीकी होगी, उसका तिनका एक अँगुल वढ़ जायगा। जिसने चोरी की थी, उसके दिलमें खलवली पड़ गयी। उसने मनमें सोचा कि मैंने चोरीकी है, अतः मेराही तिनका सवेरे एक अँगुल वढ़ेगा। इससे उसने अपना तिनका एक अँगुल काट दिया। वीरवलने सवेरेही आकर सव तिनके देखे। और सव नौकरोंके तिनके तो ज्यों के त्यों थे, किन्तु एक शख़्सका तिनका घट गया था। वीरवलने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा कि तू ही चोर है। उसने कहा—मेरा क्या काम है? मैं सेठजीका पुराना नौकर हूँ। मैंने आजतक ऐसा काम नहीं

किया ।" वीरबलने उसके चूतड़ों पर सड़ासड़ बेत लगवाने शुरु किये । थोड़ी ही देरमें उसने चोरी करना स्वीकार कर लिया और चोरीका माल लाकर वीरबलके सामने रख दिया । वीरबलने माल तो साहूकारके हवाले किया और चोरको बड़े घरकी हवा खानेको भेज दिया ।

वीरबलके इन्साफ़ का नमूना ।

एक रोज़ एक औरतने आकर बादशाहके दरबारमें फ़रियादकी, कि फलाँ पुरुषने ज़बरदस्ती, बिना मेरी मर्ज़ीके, मुझसे भोग कर लिया है । वीरबलने उस पुरुषको दरबारमें बुलाया और उससे उस औरत की नालिश की बात कही और पूछा—"तुम इस मामलेमें क्या जवाब देते हो ?" वह मर्द बोला :—"सरकार ! मैं इस औरत को जानता भी नहीं । यह सरासर सिरसे पैर तक झूँठ बोलती है ।"

वीरबलने कहा—"ऐसे काम एकान्तमें होते हैं, इस लिये ऐसे मुक़दमोंमें कोई गवाह नहीं मिल सकता । मुझे निश्चय है, कि तुमने इस औरत से ज़रूर ज़बरदस्ती की है । इस मामलेमें तुम्हें सज़ा तो सख़्त होनी चाहिये ; पर ख़ैर, तुम पर थोड़ा ही दण्ड किया जाता है । इस स्त्रीको ग्यारह रुपये दे दो ।"

सरकारी हुक्मके आगे वह लाचार था । उसने चट अन्टी

से निकालकर ग्यारह रुपये उस स्त्रीके हवाले किये। वीरवलने स्त्रीसे कहा कि अब तू चली जा। वह दस-बीस क़दम ही गई होगी कि वीरवलने उस मर्दसे कहा, कि तू जाकर उस स्त्रीसे रुपये छीन ले। देख, किसी भाँति रुपये मत छोड़ना। वह मर्द वीरबलकी आज्ञानुसार उस औरतके पास पहुंचा और भरसक ज़ोर लगाकर रुपये छीनने लगा; मगर उस स्त्रीने उसे रुपये न दिये।

पीछे वह स्त्री ही उस मर्दको लेकर वीरवलके पास पहुंची और उससे कहा कि आपने मुझे इससे रुपये दिलवाये थे। यह रास्तेमें मुझसे उन्हें छीने लेता था। वीरवलने पूछा,—"तूने इसे रुपये दिये या नहीं?" स्त्री बोली,—"सरकार! रुपये लेनेको इसने ज़ोर तो बहुत मारा; किन्तु मैंने इसकी एक न चलने दी। इसकी क्या मजाल जो यह मुझसे रुपये लेले?" वीरवलने कहा,—"जब यह पुरुष भरसक ज़ोर करनेपर भी तुझसे रुपये न ले सका तो इसने तेरे साथ ज़बरदस्ती मैथुन कैसे किया होगा? मेरी समझमें तो तू विलकुल झूंठी है। वृथा इस बेचारेको बदनाम किया। इसके रुपये इसको दे दे।" स्त्रीने दम भी न मारा और चुपचाप रुपये दे दिये। वीरवलने उसके बेंत लगवाने शुरू किये। दो-चार बेंत लगते ही वह बोल उठी:—"धर्मावतार! मैं सचमुच ही झूठी हूं। मुझे क्षमा कीजिये।" वीरवलने उसे मुनासिब सज़ा देकर

विदा कर दिया। मर्द भी वीरबलको धन्यवाद देता हुआ अपने घर चला गया।

वीरबलके हंसनेसे मेह बरसना।

एक समय दिल्लीमें बहुत दिन तक मेह न बरसा। बादशाहने नजूमियों और ज्योतिषियोंको बुलाकर मेह बरसानेकी तरकीब पूछी। उन्होंने अर्ज़ की कि जहाँ पनाह! अगर वीरबल हंस पड़े तो बेशक मेह बरस पड़े। बादशाह और वीरबलमें किसी वजह से अनबन हो गई थी। इसलिये बहुत कुछ कहने सुनने से भी वीरबल न हँसा। बादशाह वीरबलसे बहुत ही गुस्सा हो गया और उसे हुकूम दिया कि अभी नगरके बाहर निकल जाओ।

वीरबल बादशाह की आज्ञानुसार नगरसे निकल कर जंगलके रास्ते कहीं जा रहा था। इतनेमें काली-पीली आँधी आगई। चारों ओर घोर अन्धकार छा गया। हाथको हाथ न सूझने लगा। वीरबल पास ही एक फूटा सा मन्दिर पाकर उसमें घुस बैठा।

वीरबल के मन्दिरमें घुसनेके चन्द मिनट बाद ही एक पुरुष गन्नों (साँठों) की भारी लिये वहाँ आ पहुँचा और अपने गन्ने एक तरफ़ रखकर बैठ गया। इसके पीछे एक मनुष्य, जिसका गधा कहीं खो गया था, ढूँढ़ता ढूँढ़ता उसी मन्दिरमें

बैठ गया। इन सबके पीछे एक पुरुष और स्त्री आकर उसी मन्दिरके किसी कोनेमें पड़ रहे। यह पुरुष अपना गौना कराके अपनी स्त्री को लिये आ रहा था। रास्तेमें आँधी आजानेसे इसी मन्दिरमें आगया। वहाँ चार पुरुष थे, पर किसीको किसी का वहाँ होना मालूम न था।

थोड़ी देरमें उस गौनावली स्त्रीको लानेवाले पुरुषका मन अपनी स्त्री पर चल गया। नवीना स्त्री होनेके कारण उसे घर तक पहुँचनेका भी सब्र न हुआ। वह एकान्त स्थान समझ कर मन्दिरमें ही अपनी स्त्रीसे भोग करने लगा। भोग करते-करते उसने स्त्रीसे पूछा—"क्यों प्यारी! कैसा मज़ा आता है?" वह बोली :—"प्यारे! मज़ेकी बात पूछो ही मत, इस समय मुझे तीनों लोक दिखाई दे रहे हैं।" इनकी बातें सुनकर गधेवाला बोला :—"भाई! मेरे गधेको भी देखना, कहाँ है?" जब उस औरतने जाना कि यहाँ और मर्द भी है, तब वह अपने पतिसे कहने लगी :—"अजी! निकाल लो! निकाल लो! इस बातके सुनते ही गन्नेवाला बोल उठा :—"ख़बरदार! यह राजाके गन्ने हैं। अगर किसीने हाथ भी लगाया तो इतने जूते लगाऊँगा कि चाँद पिलपिली हो जायगी।" बीरबल यह बात सुनते ही खिलखिला कर हँस पड़ा : उसके हँसते ही मेह बरसने लगा।

पीछे बादशाहने बीरबलको तलाश करके बुलवा लिया और पूछा :—"क्यों जी! यहाँ तो तुम इतने कहने सुननेसे

भी न हँसे। यहाँ से जाकर कैसे हँसे ?" बीरबलने मन्दिरकी सारी बात बादशाहको सुनाई और कहा कि हज़रत! मेरे हँसनेका यही कारण था। बादशाह बीरबलसे यह बात सुनकर हँसते-हँसते लोट गया।

मुसल्मान मरे भी नहीं और चौबोंने क़बरें पहिलेही खोद डालीं।



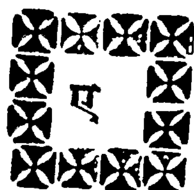
क समय अकबर बादशाहने अपने राज्यमें यह हुक्म दे दिया, कि जब किसी मुसल्मानकी मृत्यु हो, तब चौबे लोग उसके गाड़नेके लिये क़ब्र खोद कर तैयार कर दें। बादशाहके हुक्मके अनुसार चौबोंको ऐसा करना ही पड़ा। लेकिन उनको क़ब्रें खोदनेमें बड़ी भारी तकलीफ हुई। जब उन्हें इस आफ़तसे बचनेका और कोई उपाय न सूझा, तो वे सब लोग एक रोज़ बीरबलके मकान पर पहुँचे। बीरबलको मकान पर बैठे देखकर उनसे इस प्रकार प्रार्थनाकी:—"हे स्वामी! आप बड़े दयालु हैं और हम लोग आपको अपना रक्षक समझते हैं; इस लिये कृपा करके हमें इस दुःखसे बचनेका उपाय बताइये; क्योंकि हम क़ब्रें खोदनेसे महा दुःखी होगये हैं।" उनकी प्रार्थनाको सुनकर बीरबलने इस तरह जवाब दिया:—"आगामी बरसातके

मौसममें तुम लोग वहुतसी क़ब्रें खोदकर तैयार कर देना। जब वादशाह मुझसे इसका सबब पूछेंगे, तब मैं उनको यथोचित उत्तर देकर तुम्हारा यह दुःख मिटा दूंगा।" इस उपायको सुनकर चौबे लोग बहुत ख़ुश हुए और उन्होंने बीरबलके कहे अनुसार हज़ारों क़ब्रें खोद कर तैयार कर दीं। वर्षा ऋतुमें एक दिन सायंकालके समय जब वादशाह और बीरबल हवाखोरी करते हुए क़ब्रस्तानके पास पहुँचे, तो वादशाहको हज़ारों क़ब्रें खुदी हुई देखकर बड़ा भारी अचम्भा हुआ! वादशाहने पासही बीरबलको खड़ा देख उससे पूछाः—"इन हज़ारों क़ब्रोंके खोदनेकी क्या ज़रूरत थी।" बीरबलने जवाब दिया :—"गरमीके मौसममें चौबे लोगोंको कब्रें खोदनेमें बड़ी तकलीफ़ होती है और बरसातके मौसम में धरती मुलायम हो जाती है, इसलिये चौबोंने यह सोचा होगा कि मुसल्मान तो मरें होंगे और कब्रें खोदनी ही होंगी, इसी कारणसे उन लोगोंने क़ब्रें खोद डाली हैं।" वादशाह यह सुन कर, इस तरहकी आज्ञा देनेके लिये बहुत शर्मिन्दा हुए और उन्होंने शीघ्र ही चौबे लोगोंसे क़ब्रें खुदवाना बन्द कर दिया।

———

संसारमें अन्धे ज़ियादा हैं।

—:o:—



एक दिन अकबरने वीरबलसे पूछा :—"संसारमें अन्धे ज़ियादा हैं या सूझते ?" वीरबलने जवाब दिया :—"जहाँ-पनाह ! अन्धे ज़ियादा हैं।" बादशाहको वीरबलके जवाबसे सन्तोष न हुआ। वह कहने लगा :—"वीरबल ! तेरी यह बात तो ठीक मालूम नहीं होती।" वीरबलने उत्तर दिया—"कुछ दिन सब्र कीजिये। मौका आने पर अपनी बात सच साबित कर दिखाऊँगा।"

कुछ दिन बाद वीरबल अपने साथ एक लिखने वाले मुन्शीको लेकर चौक बाज़ारमें जा बैठा और जूते गाँठने लगा। उधरसे हज़ारों आदमी निकलने लगे। जो वीरबलसे यों पूछता—"वीरबल ! आज क्या करते हो ?" वीरबल उसका नाम अन्धोंकी फ़िहरिस्तमें लिखवा देता। अगर कोई यों कहता—"वीरबल ! आज जूते गाँठ रहे हो ! वीरबल उसका नाम सूझतोंकी लिष्टमें लिखा देता। शामके वक्त अकबर बादशाह भी उधरसे निकले। उन्होंने भी पूछा "वीरबल ! आज क्या कर रहे हो ?" वीरबलने उत्तर दिया "जहाँ-पनाह ! मैं आज इस बात की परीक्षा कर रहा हूं, कि संसारमें अन्धे ज़ियादा हैं या सूझते।" बादशाह यह जवाब सुनकर चला गया।

बीरवलने बादशाहका नाम भी अन्धोंकी फ़िहरिस्तमें लिखा दिया।

दूसरे दिन बादशाहके सामने दोनों फिहरिस्तें पेशकी गईं। बादशाहने हिसाब जोड़ा तो अन्धोंकी संख्या अधिक निकली और अन्धोंकी फ़िहरिस्तमें ही अपना नाम भी पाया। बाद-शाहने बीरवलका यह कहना कि "संसारमें अन्धे अधिक हैं" खुशीसे मान लिया।

सब ऋतुओंमें कौनसी ऋतु श्रेष्ठ है?

एक दिन अकबर बादशाह राजके कामोंसे निपट कर अपने सभासदों और मन्त्री लोगोंसे गप्पें मार रहा था। एकाएक उसने सब सभासदोंसे पूछाः—"बतलाओ तो सही कि जाड़ा, गरमी और बरसात इन तीनों ऋतुओंमेंसे कौनसी ऋतु अच्छी है?" उन सभासदोंमेंसे, अपने २ मनके अनुसार, किसीने जाड़ेको, किसीने गरमीको और किसीने बरसातकी ऋतुको अच्छा बताया; किन्तु उन लोगोंके उत्तरसे बादशाह सन्तुष्ट न हुआ। अन्तमें बादशाहने बीरबलसे पूछा। बीरबलने उत्तर दिया :—"महाराज! सच तो यों है, कि पेट भरे पर सब ही ऋतु अच्छी होती हैं; भूखेके लिये तो सब ही ऋतु बुरी हैं।" बीरबलके इस उत्तरसे बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ।

इसको अवश्य ही फाँसी दीजिये।

एक रोज, बादशाहने एक बूढ़े ब्राह्मणको फाँसीका हुक्म दिया। उसी समय बीरबल आ पहुंचा। बादशाहने सोचा कि यह बीचमें बाधा डालेगा, इसलिये बादशाहने बीरबलसे पहले ही कह दिया,—"इस ब्राह्मणके विषयमें कुछ भी मत कहना। आज मैंने तेरी रायके विरुद्ध काम करनेकी प्रतिज्ञा कर ली है।" बीरबलने उत्तर दिया :—"महाराज! इसको अवश्य फाँसी दीजिये।" यह सुन बादशाहने अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार उसे छोड़ दिया।

इस जगत्‌में सुखी कौन है?

एक समय बादशाहने बीरबलसे पूछा :—"बीरबल! इस जगत्‌में सुखी कौन है?" बीरबलने जवाब दिया :—"महाराज! जो मनुष्य इस संसारमें जीवित हैं वे सुखी नहीं; किन्तु जो इस संसारको छोड़कर परलोकको सिधार गये हैं वे ही सुखी हैं।" बादशाहने इसका सबब पूछा। बीरबलने उत्तर दिया :—"जिस मनुष्यको आज हम सुखी देखते हैं, उसपर कल विपत्ति आना क्या असम्भव है? और प्रकटमें जिस मनुष्यको हम सुखी देखते हैं, उसके अन्तःकरणके दुःखको हम कैसे जान सकते हैं? भला जब यह

हाल है तो इस संसारमें किसको सुखी कहें? इसलिये मनुष्य को मरनेके पीछे ही सुख होता है।" बीरबलका ऐसा जवाब बादशाहको बहुत पसन्द आया।

नावका अद्भुत न्याय।

एक दिन बादशाह और बीरबल दरबारमें बैठे हुए किसी विषयपर वार्त्तालाप कर रहे थे। इसी बीच में एक बनिया फ़रियादी होकर आया। बीरबलने उसकी अर्ज़ी पढ़कर उससे सारा हाल पूछा। बनियेने कहा:—"महाराज! मैं व्यौपारी हूँ। बंगदेशसे मालकी नाव भरकर कल यहाँ आया हूँ। नावमें तरह-तरहके मेवे और मसाले हैं। जब मैं यहाँ उतरा, तब नावका मालिक मुझसे बदल गया। वह कहता है कि, यह सब माल मेरा है तेरा नहीं। अफ़सोसकी बात तो यह है, कि मेरे पास मालकी रसीद भी नहीं है। मेरा माल पाँच हज़ार रुपयेका है। मैं अत्यन्त निर्धन हूँ। अगर मेरा माल मुझे न मिलेगा, तो मैं मर जाऊंगा। आशा है, कि सरकार मेरी अर्ज़ पर ध्यान देंगे और ऐसा न्याय करेंगे कि दूध और पानी अलग-अलग हो जायगा।" बनियेकी सारी बातें भली भाँति सुन-समझकर बीरबलने नाव वालेको बुलाया और उसका भी बयान लिया। नाववालेने कहा:—

"महाराज! यह बनिया निस्सन्देह मेरी नावमें बैठकर आया है, किन्तु माल सब मेरा है। इसका कुछ नहीं है। यह वृथा झूंठ बोलता है।" बीरबलने उन दोनों मुद्दई मुद्दायलोंसे ज़िरहके कितने ही सवाल किये, मगर कुछ मतलब न निकला। तब उन दोनोंको छोड़ दिया।

बीरबलने बहुत कुछ दिमाग़ लड़ाया, मगर कोई बात समझ में न आई। पीछे उसको एक युक्ति सूझ पड़ी। उसने शहरके एक नामी व्यौपारीको बुलाया और उससे कहा :—"सेठजी! आज आपको कुछ तकलीफ देनी है। बात यह है, कि कल एक नाव बाहरसे आई है। उसमें मेवे और तरह-तरहके मसाले भरे हैं। मैं उस मालको कम क़ीमतमें ख़रीदना चाहता हूँ। आप सेठ बनना और मैं मुनीम बनूंगा। वहाँ चलकर सौदा करना होगा।" सेठने कहा :—"जैसा आप फ़रमाते हैं, मैं वैसा ही करनेको तैयार हूं।"

बीरबलने दरबारी पोशाक उतार दी और बनियोंकी सी पोशाक पहनकर मुनीम बन गया। पीछे दोनों उस नाव वालेके पास गये। नाव वालेने उनकी ख़ूब ही ख़ातिर-तवाज़ा की। पीछे आनेका कारण पूछा। सेठने कहा :—मैंने सुना है, कि आपके पास मसाले और मेवे हैं। इसीलिये मैं उनके ख़रीदनेको आया हूँ। क्या आप उन्हें बेचेंगे?" नाविकने कहा :—"बेशक मेरा इरादा माल बेचनेका है और जहाँतक हो सकेगा यहाँ ही बेचूंगा।" मुनीमने पूछा :—

"आपके पास क्या-क्या माल है?" नाववालेने कहा :—"बादाम, चिरौंजी, पिस्ते, किशमिश, दालचीनी, इलायची और लौंग वगैरः।" सेठने कहा :—"आजकल इस मालकी दर यहाँ बिल्कुल घट गयी है। मेरे पास भी इस प्रकारका बहुत सा माल है। अगर आप सस्ती दरसे माल दोगे, तो मैं ख़रीद लूंगा। पहिले यह तो बताओ कि तुम्हारा माल है कितनेका?" नाववालेने कहा:—"मेरा माल है तो अधिक मूल्यका; मगर मैं नफ़ा न लेकर, आपको पाँच हज़ारमें बेच दूंगा।" सेठने कहा:—"अगर इतना मोल माँगोगे, तो सौदा नहीं पटेगा। आजकलके गिरे बाज़ारमें इसका मोल रुपये में आठ आना भी मुश्किलसे उठेगा। अगर अढ़ाई हज़ार रुपये लो तो अभी सौदा करते हैं।" नाववाला पहिले तो सकपकाया; किन्तु कुछ देर सोच-समझ कर बोला :—"ख़ैर, जब बाज़ार एक दम ही गिरा हुआ है, तो मुझे टोटा खाकर माल बेचना ही पड़ेगा। आप अढ़ाई हज़ारमें ही माल उठवा लें।" नाववालेके सौदा मञ्ज़ूर करते ही मुनीम बोला :—"सेठ जी! अपने यहाँ इस क़िस्मके मालसे कोठे भरे हुए हैं। वही माल नहीं निकला। इसे और ख़रीद कर क्या करेंगे? आपने मालका नमूना भी नहीं देखा और अढ़ाई हज़ार रुपये लगा दिये!" पीछे उसने नाववालेसे नमूना माँगा। उसने फ़ौरन ही नमूना दिखा दिया। मुनीम ने माल देखते ही कहा :—"सेठजी! यह माल तो भीग गया

है। इसके तो रुपयेमें चार आने भी न उठेंगे। सेठने कहा:—"बात तो ठीक है। यह माल तो मुश्किलसे ही निकलेगा।" मुनीमने कहा:—"ख़ैर, अगर यह एक हज़ार रुपये ले तो माल उठवा लो।" नाववालेने कहा:—"सेठजी! इतना मोल कम न कीजिये। मुझे बहुत घाटा लगेगा।" सेठने कहा:—तुम्हारी खुशी, तुम्हारा माल तुम्हारे पास है। अगर पौसावे तो दो।" इतना कहकर सेठ और मुनीम उठने लगे, तब नाववाला बोला—"ख़ैर, सेठजी आप ले लीजिये। इस बार घाटा हो सही।" मुनीम बोला:—"सेठजी! कल माल ले लेंगे, आज तो समय नहीं है।" इतना कह कर मुनीम और सेठ वहाँसे चले आये।

नाववालेसे कल आनेका इकरार करके सेठ और मुनीम दोनों उस बनियेके यहाँ गये। सेठने बनियेसे कहा—"हम लोगोंने सुना है कि, आप कुछ मेवे मसाले लाये हैं। क्या आप उन्हें इस नगरमें बेचेंगे?" बनियेने जवाब दिया—"महाशय! अगर यहाँ ठीक नफ़ा मिलेगा, तो यहाँ बेचूंगा, अन्यथा और दिसावर ले जाऊंगा!" सेठने फिर पूछा—"आपके पास क्या-क्या माल है और वह किस-किस दरका है? अगर आपका माल अच्छा होगा और आप उसे उचित मूल्य पर बेचेंगे तो हम जरूर ख़रीद लेंगे।" बनियेने कहा—"मेरे पास इलायची, बादाम, चिरौंजी, दालचीनी वग़ैरः मेवे मसाले हैं। यह कुल माल पाँच हज़ार रुपयेका है, अगर इस पर

पाँच सौ रुपये भी नफ़े के मिलेंगे, तो मैं अवश्य बेच दूंगा।" मुनीमने कहा—"भाईजी! आजकल मेवे और मसालेका बाज़ार गिरा हुआ है। इस वास्ते आपको टोटा खाना पड़ेगा। आज दिन आपके मोलमें माल नहीं बिकेगा।" बनियेने कहा—"यहाँ बाज़ार मन्दा है, तो और दिसावर माल ले जाऊंगा। टोटा खाकर बेचने वाला मैं नहीं हूं।" मुनीमने कहा, अड़तालीस सौ रुपये लीजिये। बनियेने कहा—"मैं कौड़ी कम न लूंगा। आप वृथा हैरान होते और मुझे हैरान करते हैं। सौदेकी बात छोड़िये। दूसरी बात कीजिये। मैं और जगह जाकर बेच लूंगा।" फिर मुनीमने कहा—"अच्छा पूरे पाँच हजार लीजिये।" बनियेने कहा—"मैं नफ़े बिना कोई सौदा ही नहीं करता।" अन्तमें लाचार होकर सेठ और मुनीमने कहा—"ख़ैर, हम आपको साढ़े पाँच हज़ार ही देंगे। सौदा पक्का हुआ। कल माल उठवा ले जायंगे और उसी समय हाथ-की-हाथ रुपये दे जायंगे।"

दूसरे दिन कचहरीमें वह बनिया और नाववाला दोनों बुलाये गये। सेठ भी आया। गवाह भी सब हाज़िर हो गये। तब बीरबलने नाववालेसे पूछा:—"यह माल किसका है?" उसने उत्तर दिया:—"माल मेरा है।" बीरबलने कहा—"तुम्हारा ही माल है, इसका सुबूत तुम्हारे पास क्या है?" नाववालेने जवाब दिया—"महाराज! मैंने द्वीप-द्वीप से माल ख़रीदा है। मेरा माल मेरे पास है। उसमें सुबूतकी ज़रूरतही

क्या है ?" वीरबलने बनिये से पूछा—"लालाजी ! तुम्हारे पास क्या सुबूत है ?" बनियेने कहा—"महाराज ! मैं तो पहिले ही अर्ज़ कर चुका हूं, कि मेरे पास कोई सुबूत नहीं है।" वीरबलने नावके मल्लाहोंका बयान लिया। उन लोगोंने गवाही दी कि माल नाववाले ही का है। बनिया झूँठा दावा करता है। तब वीरबलने मल्लाहोंको पिटवाना शुरू किया। मार खाते ही मल्लाह कहने लगे—"महाराज ! इस नाववालेने हमें ग्यारह ग्यारह रुपये और एक एक पागड़ी देनेका इक़रार किया था। इससे हमने झूंठी गवाही दी। वास्तवमें, यह सब माल इसी मुद्दई बनियेका है।"

वीरबलने यह सब बयान हो चुकने पर नाववालेसे कहा "क्यों बेईमान ! तू इस बेचारे बनियेका माल मुफ़्तमें ही डकारना चाहता था। कल मैं और यह सेठजी जब तेरे पास माल ख़रीदने गये ; तब तू पाँच हज़ारका माल पानीके मोल बेचने पर राज़ी हो गया। देवीसिंह पूरे पाँच हज़ारमें भी बिना नफ़ा बेचने पर तय्यार न हुआ। मैं तबही समझ गया था, कि तू बेईमान और झूठा है। बनिया सच्चा है और वास्तवमें उस मालका मालिक है !"

अब मैं तुझे २ सालकी कठिन कैद की सज़ा देता हूं और तेरी नाव ज़ब्त करता हूं। मल्लाहोंको एक-एक मासकी क़ैद झूंठी गवाही देनेके लिये देता हूँ।" पीछे बनिये से कहा—"जाओ, राजका सिपाही ले जाओ और अपना माल नावसे

उतरवालो। तुम्हारी मर्जी हो यहाँ बेचो और तुम्हारी इच्छा हो और जगह बेचो।"

बादशाह बीरबलके इस अद्भुत न्यायसे बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसकी बुद्धिमानी को प्रशंसा की और उसे बहुत सा पारितोषिक दिया।

तीन अजीब प्रश्न

अकबरके दरबारके कुछ खोजे यह चाहते थे कि बीरबल किसी भाँति निकाला जावे तो अच्छा हो। उन्होंने उसके निकलवानेके बहुतसे उपाय किये; किन्तु वह इस काममें कृतकार्य्य न हुए; तब उन्होंने एक दिन बादशाहसे कहा—(१) आकाशमें कितने तारे हैं? (२) पृथ्वीका बीच कहाँ है? (३) संसारमें स्त्रियाँ कितनी और पुरुष कितने हैं?" बादशाह खोजेसराओंकी बहकावटमें आ गया और उसने बीरबलसे उक्त तीनों सवाल पूछे। बीरबलने कहा—"गायके बदन पर जितने रोएं हैं, उतने ही आसमानमें तारे हैं; अगर आपको विश्वास न हो तो आप गिन्ती करा लें। दूसरे सवाल का यह जवाब है कि जहाँ मैं खड़ा हूं वहाँही जमीनका बीच है। अगर यकीन न हो तो पैमायश करनेवालोंको नपाई करने की आज्ञा दीजिये। तीसरे सवालका जवाब है तो बहुत ही आसान, किन्तु मैं इस भ्रममें पड़ा हूं कि इन खोजों

को किसमें गिनूँ। इन्हींकी वजहसे मेरा लगा लगाया हिसाब बिगड़ता है। बादशाह बीरबलके इन जवाबोंसे बहुत खूश हुआ। खोजेसराओंने शर्मके मारे गर्दन नीची कर ली।

अजीब दिल्लगी
और
बादशाहका स्वर्गकी सैर करना।

एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे कहा—"बीरबल! कोई ऐसी दिल्लगी कर जैसी किसीने न की हो।" बीरबलने कहा—"हुजूर! तीन महीने की मुहलत दें।" बादशाहने कहा—"बहुत ठीक।" इसके पीछे बीरबल दरबारसे अपने घर चला गया और दूसरे दिन कहला भेजा कि मैं सख्त बीमार हूं। पाँच या सात दिन पीछे कहला भेजा कि बीरबल मर गया। बादशाहके मन्त्री मुसाहिब उसे मरा देख आये। पीछे उसका अग्नि संस्कार हो गया। वास्तवमें बीरबल मरा नहीं था। यह सब उसकी चालाकी थी, जो उसने अपने तईं मरा हुआ मशहूर कर दिया और किसी को तिल भर सन्देह न हुआ। बादशाहको बीरबलकी मृत्युसे भारी दुःख हुआ। वह मनमें कहने लगा कि बीरबल मेरी दिल्लगी

की बातके सोचमें मर गया। हाय! मैंने ऐसी बात क्यों कहीं! वृथा, ऐसा बुद्धिमान आदमी गँवाया।

बादशाह तो बीरबलके रंजमें थे; उधर बीरबलने चुपचाप अपने घरसे क़िलेतक एक सुरङ्ग तय्यार कराई। जब सुरङ्ग तय्यार हो गयी तो उसने एक गधेको ऐसा सधाया, कि वह सुरंगतक जावे और लौट आवे। जब यह काम हो चुके; तब एक रोज़ रातके समय बीरबल क़िलेमें गया और एक तमोली-की दूकानपर जाकर खड़ा हो गया। उससे एक बीड़ा पान माँगा। तमोलीने बीड़ा लगाकर दे दिया। बीरबलने उसे एक अशर्फ़ी पकड़ा दी। तमोली कहने लगा—"सरकारको बन्दा पह-चानता तो है, मगर कुछ शक है। कहिये, आप कहाँसे तशरीफ़ लाते और आप कौन हैं? बीरबलने कहा—"मेरा नाम बीरबल है। मैं स्वर्गमें रहता हूं और वहींसे आता हूं। तुम यह बात किसीसे कहना मत।" यह कहकर बीरबल चला गया। दूसरे दिन वह फिर आया और पान खाकर तथा दो अशर्फ़ियाँ देकर चला गया।

तमोलीके पेटमें बात न पची। उसने बादशाहसे अर्ज़ की—"जहाँपनाह! मेरे पास बीरबल दो रोज़से आता है और पान खाकर चला जाता है। परसों एक और कल दो अशर्फ़ियाँ दे गया। मैंने उससे पूछा कि 'तुम कहाँ रहते हो?' तो उसने जवाब दिया कि "मैं स्वर्गमें रहता हूं।" बादशाहने तमोलीसे कहा—"अब जब बीरबल आवे, तो मेरे पास ज़रूर ले

आना।" तीसरे दिन वीरवल फिर आया। तमोलीने कहा—"आपको बादशाह सलामत बुलाते हैं।" वीरवलने कहा—"कल चलूँगा।" तमोलीने बहुत कुछ कहा और ज़िद की; मगर वीरबलने न माना और चल दिया तथा वहीं सुरंगमें घुस कर ग़ायब हो गया।

चौथे दिन वीरवल फिर आया। तमोली उसे बादशाहके पास ले गया। बादशाहने कहा—"वीरवल! मैं तुझे देखकर बहुत ही ख़ुश हुआ। तू अकेला ही स्वर्गका आनन्द लूटता है। मुझे भी वहाँकी सैर करा दे।" वीरवलने कहा—"जहाँ-पनाह! स्वर्ग की सैर बड़ी कठिनता से होती है। आपको भेष बदलना होगा और एक प्रकार की स्वर्गीय सवारी पर चढ़ना पड़ेगा। जब आप रास्तेमें चलेंगे, तो शैतान और उनके बच्चे आपका दिल फेरनेकी ग़रज़ से आपको बहकावेंगे और कहेंगे—"बादशाह सलामत! आज कैसा हाल है और आज आप कहाँ तशरीफ़ ले जा रहे हैं!" पर आप उनकी बातोंका कुछ भी जवाब न देना। अगर आप उनसे बातचीत करेंगे, तो फ़ौरन गिर पड़ेंगे।" बादशाहने वीरवलकी सारी बातें मंज़ूर कीं। तब वीरवलने बादशाह की आँखोंपर पट्टी बाँध दी और उनकी दाढ़ी एक ओरसे मूँड़कर मुँह काला कर दिया। पीछे उन्हें गधेपर चढ़ाकर, सुरङ्गकी राह लाकर क़िलेमें छोड़ दिया। गधेने बादशाहको अपनी पीठपर लिये हुए क़िलेमें चक्कर लगाने शुरू किये। जो देखता

वही डरके मारे न बोलता। किसी-किसीने कहा—"बादशाह सलामत! आज यह क्या हाल है? आप कहाँ जाते हैं?" मगर बादशाह गिरनेके भयसे किसी की बातका जवाब न देता। अन्तमें एक मुसाहिबने हिम्मत करके बादशाहकी आँखोंकी पट्टी खोल दी। पट्टी खुलते ही बादशाहने अपनेका क़िलेमें पाया और बहुत ही लज्जित हुआ। पीछे नहा-धोकर बादशाह दरबारमें आया। बीरबल भी हाज़िर था, बादशाहने कहा—"यह क्या गुस्ताख़ी है?" बीरबलने कहा—"हुज़ूर! कुछ गुस्ताख़ी नहीं, मैंने तो आपके हुक्म की तामील की है। आपने ही फ़रमाया था, कि ऐसी दिल्लगी कर जैसी किसीने न की हो। इस जवाबसे बादशाहको अपनी बात याद आगई। बादशाहने कहा—"बीरबल! तू भी एक ही आदमी है।

बकरी वज़नमें घटने बढ़ने न पावे।

एक दिन अकबर बादशाह बीरबलसे नाराज़ हो गया और उसे अपने दरबारसे निकाल दिया। बीरबल शहर छोड़कर चला गया और किसी गाँवमें जाकर इस ढँगसे रहने लगा, कि किसी को ख़बर न हो कि यह बीरबल है।

कुछ ही दिन बाद बादशाहका क्रोध शान्त हो गया और उसे बीरबलकी याद आई। बहुतेरा पता लगाया, किन्तु कहीं पता न चला। बिना बीरबल बादशाहकी बेकली बढ़ने लगी। एक दिन बादशाहने एक-एक बकरी आस-पासके सब गाँवोंमें भेज दी और गाँवोंके मुखियाओंसे कहला दिया कि, इस बकरीका वज़न घटने-बढ़ने न पावे; यानी यह तौलमें जितनी आज है उतनी ही रहे। एक महीने बाद इसे मेरे दरबारमें लेकर आओ।

गाँवों वाले बड़े हैरान और परेशान हुए। जो बकरीको अच्छा २ माल खिलाते, तो उसकी तोल बढ़ने लगती और जो भूखों मारते या कम खिलाते तो घटने लगती। बेचारोंने बहुत कुछ बुद्धि लड़ाई, पर काम न बना। जिस गाँवमें बीरबल ठहरा हुआ था, उस गाँवके लोग भी बड़ी चिन्तामें थे। बीरबलने उनसे कहा—"भाई! चिन्ता मत करो। दिन भर इसे खूब खिलाओ और शामके वक्त इसे ज़रा देरको भेड़िया दिखा दिया करो। इस तरह करनेसे इसकी तोल कदापि न घटे बढ़ेगी। गाँववाले बीरबलके कहने माफ़िक़ ही काम करते रहे।

महीनेके पूरे होने पर सब गाँववाले अपनी-अपनी बकरियाँ लेकर दरबारमें हाज़िर हुए। सब की बकरियाँ घट-बढ़ गईं। किन्तु एक गाँवकी बकरी ठीक उतनी ही उतरी, जितनी कि दरबारसे तोल कर दी गयी थी;

बादशाहने उस गाँवके मुखियासे पूछा—"तुम्हारी बकरी तोलमें क्यों न घटी-बढ़ी?" उसने उत्तर दिया—"जहाँ-पनाह! पहिले तो हमलोगोंको बड़ी हैरानी हुई। पीछे एक आदमीने, जो अभी थोड़े दिनसे हमारे गाँवमें जाकर बसा है—हमें तजवीज़ बताई कि तुम लोग बकरीको दिनभर ख़ूब खिलाओ और शामको ज़रा भेड़िया दिखा दिया करो। हमने वैसा ही किया।" बादशाहने कहा—"उस आदमीको जल्द हाजि़र करो।" गाँववाले बीरबलको ले आये। बादशाह बीरबलको देखते ही प्रसन्न हो गया और उसे उसकी चतुराईके कारण बहुतसा इनाम दिया।

औसान ही बड़ा हथियार है।

एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे पूछा—"बीरबल! सबसे बड़ा हथियार कौनसा है?" बीरबलने जवाब दिया—"जहाँपनाह! औसान ही बड़ा हथियार है।" बादशाहके दिलमें यह बात न जँची। उसने नगरमें ढिंढोरा पिटवा दिया, कि कल सवेरे कोई घरसे बाहर न निकले। सिर्फ़ बीरबलको उस समय आनेकी आज्ञा दी।

अगले दिन, सवेरे ही बादशाहने एक मस्त ख़ूनी हाथी छुड़वा दिया। उस समय बीरबल घरसे आ रहे थे। रास्तेमें वही मस्त हाथी सामनेसे आया और बीरबलपर हमला करता

हुआ जान पड़ा। बीरबलने सोचा क्या करें, कोई हथियार भी पास नहीं है। चटपट ही उसे एक युक्ति सूझ गई। पास ही एक कुत्ता पड़ा मिला। उसने उसकी एक टाँग पकड़ कर और फिरा कर उसे ऐसे ज़ोरसे हाथीके सिरपर मारा, कि कुत्ता हाथीके माथेपर भौं-भौं करने लगा। हाथी घबराकर पीछे फिर गया। बादशाहने पूछा—"बीरबल रास्तेमें मस्त हाथीसे कैसे बचे?" बीरबलने कहा - जहाँपनाह! औसान-के बलसे। मैं अर्ज़ कर ही चुका था, कि औसान ही बड़ा हथियार है।" बादशाहने बीरबलकी बात स्वीकार की और उसे इनाम दिया।

गधे तमाखू नहीं खाते।



बीरबल तम्बाकू खाया करते थे, लेकिन बादशाह इसे न खाते थे। इससे बादशाहको तम्बाकू खाना और पिचर-पिचर थूकना बुरा मालूम होता था। एक रोज़ बादशाह और बीरबल कहीं जा रहे थे। रास्तेमें तमा-खूका खेत पड़ा। उस खेतमें एक गधा चर रहा था। लेकिन वह तमाखूको छोड़-छोड़ कर केवल घास खाता था। बादशाह बोले—"देख, बीरबल! गधा भी तमाखू नहीं खाता। इससे मालूम होता है, कि तमाखू बहुत ही बुरी चीज़ है।"

वीरबलने कहा—"जहाँपनाह! सच है। गधे तमाखू नहीं खाते।" बादशाह वीरबलके जवाबका मतलब समझ कर बहुत शर्मिन्दा हुए।

एक दोहेमें चार सवाल।

एक रोज़ बादशाहने वीरबलके सामने नीचे लिखा हुआ दोहा पढ़ा और कहा कि वीरबल! यदि तुम इसका जवाब न दे सकोगे, तो जानसे मारे जाओगे। दोहा यह था :—

> कौन चहै है बरसना, कौन चहै है धूप ?
> कौन चहै है बोलना, कौन चहै है चूप ?

वीरबलने दोहेके जवाबमें चटपट नीचेका दोहा बनाकर पढ़ सुनाया :—

दोहा।

> माली चाहै बरसना, धोबी चाहै धूप।
> साह जु चाहै बोलना, चोर जु चाहै चूप॥

बादशाहने कहा—"वीरबल! तुम्हारा जवाब है तो ठीक; किन्तु इससे मेरा दिल राज़ी नहीं हुआ। कुछ और कहो।" वीरबलने फिर ये नीचेका दोहा बनाकर पढ़ सुनाया :—

दोहा ।

अतिका भला न बरसना, अतिकी भली न धूप ।
अतिका भला न बोलना, अतिकी भली न चूप ॥

बादशाह बहुत ही खुश हुआ और बीरबलको इनाम दिया ।

एक दिन बादशाह अपने मुसाहिबोंके साथ हँसी-दिल्लगी की बातें कर रहे थे। इतनेमें बादशाहको एक दोहा याद आगया । वह दोहा यह था :—

दोहा ।

कहा न अबला करि सके, कहा न सिन्धु समाय ?
कहा न पावकमें जरे, काहि काल नहीं खाय ?

बादशाहने यह दोहा पढ़कर बीरबलसे इसका जवाब माँगा। बीरबलने शीघ्रही इस दोहेके जवाबमें यह दोहा बनाकर पढ़ सुनाया :—

दोहा ।

सुत नहिं अबला करि सके, यश नहिं सिंधु समाय ?
धर्म न पावकमें जरे, नाम काल नहिं खाय ?

बीरबलका जवाब सुनकर बादशाह बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसको बहुत सा रुपया इनाम दिया ।

अक्लमन्दीके सवाल जवाब ।



एकदिन बादशाह अपने मुसहिबोंके साथ बैठा हुआ दिल बहला रहा था। इतनेमें बीरबल आ पहुँचा। बादशाहने सभासदोंसे नीचे लिखे हुए सवालोंके जवाब पूछे :—

[१] दूध किसका अच्छा होता है ?

[२] पत्ता किसका अच्छा होता है ?

[३] फूल कौनसा अच्छा होता है ?

[४] मिठास किसकी अच्छी होती है ?

[५] राजा कौनसा अच्छा ?

[६] फल कौनसा उत्तम ?

सबही सभासदोंने दिमाग़ लड़ाया ; मगर ठीक जवाब किसीसे न बन आया। सबसे पीछे बीरबलने जवाब दिया :—

[१] दूध माका अच्छा होता है।

[२] पत्ता नागर पानका अच्छा होता है, जिसके पानेसे नौकर अपने मालिकके लिये प्राणतक दे बैठता है।

[३] फूल कपासका अच्छा होता है,जिससे संसार अपनी लज्जा निवारण करता है।

[४] मिठास बोलीकी सबसे अच्छी है, जिससे पराये भी, सहजमें, अपने हो जाते हैं।

[५] राजाओंमें इन्द्र सबसे अच्छा है, जो मेह बरसा कर जगत्‌को पालन करता है।

[६] फलोंमें पुत्र उत्तम फल है; जिससे बाप दादोंका नाम रहता है।

बीरबलके इन जवाबोंसे बादशाह बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसे इनाम दिया।

किसकी स्त्री पतिव्रता है ?

अकबरके दरबारमें अनेक अमीर उमरा और राजा महाराजा हाज़िर रहा करते थे। बहुतसे राजा छः महीने तक अपनी राजधानीमें रहते और छः महीने अकबरके दरबारमें। और कितने ही राजाओंके सिवा राठौड़ वंशके राजा अमर सिंह भी दिल्लीमें बादशाह की सेवाके लिये रहा करते थे। केवल उदयपुरके महाराणा प्रताप सिंहजी अकबरकी चाकरीको न आते थे।

एक दिन बादशाहको अपनी बेगमोंमें से किसी एक बेगम पर व्यभिचारका सन्देह हुआ। बादशाहने पता लगाया, तो बात सच्ची पाई। इससे बादशाहको बड़ा रञ्ज हुआ। मनमें कहने लगा—"अफ़सोस! मेरे जैसे बादशाहकी स्त्री ही जब छिनाल निकल गई; तब शायद ही किसीकी स्त्री पतिव्रता हो!"

एक रोज़ दरबार लग रहा था। अमीर-उमरा, मन्त्री और

देश-देशके राजा लोग अपने-अपने स्थान पर बैठे थे। बादशाह ने बीरबलको हुक्म दिया, कि सभामें बीड़ा फिराओ और सबसे कह दो, कि जिसकी स्त्री पतिव्रता हो, वह बीड़ा उठाले। जिसकी स्त्री पतिव्रता होगी, उसका दरबारसे बहुत कुछ सम्मान किया जायगा ; लेकिन बीड़ा लेनेवाले या अपनी स्त्रीको पतिव्रता कहनेवाले की स्त्री यदि पतिव्रता साबित न होगी, तो उसकी गरदन उड़ा दी जायगी।

बीरबलने कई चक्कर लगाये। मगर किसी दरबारीकी हिम्मत न पड़ी, जो बीड़ेको उठावे। सब को अपनी-अपनी स्त्रियोंके विषयमें सन्देह था। जब किसीने बीड़ा न उठाया, तब बादशाहने कहा :—"अफ़सोस ! इतने हिन्दू और मुसल्मान सरदारोंमें किसी भी पुरुष की स्त्री पतिव्रता नहीं है ! धिक्कार है सबको ! बादशाहके मुँहसे यह बात निकलते ही, राजा अमरसिंह राठोड़को गुस्सा चढ़ आया। उसने कहा—"हुज़ूर ! ऐसा न कहें। क्या राजपूतोंमें बिल्कुल ही शौर्य्य-वीर्य्य नहीं रहा ? दूर क्यों जाते हैं ? एक मेरी ही स्त्री महा पतिव्रता और सती-साध्वी है।"

अमरसिंहकी बात सुनकर सब अमीर-उमराओंका मुँह उतर गया। अमरसिंहने बीड़ा उठा लिया। मुसल्मान आपसमें कानाफूसी करने लगे और कहने लगे, कि कोई ऐसी तदबीर करनी चाहिये, जिससे अमरसिंहकी रानी व्यभिचारिणी साबित हो जाय। उनमेंसे एक काना सरदार उठ कर खड़ा

हुआ और बादशाह से बोला—"जहाँपनाह! राजा अमरसिंह वृथा शेख़ी मारते हैं। मैंने इनकी स्त्रीके विषयमें बहुत सी बातें सुन रक्खी हैं। अगर मुझे हुक्म हो, तो मैं इनकी स्त्रीका सारा हाल जान आऊँ; लेकिन एक शर्त है, कि जब तक मैं इनके नगरमें रहूँ, तब तक इनको ऐसे सख़्त पहरेमें रखवाइये, कि यह अपनी रानीको ख़त भेजकर होशियार न कर सकें।" बादशाहने कहा—"तुम चाहते हो, वैसाही बन्दोबस्त कर दिया जायगा; लेकिन एक बात है, कि अगर तुम इनकी रानीको व्यभिचारिणी न साबित कर सकोगे, तो तुमको फाँसी होगी। अभी मौक़ा है, खूब सोच समझ लो जिससे पीछे पछताना न पड़े।" काने अमीरने कहा—"हुज़ूर! मैंने खूब सोच-समझ लिया है। अगर यह बात बे सिर पैर की होती, तो मैं कदापि ऐसी बात कहनेका साहस न करता।" कानेकी ऐसी बातें सुन कर, बादशाहने उसे अमरसिंहके राजमें जानेकी आज्ञा दी और अमरसिंहको नज़रबन्द कर दिया और ऐसा प्रबन्ध किया, कि जिससे वह अपनी रानीसे पत्र व्यवहार न कर सके या और किसी तरह उसे किसी बातकी सूचना न दे सके।

दूसरे मुसलमान अमीर, काने अमीरके इस साहससे, बहुत ही ख़ुश हुए। काना अमीर अमरसिंहकी स्त्रीके चरित्रकी ख़बर लानेके लिये उसके गाँवकी तरफ़ रवाना हुआ। जब वह गाँवमें आया, तो उसे खोज करने पर मालूम हुआ, कि आज तक अमरसिंहकी प्रजामेंसे किसीने भी उसकी रानीका

मुँह तक नहीं देखा है, यहाँतक कि उसके महल की भी किसी को ख़बर नहीं है। अब वह अपनी मूर्खता पर हाथ मलने और पछताने लगा। उसने बहुतसा धन भी ख़र्च किया; मगर तो भी वह इस बातका पता न पा सका। अन्तमें भाग्य-वश, उसे एक मालिन मिल गई, जो पहले अमरसिंहके यहाँ नौकर थी। यह मालिन किसी भारी अपराधके कारण महल से निकाल दी गई थी। जब काने अमीरने अपना मतलब इस मालिन से कहा; तो उसने बहुतसा धन मिलनेके लालचसे उस काने अमीरकी इच्छा पूरी करनेका भार अपने सिर पर उठा लिया। मालिनने उसे महलके तमाम लक्षण बताये; मगर लक्षण मात्र बतलानेसे तो काने अमीर का काम नहीं चल सकता था। इसलिये उसने उसे अमरसिंह की स्त्रीके शरीरके गुप्त लक्षण तलाश करनेके लिये उत्तेजित किया। मालिनने पहले तो इस कामके करनेसे इन्कार किया, किन्तु अन्तमें धनके लोभसे यह काम करने पर राज़ी हो गई। उस मालिन को महलमें घुसने तक की इजाज़त नहीं थी; इस लिये उसने इस समय एक चाल चली। वह मक्कारा, काने अमीरका रथ और सिपाहियोंको साथ लेकर, विदेशसे आये हुए के समान, नगरमें घुसी। इस समय उसका ढंग कुछ और ही था। वह सुन्दर २ कपड़े और गहने पहने हुए थी, जिससे उसका रंग रूप कुछ और का और ही हो गया था। महलके समीप पहुंच कर, उसने अपना रथ खड़ा करवा दिया और

कहलाया, कि राजा अमरसिंहकी फूफी मिलनेके लिये आई है। इस बातको सुनकर रानीको तअज्जुब हुआ और मनमें सोचने लगी, कि मेरे स्वामीके कोई फूफी है या नहीं। फूफी की बात तो मैंने आजतक कभी अपने पतिसे नहीं सुनी, फिर यह फूफी कहाँसे आई? खैर, देखा जायगा। यह सोच कर उसने उस बनावटी फूफीको अन्दर आनेका हुक्म दिया। जब वह भीतर पहुँची, तो अमरसिंहकी स्त्रीने बारीक नज़रसे उसे सिर से पैर तक जाँचा, पर उसमें राजपूत-रमणी होने का कोई लक्षण नहीं पाया गया। स्वामी परदेशमें है, यदि फूफीका सत्कार न करूँ और कौन जाने फूफी सच्ची हो, तो पति इस बातके सुननेसे मुझ पर गुस्से होंगे, यह विचार कर रानी ने उसे घरमें टिकाना ही उचित समझा। तीन चार रोज़ में ही इस बनावटी, दुष्टा फूफीने यहाँका सब हाल जान लिया। जब राजा अमरसिंह दिल्ली गये थे, तब वह अपनी रानीको एक बहुमूल्य कटार और सुन्दर रूमाल जाते समय दे गये थे और कह गये थे कि इनको कभी अलग न करना। अपने पतिके कहे अनुसार, वह सदैव उन दोनों चीज़ोंको अपने पास रखती थी। इन पर मालिनकी नज़र पड़ी और उसने उससे वह रूमाल और कटार माँगे। रानीने देनेसे इन्कार किया। उस बनावटी फूफीने कहा:—"यदि तुम मुझे इन दोनों चीज़ोंके देनेसे इन्कार करोगी, तो मैं रूठ कर चली जाऊँगी और फिर तुम्हारे घर कभी न आऊँगी।" जब रानीने देखा

एक प्रमाण देता हूँ—वह यह है कि रानीकी बाईं जाँघपर दो काले तिल हैं।" इस बातको सुन कर अमरसिंह बहुत ही लज्जित हुआ और उससे कुछ जवाब देते न बना। बादशाह और अन्य अमीर-उमराओंको रानीके कुलटा होनेके विषयमें कुछ भी सन्देह न रहा ; क्योंकि बिना समागमके गुप्त स्थानके चिह्न कैसे मालूम हो सकते थे।

बादशाहने अमरसिंह को दण्ड देने की आज्ञा दी। अमरसिंहने कहा :—"हे स्वामी! मैं बाज़ी हारा। मैं अवश्य ही दण्ड पाने योग्य हूँ। अब मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, कि मैं एक दफ़ा अपनी रानी को उसके दुष्कर्म्मके लिये फटकारूँ ; इस लिये मैं घर जानेकी इजाज़त माँगता हूँ।" बादशाहने कहा :—"यहांसे जाने पर यदि तुम फिर न आओ, तो मुझे तुम्हारे पकड़नेके लिये व्यर्थ तकलीफ उठानी पड़ेगी।" अमरसिंहने उत्तर दिया,—"हम क्षत्री हैं—हम अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेमें सदैव तत्पर रहते हैं।" बादशाहने कहा :—"यदि तुम किसी बड़े आदमीकी ज़मानत दिलवा दो, तो मैं तुम्हें एक महीने की छुट्टी दे सकता हूँ।' अमरसिंहने जवाब दिया :—"हे पृथ्वीनाथ! भला, इस बुरे समयमें मेरा ज़ामिन कौन हो सकता है?"

इतनेही में मोतीलाल नामक सेठ खड़ा होकर बोला :—"हे स्वामी! राजा अमरसिंह को जाने दो, इनकी ज़ामिनी मैं देता हूँ। एक महीनेमें न आवेंगे, तो मेरा सिर मौजूद

है।" मोतीलाल की सब लोग बड़ाई करने लगे और अमरसिंह को घर जानेकी छुट्टी मिल गई। वह घोड़े पर सवार हो १५ रोज़में अपने नगरमें पहुंचा। घोड़ा महलके नज़दीक पहुंचनेपर हिनहिनाया। रानीने झट घोड़ेकी हिनहिनाहटको पहचान लिया। रानीने खिड़कीमेंसे देखा। राजाने रानीको देख कर कहाः—"वाह! वाह!! खूब किया।" बस, इतना कहकर राजा चलता हुआ। अपने स्वामीके इस तरह आकर चले जानेसे और ऊपरके शब्दोंके सुननेसे रानीको बड़ा ताज्जुब हुआ। उसने अपनी दासीको नगरमें भेजा; मगर कुछ भी पता न लगा। रानीको उस फूफीकी बात याद आ गई, जो रूमाल और कटार ले गई थी। रानीने अटकलसे जान लिया, कि हो न हो, यह घटना उस फूफीके रूमाल और कटार लेजानेसे ही हुई है। रानी झट पालकी मंगवा कर दिल्लीको रवाना होगई। अमरसिंहको दुर्योगसे, रास्तेमें एक दिन की देरी होगई, इसलिये रानी एक दिन पहलेही दिल्ली जा पहुंची। दिल्ली पहुंच कर, बादशाहकी वेश्याके मकान पर ठहरी। रानीने उससे बीती हुई समस्त घटनाका वर्णन किया और वेश्याने भी रानीसे अमरसिंहका प्रण और अमीरकी बातोंका ज़िक्र किया। वेश्याने रानीको रात-भर सुखसे आराम करनेके लिये कहा और प्रातःकाल बादशाहके दरबारमें न्याय करानेका इक़रार किया।

इधर फाँसीका दिन नज़दीक आ गया। बादशाहने हुक्म

दिया :—"अमरसिंह अबतक नहीं आया ; इस लिये उसके बदलेमें कल मोतीलाल सेठ मारा जावेगा।" लोग मोतीलाल सेठ पर दया दिखलाते थे, मगर मोतीलाल सेठ अपने मित्रके बदलेमें प्राण देनेसे बहुत प्रसन्न था। राज-कर्म्मचारी नियत समय पर उसे फाँसी देनेके लिये ले गये। मोतीलाल सेठ बहुत ख़ुशीके साथ उस स्थान पर चला गया। जल्लाद उसके गलेमें रस्सी डालही रहे थे, कि "ठहरो, ठहरो" की आवाज़ दूरसे सुनाई दी। मोतीलाल सेठको अमरसिंह घोड़ेपर तेज़ीसे आता हुआ दिखाई दिया। उसने देखा कि मोतीलाल सेठ फाँसीके तख़्ते पर चढ़ा हुआ है। अमरसिंहने झट-पट सेठके गलेमेंसे रस्सी निकाल ली और जल्लादोंसे कहा :—"बादशाहको मेरे पहुँचने की इत्तिला दो। अब बिना उनके हुक्मके कुछ करना ठीक नहीं है। प्रधान जल्लाद उसको बादशाहके पास ले गया। बादशाह को अमरसिंहकी सत्यता पर बड़ा तअ़ज्जुब हुआ और फाँसीका दिन टाल दिया।

बादशाह अमरसिंह की फाँसी का दिन टालकर दरबारसे उठनेही वाला था, कि उसी समय अकबर बादशाहकी प्यारी वेश्या एक स्त्रीको लेकर पहुँची। उस नई आनेवाली स्त्रीका सारा शरीर कपड़ेसे ढका हुआ था। वेश्याने बादशाहके समीप पहुँच कर सलाम किया और इस तरह प्रार्थना करने लगी,—"हे पृथ्वीनाथ! धर्म्मावतार! न्यायमूर्त्ति! मुझ आपकी दासी पर एक भारी अत्याचार किया गया है। यह

स्त्री कल शामसे मेरे यहाँ आकर ठहरी हुई है। रात्रिको यह काना अमीर मेरे मकानपर आया और इसने किवाड़ खटखटाये। हम दोनों उस समय चौसर खेल रही थीं। मैंने इससे कहा कि तू जाकर किवाड़ खोल दे; लेकिन इसने बहुत कुछ ना-नू की और कहा कि जो यह आनेवाला मुझसे छेड़छाड़ करेगा तो मुझे मरना पड़ेगा, लेकिन मेरे समझाने-बुझाने और विश्वास दिलानेसे यह किवाड़ खोलने चली गई। काना अमीर इसको देखते ही इसपर आशिक़ हो गया। इसने इसके साथ बहुत कुछ छेड़छाड़ की। अब यह औरत मरनेपर आमादा है। आप आज्ञा दीजिये, कि क्या करना चाहिये।" शाही रण्डीकी ये बातें सुनकर काने अमीरके होश-हवास ग़ुम हो गये, उसके बदन-का ख़ून ख़ुश्क हो गया। काना बोला,—"किस कमबख़्तने इस औरतका मुँह भी देखा है? मैं तो कभी इस रण्डीके घर गया ही नहीं।"

अमरसिंहने उस सिरसे पैरतक ढकी हुई स्त्रीको पहचान लिया और मनमें कहने लगा,—"ओह! मेरी स्त्री रण्डी हो गई!" लेकिन उसने उस समय बोलना मुनासिब न समझा। बादशाहने कानेसे कहा:—"मेरी रण्डी कभी झूठ नहीं बोलती। मैं इसका हमेशा विश्वास करता हूँ; तुम ज़रूर इसके यहाँ गये होगे और इस औरतसे ज़रूर हँसी-मज़ाक़ किया होगा।" काने अमीरने जवाब दिया:—"जहाँपनाह मैं ख़ुदाकी क़सम

खाकर कहता हूँ, कि मैं कभी इस शाही रण्डीके मकानपर नहीं गया और इस स्त्रीको तो आजके पहले मैंने कभी अपनी आँखोंसे भी नहीं देखा।" इस बातके सुनते ही शाही रण्डी बोली :—"हुज़ूर! यह राजा अमरसिंहकी रानी साहिबा हैं। यह काना राजा साहिबकी राजधानीमें गया और वहाँ जाकर इसने रानीके देखने और उससे मिलनेके बहुतसे उपाय किये, लेकिन यह नाकामयाब हुआ। तब इसने किसी स्त्रीको धनके लालचसे बहकाकर, अमरसिंहकी फ़ूफ़ी बनाकर रानीके पास भेजा। उस स्त्रीने दो-चार रोज़ महलमें रहकर रानीका बहुत सा भेद जान लिया और कटार तथा रूमाल भी रानीसे दम देकर ले लिये। पीछे वह अपना मतलब बनाकर, देवीजीके दर्शन करने का बहाना कर निकल आई। पीछे उसने इस कानेको महलका सारा हाल बतला दिया और कटार तथा रूमाल इस कानेको सौंप दिये। उस औरत द्वारा सुना हुआ हालही इसने आपको सुनाया है और उसीके ज़रियेसे पाया हुआ कटार और रूमाल आपके सामने पेश किया है। असलमें, यह काना रानीके महल तक भी न पहुँच सका। आपने राजा अमरसिंहको फाँसीकी आज्ञा दी; तब यह अपनी राजधानीमें गये और अपनी रानीको लानत-मलामत कर उल्टे पाँव अपनी राजधानीसे चले आये। रानीके दिलमें ख़याल हो गया कि कुछ दालमें काला है और राजा साहब की जान नहीं बचेगी। इसीलिये मजबूरीसे

रानी साहिबा दिल्ली आईं और कल शामको मेरे यहाँ आकर ठहरीं। इस काने अमीरने जो कुछ कहा है, वह सच है। निस्सन्देह इसने रानीको कभी नहीं देखा। एक दो दिन आदमी जिसको देख लेता है, उसको नहीं भूलता। जिसमें यह काना अमीर तो रानीके पास कई हफ़्तों तक रहा। तअज्जुब की बात है, कि इसने रानीको नहीं पहचाना।"

इस भेदके खुलते ही बादशाह की आँखें ग़ुस्सेके मारे सुर्ख़ हो गईं। बादशाहने कानेसे कहाः—"ऐ नीच, पाजी, नालायक, जहन्नुमके कुत्ते ! क्यों कुछ शर्म आती है कि नहीं ? अब तुझे फाँसी होनी चाहिये।" इस आज्ञाके सुनते ही अमरसिंह बोला :—"हुज़ूर ! इसे क्षमा करें।" बादशाहने अमरसिंहके कहनेसे उसे फाँसी न दिलाई ; लेकिन देशसे निकालनेका हुक्म दे दिया और रानीसे कहा :—"बहन ! तू बेशक सती-साध्वी और पतिव्रता स्त्रियोंमें शिरोमणि है। धन्य है वह पुरुष, जिसकी तू स्त्री है।" यह कहकर बादशाहने अमरसिंह की रानी को बहुतसे गाँव और ज़र-जवाहिरात इनाममें दिये और उसको अपने यहाँसे विदा किया।



बेगमें नख़रा करती हैं।

एक दिन बादशाह अकबर शिकार खेलने जा रहे थे। राहमें उन्होंने देखा कि जङ्गलसे फल फूल लाती हुई एक देहातिनको राहमें ही लड़का पैदा हुआ। उस देहातिनने तुरत ही लड़केको कपड़ेसे पोंछ अपनी टोकरीमें रख लिया। यह देख बादशाहको बड़ा ही अचरज हुआ और उसने अपने मनमें समझ लिया, कि हमारी बेगमें झूठ ही नख़रा करती हैं, उनको कोई तकलीफ़ नहीं होती। बस फिर क्या था; उसी दिनसे बादशाहने महलमें जाना छोड़ दिया। बिचारी बेगमें बहुत घबराईं। परन्तु उनको कोई उपाय नहीं सूझा। अन्तमें बीरबलको बुलाकर उनलोगोंने सलाह ली। बीरबलने कहा,—"आप मालियोंको हुक्म दे दें, कि आजसे बाग़ोंका सींचना बन्द किया जाय। हुक्म दे दिया गया, बाग़ोंका सींचना बन्द हो गया। बाग़ोंके पेड़ सब सूख चले और शाही बाग़ उजाड़ दिखाई देने लगे। एक दिन बादशाह सैर करने निकले और अपने बाग़ोंकी दुर्दशा देख बड़े ही दुःखित हुए। बादशाहके पूछताछ करनेपर बेगमोंने कहला दिया कि हमारे हुक्मसे मालियोंने बाग़ोंका सींचना छोड़ दिया है। बादशाहने पूछा,—"तुमलोगोंने ऐसा हुक्म क्यों दिया?" बेगमोंने कहा,—

जैसे जङ्गलके पेड़ हरे रहते हैं; वैसे ही इनको भी हरा रहना चाहिये।" बेगमोंका जवाब सुन कर बादशाह अपनी भूल समझ गये और फिर बेगमोंसे नाराज़ न रहे।

ब्राह्मण प्यासा गधा उदासा।



एक दिन दरबारमें बैठ कर बादशाह अकबरने बीरबलसे कहा—"बीरबल! आज मैंने दो अजीब बातें देखी हैं। तुम उनका भेद बता सकते हो?" बीरबल बोला—"हाँ हुज़ूर!" बादशाहने कहा—"आज मैंने देखा कि एक ब्राह्मण प्याससे व्याकुल इधर-उधर घूम रहा था और उसी समय एक गधा उदास होकर बैठा हुआ था।" बीरबलने कहा,—"यह तो कोई बड़ी बात नहीं है। लोटा न था।" बादशाहने कहा,—"इसका क्या मतलब?" बीरबलने कहा,—"हुज़ूर! ब्राह्मणके पास लोटा न रहनेके कारण, वह इधर-उधर प्यासा घूम रहा था और बँधे रहनेके कारण गधा लोट न सका, इसलिये वह उदास बैठा था।" बादशाह बीरबलके जवाबपर बहुत खुश हुए और उसे बहुत कुछ इनाम दिया।

हथेलीपर बाल क्यों नहीं हैं ?



एक दिन अकबरने बीरबलसे पूछा,—"मेरी हथेलीपर बाल क्यों नहीं हैं?" बीरबलने कहा,—"हुज़ूर! दान करते-करते घिसकर उड़ गये।" फिर बादशाहने कहा,-"जो दान नहीं देते, उनकी हथेलियाँ क्यों साफ़ रहती हैं?" बीरबलने कहा,—"उनकी हथेलियोंके बाल दान लेते-लेते उड़ जाते हैं।" फिर बादशाहने कहा,—"और जो न देते और न लेते, कुछ भी नहीं करते हैं, उनकी हथेलियाँ क्यों साफ़ रहती हैं?" बीरबलने कहा,—"धर्मावतार! वे अपनी इस करनीपर हाथ मल-मलकर पछताया करते हैं। इसीसे उनको हथेलीके बाल उड़ जाते हैं।" बादशाह बीरबलका जवाब सुन बहुत ख़ुश हुए और उसे बहुतसा इनाम दिया।

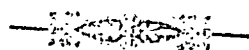


चिरागतले अँधेरा।



एक दिन सन्ध्याके समय बादशाह अकबर अपने क़िलेकी एक बुर्जपर बैठकर यार-दोस्तोंसे बातें कर रहे थे। बुर्जके नीचे सड़क थी, जिस पर लोग बराबर आया-जाया करते थे। अभी सन्ध्या होनेमें कुछही देर थी, कि एक मुसाफ़िर क़ीमती माल लिये उसी सड़क पर से जा रहा था। अचानक उसे लुटेरोंने आ घेरा और उसका माल-मता ले चम्पत हो गये। विचारा मुसाफ़िर बादशाहसे फ़रियाद करनेके लिये आया और बोला,—"हुज़ूर! मैं आपके सामने ही लुट गया! यह कैसी अनहोनी बात है?" सुनते ही बादशाहने बीरबलको बुलाकर कहा,—"तुमने कैसा इन्तज़ाम कर रखा है कि सड़कोंपर, क़िलेके नीचे ही मुसाफ़िर इस तरह लूटे जाते हैं?" बीरबलने कहा,—"यह तो कोई अचरजकी बात नहीं है। चिरागतले अँधेरा रहता ही है।" बादशाह मुस्कराकर रह गये। (ग्रन्थकार) अफ़सोसकी बात है कि उस समय बिजली न चली थी, नहीं तो बीरबलको यह जवाब कभी न सूझता।

मुझे हँसाओ, नहीं मारे जाओगे ।



एक दिन बादशाह अकबर अपने क़िलेकी किसी बुर्जपर चढ़ रहे थे, कि अचानक उनके जीमें यह बात आई कि आज बीरबलको छकाना चाहिये। तुरतही उन्होंने बीरबलसे कहा "अगर सबसे ऊपरवाली आख़िरी सीढ़ी तक तुम मुझे न हँसा सके, तो जानसे मारे जाओगे।" बीरबलने कहा—"अच्छा।" बीरबलने बहुत कोशिश की, पर बादशाह न हँसा। ज्योंही बादशाह आख़िरी सीढ़ीपर पैर रखा चाहता था, त्योंही बीरबलने कहा—"हुज़ूर! अब क्या आगे बढ़कर मरवाइयेगा?" बीरबलकी दिल्लगी सुन बादशाह हँस पड़े।



खिज़ाब दिमाग़में नुक़सान पहुँचाता है।

एक दिन अकबर बादशाह अपने ख़ास महलमें बैठे हुए बड़े शौक़से खिज़ाब लगा रहे थे। पास ही बीरबल बैठा हुआ था। बीरबलको देखकर यकायक अकबर बादशाहने पूछा, "क्यों बीरबल! क्या खिज़ाब दिमाग़में नुक़सान पहुँचाता है? बीरबलने कहा,—"नहीं हुज़ूर! खिज़ाब लगानेवालोंको दिमाग़ही नहीं रहता।" बादशाहको सुनकर बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने उसी दिनसे खिज़ाब लगाना छोड़ दिया।

ठग व्यापारी।

—:o:—

एक दिन दिल्लीके एक बड़े नामी व्यापारीके यहाँ दो ठग गये। ठगोंने सोचा, कि इस तरह तो यह व्यापारी अपने क़ाबूमें कभी न आवेगा, इसलिये कोई ऐसी चाल चलनी चाहिये, कि यह सीधी तरह हमारे क़ब्जेमें आ जाय। इसलिये वे कई अच्छे-अच्छे ज़ेवर लेकर उस व्यौपारीके पास गये। ज़ेवर व्यापारीको दिखाकर उनमेंसे एकने कहा,—"सेठ जी! यह माल यदि आप बेच दें, तो बहुत ही अच्छा हो। आपको भी मुनाफ़ेमेंसे कुछ दिया जायगा।"

व्यापारीने कहा—"आपलोग माल रख जाइये। मैं लोगोंको दिखालूँ, फिर दोपहर बाद आपको जैसा होगा जवाब दे दूँगा।"

ठगोंने कहा—"अच्छा, माल आप रखिये, परन्तु जब हम दोनों आयेंगे तब ही दीजियेगा। अकेले आने पर किसीको मत दीजियेगा।"

यही बात तय हुई और दोनों ठग वहाँसे चले गये। कुछ ही देर बाद, उनमेंसे एक लौटकर आया और बोला—"सेठजी! आप माल दीजिये, मैं एक दूसरे आदमीको दिखाकर अभी दे जाता हूँ।"

सेठजीने पूछा—"वह दूसरा आदमी कहाँ है?"

ठगने दिखा दिया, कि गलीकी मोड़पर खड़ा है। बेचारे सेठने माल निकालकर दे दिया।

दोपहर बाद, वह दूसरा ठग आया और माल माँगने लगा। इस बार सेठ झुँझलाये और बिगड़कर बोले—"अभी तो तुम्हारा साथी माल ले गया, अब तुम क्यों माँगते हो?"

ठगने कहा,—"फिर; आपने दे क्यों दिया? हम तो कह गये थे, कि जब हम दोनों आवें तब दीजियेगा।"

सेठने कहा—तुम्हारे साथीने कहा, कि वह मोड़पर खड़ा है और माल माँग रहा है और सचमुच तुम पास ही गलीकी मोड़पर खड़े थे, इसलिये मैंने माल दे दिया।"

ठग बोला—"यह नहीं हो सकता। झूठ बोलते हो।" तुम ज़ेवर दे दो, नहीं तो तुम पर नालिश करूँगा।"

सेठने कहा—"जा, जा, जो जीमें आवे सो कर।"

ठग बीरबलके पास पहुँचा और अपनी फ़रियाद सुनाने लगा। बीरबलने सेठको बुलाकर भी सब हाल पूछा। सेठकी बातें सुनकर बीरबलने समझ लिया कि वादी झूठा है। इस लिये उसने उस ठगसे कहा—"तुम तो अकेले माल लेने आये हो, अपने साथीको ले आओ, तब माल मिलेगा। क्योंकि तुमने पहिले यह ठहराव किया था, कि अकेले आने पर किसीको भी माल न दिया जाये, फिर अब अकेले क्यों आये हो?"

सुनते ही ठग चला गया। बीरबलने सेठजीसे कहा—"अब अगर वह अपने साथीको लेकर आवे, तो दोनोंको पकड़कर मेरे पास ले आना। दोनोंका साथ आनाही अच्छा है। ये दोनों ठग हैं।"

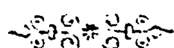
इतना सुनते ही सेठजी दंग हो गये और बीरबलकी बुद्धिमानीपर आश्चर्य करते हुए घर लौट आये।



पानीही असल बीज है।

एक दिन अकबर बादशाहका दरबार ख़ूब लगा हुआ था। बहुतसे दरबारी इकट्ठे थे और बहुत तरहकी बातें हो रही थीं। इतने ही में और और दरबारियोंने कहा—"हुज़ूर! क्या वजह है कि जितनी बातें होती हैं, सब बीरबलसे ही कही जाती हैं! इसमें हम लोगोंका अपमान होता है।" बादशाहने कहा,—"अच्छा, आप लोगोंकी बुद्धिकी भी आज जाँच की जाती है। आप लोग बनस्पतिका बीज लाइये। दरबारी बड़े घबराये और महीनों इधर-उधर ढूँढ़ा किये। परन्तु बनस्पतिका बीज उन्हें कहीं नहीं मिला। बहुत दिन बीत जानेपर एक दिन दरबारमें ही बादशाहने उन दरबारियोंसे पूछा—"क्या आपलोग बनस्पतिका बीज लाये? परन्तु उन लोगोंसे कोई जवाब न बन पड़ा। बीरबल भी वहीं मौजूद था। बादशाहने कहा—"बीरबल! बनस्पतिका बीज लाओ।" बीरबल एक लोटेमें पानी भरकर बादशाहके पास ले गया और थोड़ा ज़मीनपर गिराता हुआ बोला—"यही बनस्पतिका बीज है।" बादशाह खुश होकर बोला—"बहुत ठीक।" सब दरबारी बीरबलकी बुद्धि देखकर जल उठे।

सेब और देव।



बीरबल बादशाहको सदा ऐसे जवाब दिया करता था कि बादशाहकी अक्ल कुछ कामही नहीं करती थी, इसलिये एक दिन बादशाहने विचारा कि कोई ऐसा ढंग निकालना चाहिये कि बीरबल हमेशा दबता रहे। यह विचारकर बादशाहने एक ताक़ बनवाया। उसमें कुछ ऐसी कारीगरी कर दी गई, कि जो आदमी उसमें हाथ डाले उसका हाथ वहीं फँस जावे। बादशाहने उस ताक़में एक सेब रखवा दिया और बीरबलसे कहा कि ताक़मेंसे सेब निकाल लाओ। हुक्म पातेही सेब लानेके लिये ज्योंही बीरबलने ताकमें हाथ डालकर सेब उठानेकी कोशिश की, त्योंही उसका हाथ फँस गया। छुड़ानेके लिये दूसरा हाथ डाला, वह भी ज्योंका त्यों वहीं फँस गया। अब तो बीरबल घबराया और बहुत कुछ कोशिश करनेपर भी हाथ न छुड़ा सका। इतनेमें बादशाह भी आ पहुँचे और बीरबलकी दशा देख हँसने लगे। फिर बादशाहने बीरबलके हाथ छुड़ा दिये। तबसे जब बीरबल बादशाहके सामने जाता तो बादशाह कहते—क्यों बीरबल! आलेमेंका सेब! सुनते-सुनते बीरबल घबड़ा उठा। उसने मनहीमन सोचा कि ऐसी कोई तरकीब निकालनी चाहिये कि बादशाह कभी यह बात मुँहसे न निकाले। उसी दिन उसने

जगन्नाथजी जानेका बहाना करके दो महीनेकी छुट्टी ली और उस जङ्गलमें जाकर छिप रहा, जहाँ बादशाह शिकार खेलने जाया करते थे।

एक दिन बादशाह उसी जङ्गलमें शिकार खेलनेके लिये गये और एक हरिनके पीछे अपना घोड़ा छोड़ा। हरिनका पीछा किये हुए बादशाह बहुत दूर निकल गये और अपने साथियोंसे अलग हो गये। सन्ध्या हो गई। इसी समय बादशाहको पाखानेकी हाजत हुई और पासमें तालाब देख एक झाड़ीमें वह पाखाना फिरने बैठ गये।

इसी समय बीरबलने अपना राक्षसोंका सा भेष बनाया। ख़ूब लम्बे-लम्बे दाँत बनाये, मुँह काला, बड़े-बड़े होंठ, सिरके बाल बिखरे—एकाएक भयानक भेष बनाये गरजता-दहाड़ता ठीक उस झाड़ीके पीछेसे निकला, जिसके पासही बादशाह बैठे हुए थे। बादशाह उसे देखतेही राक्षस समझकर काँप उठे। इसी समय बीरबल अपनी बोली बदलकर बादशाहसे बोला—"तेरे अन्यायके कारण प्रजा बहुत दुःखी हो रही है। इसीलिये मैं आज तुझे मारकर खा जाऊँगा।"

सुनतेही बादशाहके होश उड़ गये। वह डरसे थर-थर काँपने लगे। उनकी बोलनेकी शक्ति जाती रही। वे बड़ी कठिनतासे बोले—"तू मुझे छोड़ दे, मैं अब कभी किसीपर अन्याय न करूँगा। इसके बदले तू मुझे जो आज्ञा दे मैं करनेके लिये तय्यार हूँ।"

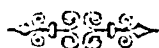
बीरबलने कहा—"अच्छा, तू इसी तरह थोड़ी दूर मेरा जूता अपने सरपर लेकर चल, मैं तुझे छोड़ दूंगा।"

जान बचानेके विचारसे बादशाहको ऐसा करनाही पड़ा। देवरूपी बीरबलने उसे छोड़ दिया। बादशाह बड़ी कठिनतासे अपने महलोंमें पहुंचे; क्योंकि डर उनके कलेजेमें समा गया था। बादशाहने वहाँ जाकर खाना-पीना छोड़ दिया और उनके जीमें भय इतना भर गया कि वे दिन-रात उदास रहने लगे।

कुछही दिन बाद बीरबल लौट आया। जब बादशाहने बीरबलके लौटनेका समाचार सुना, तो तुरत उसे बुला भेजा। परन्तु बीरबलसे सदा हँसी-मज़ाक होते रहनेके कारण तुरत-ही बादशाहको सेवकी बात ख्यालमें आई और उन्होंने कहा—"बीरबल! आलेमेंका सेव!" बीरबलने कहा—"हुज़ूर! जङ्गलमेंका देव!"

बादशाह बहुतही लज्जित हुए। समझ गये कि बीरबलने बदला लिया। परन्तु उन्होंने बीरबलसे कुछ नहीं कहा। उनके जीका भय भी जाता रहा और फिर बीरबलके सामने उन्होंने सेवका नाम नहीं लिया।

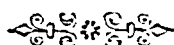
दिल्लीमें कौवे।



एक दिन बादशाहको न जाने क्या सूझी, कि वे इतने सवेरे आकर अपने दरबारमें बैठ गये, जब कोई भी न आया था। जब समय होनेपर एक-एक करके दरबारी आने लगे, तो आनेके साथ ही सलाम करनेपर बादशाह उनसे पूछने लगे—"दिल्लीमें कितने कौवे हैं?" यह ऐसा सवाल था कि जिसका जवाब देना सहज नहीं था। दरबारी चुप हो जाते थे। बहुतसे दरबारियोंसे बादशाहने वही प्रश्न किया, परन्तु कोई भी इसका उत्तर न दे सका। अन्तमें बीरबलके आनेपर भी बादशाहने बीरबलसे वही सवाल किया, सुनतेही बीरबलने उत्तर दिया—"हुज़ूर इस शहरमें पन्द्रह सौ पचपन कौवे हैं;" बादशाह बीरबलका जवाब सुनकर आश्चर्यसे बोले, "हैं! तुमने तो यह जवाब ऐसा दिया है मानों कौवे गिने हैं, तुमको इतना वक़्त कहाँसे मिला जो तुमने यह काम किया? मालूम होता है तुमने झूठाही यह जवाब दे दिया है।" बीरबलने कहा—"नहीं महाराज! मैंने जो बात कही है, उसमें एक अक्षर भी झूँठ नहीं है, आप इसकी परीक्षा करा लें।" बादशाह बोले—"अच्छा, मैं इसकी परीक्षा कराऊँगा, लेकिन अगर इसमें एक भी कम या ज़ियादे हो गये, तो उतनेही रुपये तुमसे जुर्मानेमें

लूंगा जितने कि तुमने कौवे बताये हैं।" वीरबलने कहा—"मैं देनेके लिये तय्यार हूं। मेरी बात कभी झूठी नहीं होगी। लेकिन साथही यह भी ख्याल कर लीजियेगा, कि इनमें परदेशसे आये हुए और नये जन्मे हुए कौवे बढ़ जायँगे और परदेश गये हुए तथा मरे हुए घट जायंगे।" बादशाह वीरबलका जवाब समझकर चुप हो रहे।

सूर्य्य-चन्द्रमा भी नहीं देख सकते।



एक दिन दरबारमें बैठे बादशाह अकबरको न जाने क्या ख़याल आया, कि उन्होंने तुरतही वीरबलसे पूछा—"वीरबल! वह कौनसी चीज है जिसे सारा संसार देखता है, दुनियामें ऐसा कोई भी जीव नहीं है जिसे वह दिखाई न देता हो; परन्तु सूर्य-चन्द्रमा उसे नहीं देख सकते! इसका बहुत जल्द जवाब दो।" वीरबलने कहा—"हुज़ूर! जवाब तय्यार है, लेकिन आप शामको बाग़से सैर करके लौटेंगे उस वक़ आपको आपही मालूम हो जायगा। अगर उस वक़ भी आपकी समझमें न आया, तो मैं समझा दूंगा।" बादशाह समझ गये, पर कितनेही दरबारी समझ न सके और वीरबलका मुंह देखने लगे। वीरबलने उन्हें धीरेसे समझा दिया कि यह "अन्धकार" है।

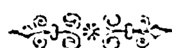
सबसे बड़ा लड़का।



एक दिन अकबर बादशाह बीरबलके साथ हवा-खानेके लिये जा रहे थे, कि उनके जीमें यह बात आई कि इस समय मुझसे बड़ा इस संसारमें कोई नहीं है। यह बात जीमें आतेही उन्होंने बीरबलसे पूछा—"बीरबल! इस दुनियामें सबसे बड़ा कौन है?" बीरबल समझ गया कि बादशाहके जीमें कुछ अहंकार हो गया है। यह सोचकर बीरबलने कहा—"हुज़ूर! दुनियामें सबसे बड़ा लड़का है।" बादशाहको बीरबलसे ऐसा जवाब सुननेकी उम्मीद न थी। इसलिये उन्होंने तुरतही कहा—"नहीं, ऐसा नहीं हो सकता है। इसका प्रमाण दो।" बीरबलने कहा—"अच्छा, आठ दिनोंके भीतर मैं इसका प्रमाण दूंगा।" बात तय हो गई, दोनों अपने-अपने घर लौट आये। कुछ ही दिन बाद दो तीन बरसके एक लड़केको लेकर बीरबल बादशाहके पास पहुंचा। लड़का बड़ाही सुन्दर और चञ्चल था; बादशाह उसे अपनी गोदमें लेकर उसका मुंह चूमने लगे। इसी समय लड़का खेलसे उनकी दाढ़ी पकड़कर ज़ोरसे खींचने लगा। यहाँ तक कि दाढ़ीके कई बाल भी उखड़ आये। बादशाहने झुंझलाकर उस बच्चेको ज़मीनकर रख दिया और बीरबलसे कहा,—"यह लड़का तो बड़ाही ढीठ है। तुम

इस लड़केको क्यों लाये हो?" सुनते ही वीरबलने कहा—"आप बादशाह हैं तो क्या हुआ, परन्तु यह लड़काही सबसे बड़ा है क्योंकि किसी काममें इसकी रोकटोक नहीं है। हुज़ूर! इसीलिये मैं कहता था कि, लड़काही बड़ा है। भला बतलाइये तो, कि आपके शरीरपर हाथ लगानेकी किसको ताक़त है, सो इस लड़केने आपको दाढ़ीके बाल तक नोच लिये।" जवाब सुनकर बादशाह खुश हुए और वीरबलको इनाम तथा उस लड़केको ज़ेवर-कपड़े देकर वहाँसे विदा किया।

भाई मथुरा, बहनोई वृन्दावन।



एक दिन बादशाह अकबरने वीरबलसे कहा—"सुना है मथुराके चौबे बड़ेही हाज़िर-जवाब होते हैं। मैं उनकी हाज़िर-जवाबी का नमूना देखा चाहता हूँ। तुम किसी ऐसे चौबेको ले आओ, जो जवाब देनेमें बड़ाही चतुर हो।" वीरबलने कहा—"बहुत अच्छा! दूसरेही दिन वीरबल एक चौबेको ले आया और बादशाहसे बोला—"चौबे हाज़िर है।" इसी समय चौबेने बादशाहको सलाम किया। बादशाहने कहा—"चौबे जी! कहाँ जाओगे?" चौबेने कहा—हुज़ूर! मथुरा' जाऊँगा।" बादशाहने कहा—"अच्छा,

मथुरा भाईसे सलाम कह देना।" चौबेने कहा—"बहुत अच्छा, परन्तु राहमें आपका बहनोई वृन्दावन मिलेगा, उसको क्या कहूँगा?" बादशाह चौबेका जवाब सुन हँस पड़े और बहुत कुछ इनाम देकर विदा किया।

मेरी महाभारत बनाओ।



एक दिन अकबरने बीरबलसे कहा—"मेरी महाभारत बनाओ। क्या मैंने बहादुरीके काम नहीं किये हैं? क्या मेरी अमलदारीमें लड़ाइयाँ और वे काम नहीं होते, जो महाभारतके समयमें हुए हैं?" बीरबलने कहा—"हुज़ूर! आपकी महाभारत भी ज़रूर बन सकती है। लेकिन इसमें बड़े ख़र्च और वक़्त की ज़रूरत है।" बादशाहने कहा—"कुछ पर्वा नहीं।" बीरबल बोला—"अच्छा तो दश हज़ार रुपये दिलवा दीजिये, लिखनेवालोंको देकर काम शुरू कर दिया जाय।" बादशाहने रुपये दिलवा दिये। बीरबलने उन रुपयोंसे तालाब, बावड़ी, कुँए, मकान आदि की जगह-जगह ज़रूरत देखकर बनवाने शुरू कर दिये। जब तीन महीने बीत गये, तब बादशाहने पूछा—"बीरबल! महाभारत कब तय्यार होगी?" बीरबलने कहा—"मैं ख़ुद ही अर्ज़ किया चाहता था, कि महाभारत तय [illegible] पर है,

थोड़ीही कसर है। लेकिन वह कसर बेगम साहिबासे कई बातें पूछे बिना नहीं मिट सकती।" बादशाहने कहा—"सो क्या ?" बीरबल बोला—"महाभारतमें नायक और नायिका भी हैं। सो नायक तो हुज़ूर हैं। पर नायिकायें आपके यहाँ बहुतसी हैं। अब आप यह बताइये कि आपके यहाँ की इतनी बेगमोंमें नायिका कौन बनाई जायँ।" बादशाहने बड़ी बेगमका नाम बताया। बीरबल बोला—"अच्छा, कल महाभारत लेकर मैं बेगम साहिबाके पास जाऊँगा और उनसे भी पूछताछ कर आपकी महाभारत ठीक कर दूँगा।" दूसरेही दिन बीरबल कागज़ोंकी कई बड़ी पोथियाँ कई नौकरोंके सर लदवाकर महलमें बड़ी बेगम साहबाके पास पहुंचा और बादशाहका हुक्म सुना कर बोला—"मुझे आपसे भी कुछ पूछना है।" बेगम साहबाने कहा, "जो पूछना हो पूछो"। बीरबलने कहा—"महाभारतमें द्रौपदीके पाँच शौहर थे, बादशाहके अलावः आपके चार और कौन हैं? उनके नाम बता दीजिये तो महाभारत तय्यार हो जाय।" सुनतेही बेगम साहबाके बदनमें मानो क्रोधसे आग लग गई। उन्होंने झुँझलाकर उन सब पोथियोंमें आग लगवा दी और बीरबलको निकल जानेका हुक्म दिया। बीरबल बादशाहके पास पहुंचा और बोला—"हुज़ूर! इतने दिनोंकी की हुई मिहनत खाकमें मिल गई। बेगम साहबाने आपकी महाभारत जलवा दी।" बादशाहने कारण पूछा तो बीरबलने साफ़-साफ़ कह सुनाया।

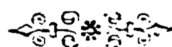
बादशाह हँस पड़े और बोले—"अब महाभारत बनानेकी जरूरत नहीं।"

तुम काले क्यों हो ?

एक दिन अकबर बादशाहके दरबारमें सुन्दरताकी चर्चा चल रही थी। सब सुन्दरताकी प्रशंसा कर रहे थे, कि इतनेमें बीरबलका ज़िक्र आया। बीरबल काला था, इसलिये लोग उसकी कुरूपतापर हँसने लगे। इस समय बीरबल वहाँ न था। कुछही देर बाद बीरबल भी आ पहुंचा। उसको दरबारमें आते देख, सभी हँस पड़े। हसनेका कारण जाननेकी बीरबलकी बहुत इच्छा हुई, परन्तु मौक़ा न देखकर वह चुप रह गया। कुछ देर बाद उसने बादशाहसे पूछा—"आज तो आप बहुतही प्रसन्न दिखाई देते हैं।" बादशाहने कहा—तुम्हें काला देख सब हँसते थे, कि हमलोग गोरे और तुम काले क्यों हुए। बीरबलने कहा—"इसका कारण क्या आप नहीं जानते? अच्छा सुनिये। जब सृष्टि आरम्भ हुई, तब ईश्वरने रचना करते-करते पहले पृथिवी बनाई, फिर वृक्ष बनाये। इतने पर भी जब उनका जी न भरा तो उन्होंने पशु-पक्षी बनाये, पशु-पक्षी बनाने पर भी उन्हें पूरा-पूरा आनन्द न मिला, तब उन्होंने मनुष्य

बनाये। जब मनुष्य बन गये तो वह बहुतही प्रसन्न हुआ। उसने मनुष्यके लिये रूप, बुद्धि, बल और धन ये चार पदार्थ बनाये और चारोंको अलग-अलग रखकर मनुष्योंसे कह दिया कि तुम लोगोंका जो जी चाहे सो ले लो। मैं सबसे पहिले बुद्धि लेने गया, इसमें मुझे इतना समय लग गया कि और कुछ भी न ले सका। जब मैं बुद्धि ले चुका तब और-और चीज़ें लेने गया, परन्तु समय बीत चुका था, इससे मेरे हाथ और कुछ भी न लगा। आपलोग केवल रूपही ले आये, इसी लिये आप लोग गोरे और मैं काला हूं।" बीरबलका जवाब सुन दरबारी शर्मा कर चुप हो गये।

हम हों दूब और तुम हो गदहा।



एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे कहा "बीरबल! सुना है देहाती भी बड़े हाज़िर-जवाब होते हैं।" बीरबलने कहा—"सभी तो नहीं, पर कुछ देहातियोंमें बुद्धिमानी विशेष रहती है।" बादशाहने कहा—"चलो, किसी दिन गाँवमें घूम आवें। सैर भी हो जायगी और इस बातकी परीक्षा भी मिल जायगी।" दोनों वेष बदलकर एक गाँवमें पहुंचे और एक भारी ज़िमींदारके पास जाकर बोले—"हमलोग सरकारी मुलाज़िम हैं। तुम

लोगोंने अभीतक मालगुज़ारी नहीं दी, सो शीघ्र दो।" ज़िमींदार बोला—अभी तो मालगुज़ारी सरकारसे वसूल कर ली गई है और अभी फिर दो। इस तरहसे कैसे काम चलेगा? इतनेमें ही बादशाहने कहा—"हम कुछ नहीं मानेंगे, तुम अभी मालगुज़ारीके रुपये लाओ!" ज़िमींदार बोला—"सरकार, अभी मालगुज़ारी कहाँसे मिलेगी? अब तो पासमें कुछ भी नहीं है। बार-बार मालगुज़ारी ली जायगी तो हमलोग मर जायंगे। सुनो सरकार! ऐसा करो, कि हम हों दूब और तुम हो गदहा, हम बढ़ती जायँ और तुम खाते जाओ। ऐसा न करो, कि हम हरिन हों और तुम बाघ बनो कि हम भागते जायं और तुम हमें खानेके लिये दौड़ते चलो।" बादशाह यह जवाब सुन हँस पड़ा।

हमारे देशमें कितने बेवक़ूफ़ है?



एक दिन अकबर बादशाहके दरवारमें घोड़ेका एक बड़ा भारी सौदागर आया, जिससे बादशाहने बहुतसे घोड़े ख़रीदे। घोड़े पसन्द आनेके कारण बादशाहने दूसरे साल और भी उम्दः उम्दः घोड़े लानेके लिये कहा और सौदागरको एक लाख रुपये और दिये। सौदागर चला गया। इसके कुछही दिन बाद एक दिन बादशाहने

बीरबलसे पूछा,—"ह————————फ़ हैं ? उनकी एक फ़िहरिस्त तय्यार के। मन्त्री वीरबलने कहा—"फ़िहरिस्त तय्यार है, जिसमें सबसे पहले हुज़ूरका नाम लिखा है।" बादशाहने कहा,—"यह बेहूदा जवाब तुमने किस तरह दिया ?" वीरबलने कहा,—"विना सोचे-विचारे और विना जान-पहचानके सौदागरोंको एक लाख रुपये दे देना क्या बेवक़ूफ़ी नहीं है ?" बादशाहने कहा,—"अगर सौदागर घोड़े ले आया तो फिर तुम्हें क्या सज़ा दी जायगी ? वीरबलने कहा,—"अगर वह घोड़े ले आया तो आपका नाम काटकर उसका लिख दूँगा। बादशाह अपनी भूल समझ चुप हो गये।

बनिये चतुर होते हैं।



एक दिन बादशाह अकबरने वीरबलसे कहा,—"वीरबल! बनियोंको लोग चतुर माँके बेटे क्यों कहते हैं ?" वीरबलने कहा—"वास्तवमें बनिये ऐसे ही कहलाने योग्य हैं।" बादशाहने कहा—"प्रमाण दो।" तुरतही वीरबल बाज़ारसे थोड़ेसे मूँग ले आया और एक मनुष्यको भेजकर उसने चार बनिये बुलवा लिये। जब बनिये आ गये, तो बादशाहने पूछा—"इस अन्नका क्या नाम है ?" यह सवाल सुन बनिये घबराये। वे मन-ही-मन विचारने

लगे। यह तो ... जिसका नाम लोग न जानते हों, अतएव बादशाहके 'नहीं सवालमें ज़रूरही कोई भेद है। इसी सोच विचारमें कुछ देर लग गई कि इतनेमें बादशाहने फिर पूछा—"सेठजी! इस अन्नका क्या नाम है?" चारोंमेंसे एकने आगे बढ़कर कहा—"धर्मावतार! ये तो उड़दसे दिखाई देते हैं।" बादशाहने दूसरेसे पूछा, उसने कहा—"ये काली मिर्चसे दिखाई देते हैं।" तीसरेसे भी पूछा गया। वह बोला—"यह तो मटरसा है, परन्तु काला है।" बादशाहने वही सवाल चौथेसे किया। चौथा बोला—"पृथ्वीनाथ! इस अन्नको मैं पहचानता ज़रूर हूँ। खाया भी है, पर नाम पेटमें रहनेपर भी याद नहीं आता।"

बादशाह यह सुनकर बोला—"तुम लोग क्या रोज़गार करते हो? अन्नका नाम तक नहीं जानते। यह तो मूँग है।" बनिये बोले—"हाँ हुज़ूर! यही है।" बादशाहने कहा—"यही क्या? इसका नाम क्या है?" बनिये बोले—"आपने जिसका नाम लिया वही है।" बादशाहने कहा—"अभी मैंने क्या नाम लिया था?" बनियोंने कहा—"हम भूल गये। याद नहीं है।" बादशाहने कहा—"हमने तो इसका नाम मूँग बताया था।" बनिये बोले—"हाँ हाँ; वही वही।" पर बनियोंने मूँगका नाम न लिया। बादशाह इस युक्तिसे बहुत ही प्रसन्न हुआ और बनियोंको इनाम देकर बिदा किया।

— —

बग़लमें उसके नामी-नामी मन्त्री बैठे थे। आज बादशाहका जन्मदिन था। लोगोंको भोजन ख़ूब बट रहा था। कितने ही पीर तथा फ़क़ीर बादशाहसे भोजन और धन पाकर उनको आशीर्वाद देते चले जाते थे। इतनेमें ही बादशाहका एक बड़ा पीर आया। बादशाहने उसे बहुतसा धन तथा कपड़े और भोजन आदि देकर विदा किया। पीर बादशाहको दुआएँ देता हुआ वहाँसे चला गया। यह देख बीरबलको हँसी आगई। बीरबलको हँसते देख बादशाह अकबरने कहा—"क्यों बीरबल! पीर सच्चे कि विश्वास?" बादशाह समझते थे कि बीरबल पीरकोही सच्चा बतावेगा, लेकिन बात उलटी होगई। बीरबलने कहा—"विश्वास सबसे सच्चा है।" बादशाहको यह बात बुरी मालूम हुई। अकबरने कहा—"नहीं बीरबल! ऐसा नहीं हो सकता। संसारमें विश्वास कोई पदार्थ नहीं है। पीर है, तभी विश्वास है; यदि पीर न होते तो विश्वास भी नहीं होता।" बीरबलने कहा—'हुज़ूर! विश्वासही सच्चा है।" बादशाह बीरबलके जवाबसे चिढ़कर बोले—"तुम अभी इसका प्रमाण दो।" बीरबलने कहा—"यह कोई मामूली बात नहीं है कि, इसका तुरत जवाब दे दिया जाय। इसके लिये कुछ समय चाहिये।" बादशाहने कहा—"अगर आजसे एक महीने तकमें तुम इस बातको साबित न कर सके, तो तुम्हारा सिर धड़से अलग कर दिया जायगा।" बीरबलने कहा—"बहुत अच्छा।"

कुछ दिन बीतनेपर बीरबलने एक चाल चली और बादशाहका जूता चुराकर दुशालेमें लपेट शहरके बाहर गाड़ आया। वहाँ उसने दो-चार पत्थर रखकर एक मुसलमानको बैठा दिया और शहरमें उसी मुसलमानसे शोर करवा दिया कि यह यकीनशाह पीरका मकबरा है, यहाँ मिन्नत माननेसे लोगोंकी सभी मुरादें पूरी होती हैं। दोही चार दिनोंमें उस स्थानकी प्रसिद्धि हो गई। सैकड़ों मनुष्य वहाँ जाकर मिन्नतें मानने लगे। ख़ूब पैसे-रुपये चढ़ने लगे। कितनेही मनुष्योंकी इच्छाएं पूरी भी हुईं। बादशाह भी अपने मनुष्योंके साथ वहाँ पीर साहबके दर्शनको गये। साथमें बीरबल भी था। बादशाहने बीरबलसे प्रणाम करनेके लिये कहा। बीरबलने कहा—"अगर आप विश्वासको प्रधान मानें तो मैं इन्हें प्रणाम कर सकता हूं।" पर बादशाहने बीरबलकी बात न मानी। इसी समय अकबरने यह मिन्नत मानी कि अगर मैं मेवाड़के प्रतापसिंहको वशमें कर सकूंगा, तो किमख़ावकी चादर उढ़ाऊंगा। संयोग ऐसा हुआ कि इसी समय एक सवार दौड़ता हुआ आकर बादशाहसे बोला "हुज़ूर। शाहज़ादे सलीमने यह ख़बर भेजी है कि मेवाड़का प्रतापसिंह बहुत-कुछ कमज़ोर हो गया है। शीघ्रही मेवाड़ जीत लेनेकी आशा है।"

सुनतेही बादशाहने बीरबलसे कहा—"बीरबल! देखा तुमने? मिन्नत मानते ही यह ख़ुशीका समाचार सुननेमें

आया।" बीरबलने कहा—"हुज़ूर ठीक कहते हैं, परन्तु मैं फ़िर भी कहता हूं कि पीरसे बढ़कर विश्वास है। यदि आपको यक़ीनशाह पर विश्वास न होता,तो आज कभी आपको यह उत्तम बात न सुन पड़ती।" बादशाहने चिढ़कर बीरबलसे कहा—"अभी प्रमाण दो।" बीरबलने कहा—"बहुत अच्छा।" इतना कहकर बीरबल उस क़ब्रके पास गया, और बीचका पत्थर उठाकर उसमेंसे शालमें लिपटा हुआ जूता निकाल लाया और बादशाहसे बोला—"यही यक़ीनशाह पीर हैं। आपने इनकी मिन्नत मानकर ही यह ख़ुशख़बरी सुनी है।" बादशाह सच्चा जवाब पाकर लज्जित हो गया। बीरबलने कहा—"धर्म्मवतार! संसारमें विश्वाससे बढ़कर कोई पदार्थ नहीं है। यदि आप विश्वास रखें तो सभी चीज़ोंसे आपको अच्छा फल मिल सकता है।" बादशाहने बीरबलकी बात स्वीकार की। बीरबलने उस क़ब्रपर जो धन चढ़ा था, उसको धर्म्मके काममें लगा दिया।

आकाशमें महल।

एक दिन किसी भारी कामके हो जानेसे बादशाह अकबर बहुतही प्रसन्न हो रहे थे। उस समय वे क़िलेमें यमुना किनारेपर बैठे हुए थे। बरसात का दिन रहनेके कारण यमुनाका जल क़िलेसे टक्कर मारकर

भंवर खा रहा था। वीरबल भी बादशाहके पासही बैठा हुआ था। इस समय बहुतही खुश होकर वीरबलसे बादशाहने कहा—"वीरबल! मेरे लिये एक ऐसा महल बनवाओ, जिसका ज़मीनसे कोई भी सम्बन्ध न हो। इसके लिये जितने रुपयोंकी ज़रूरत हो, वह तुम खज़ानेसे लेलो" कुछ देरतक सोचनेके बाद वीरबलने महल बनवा देना स्वीकार किया। वीरबल वहाँसे उठकर सीधा बाज़ारमें गया और बहुतसे अच्छे-अच्छे तोते खरीदकर घर ले गया। इन तोतोंको अपनी बेटीके सिपुर्दकर वीरबलने कहा कि इनको मज़दूरीके काम सिखा दो। वीरबलकी बेटी बड़ीही चतुर थी। उसने कुछही दिनोंमें तोतोंको सिखा-पढ़ाकर पक्का कर दिया। कुछ दिन बाद वीरबलने अकबरसे कहा—"चलिये! आपका महल बनना शुरू हो गया है।" यह कहकर उन्हें छतपर ले गया और पींजरे खोल दिये। बहुत से तोते निकल कर आकाशमें उड़ गये और "चूना लाओ, ईंट लाओ, लकड़ी लाओ, पानी लाओ, महल बनाओ, दरवाज़े लगाओ, चौखट लाओ, दीवार बनाओ, ईंटें रखो, किवाड़ लगाओ आदि कहकर चिल्लाने लगे। तोतोंका बोलना सुनकर बादशाहने कहा—"वीरबल! ये क्या बोल रहे हैं!" वीरबलने कहा—"पृथ्वीनाथ! यह आपका महल बन रहा है। देखिये ये मज़दूर काम कर रहे हैं। मसाले इकट्ठे होनेपर काममें हाथ लगेगा।"

बादशाह बीरबलकी चतुरता समझकर बहुत प्रसन्न हुए और उसे बहुतसा इनाम दिया।

गधेसे घोड़ा।

एक दिन अकबर बादशाह बीरबलको साथ लेकर यमुना किनारे सैर करने गये। इस समय सन्ध्या हो चली थी, आकाश अपने रंग बदल रहा था। इस समय यमुना-किनारे बहुतसे ब्राह्मण बैठकर सन्ध्या कर रहे थे। अवसर देख बीरबल भी घोड़ेसे उतर सन्ध्या करने बैठ गया। बादशाह इधर-उधर घूमकर अस्त होते हुए सूर्य्यकी शोभा देखते रहे। जब बीरबल सन्ध्या कर चुका तो बादशाहने उससे कहा—"बीरबल! मुझे भी सन्ध्या करना सिखा दो। बीरबलने कहा—"हुज़ूर! सन्ध्या करनेका अधिकार केवल ब्राह्मण और क्षत्रियोंको है।" बादशाहने कहा—"तब मुझे भी ब्राह्मण बना दो।" बीरबलने कहा—"हुज़ूर! यह तो हो नहीं सकता, आप कैसे ब्राह्मण बन सकते हैं।" बादशाहने कहा—"अच्छा, कोई ऐसी तरकीब बताओ, जिससे मैं धीरे-धीरे ब्राह्मण बन जाऊं।" बीरबलने देखा कि बादशाह सीधी तरह नहीं मानेंगे, यह विचार बीरबलने कहा—"धर्म्मावतार! यह तो कोई आसान काम नहीं है। मैं कुछ दिनोंमें सोचकर इसकी तरकीब बताऊंगा।" बादशाह राज़ी हो गये।

इधर वीरबलने एक काम यह किया कि कई धोबियोंसे कह दिया कि तुम अमुक दिन कई गधे ले जाकर यमुनामें ख़ूब मल-मलकर नहलाओ। यदि कोई तुमसे पूछे कि तुम क्या कर रहे हो, तो जवाब देना कि गधेसे घोड़ा बना रहा हूँ। वीरबल चालाकीसे उसी दिन बादशाहको यमुना-किनारे घूमने ले गया। सन्ध्याका समय हो गया था, लेकिन धोबी गधोंको ख़ूब साबुन लगा-लगाकर धो रहे थे। बादशाहने यह देख हँसकर पूछा—"तुम लोग क्या कर रहे हो?" धोबियोंने उत्तर दिया—हुज़ूर! "गधोंको घोड़े बना रहे हैं।" बादशाहने हंसकर वीरबलसे कहा—"ये कैसे मूर्ख हैं, गधे भी कहीं घोड़े हो सकते हैं?" वीरबलने कहा..."हुज़ूर! कहीं मुसलमान भी ब्राह्मण बन सकते हैं?" बादशाह वीरबलकी चतुरता जान प्रसन्न हो गये और उसे बहुतसा पारितोषिक दिया।

लाला चतुर होते हैं।

एक दिन बात-ही-बातमें भरे दरबारमें अकबर बादशाह पूछ बैठे, "सबसे चतुर कौन जाति है?" राजा टोडरमलने कहा,—"सबसे चतुर ब्राह्मण है।" परन्तु वीरबलका जी न माना, उसने तुरतही जवाब दिया—"नहीं; सबसे चतुर लाला होते हैं।" बादशाहने पूछा, "इसका सबूत क्या है?" वीरबलने कहा—"अच्छा, का सबूत मिल जायगा।"

एक दिन रातको वेष बदलकर बादशाह अकबर और बीरबल दोनों बाहर निकले। यकायक ये लोग एक लालाके दरवाज़े पर जा पहुंचे। इस समय लाला साहबकी स्त्री अपने पतिसे कह रही थी—"आज तो भला खानेको मिल गया; लेकिन अब कैसे काम चलेगा? अब तो एक पैसा भी नहीं है।" लालाने कहा—"अरी चुप रह! कुछ दिन दुःख भोग ले, जिस दिन नौकरी लगी, उसी दिन घर मालसे भर दूंगा।"

यह सुनकर बादशाहने कहा—"इसे नौकर रखना चाहिये।" बीरबलने कहा—"ज़रूर! मगर काम और तनख़ाह हल्की देनी चाहिये।"

दूसरे दिन बादशाहने उसे बुलाकर दस रुपये महीनेपर नौकर रखा और काम केवल घुड़सालमें बैठे रहनेका दिया। सवेरेसे लाला साहब घुड़सालमें जा बैठे। उस दिन तो कुछ भी नहीं हुआ। दूसरे दिन सवेरेही लाला साहब घोड़ोंकी लीद उठाकर सूंघने लगे। नौकरोंने देखकर पूछा—"लाला साहब! यह क्या करते हो?" लाला साहबने कहा—"बादशाहका हुक्म है—"जाँच करो, घोड़ोंको कैसा खाना दिया जाता है?" बस फिर क्या था, लोग घबराये, क्योंकि दानेमें सब चोरी करते थे। उसी दिन लाला साहबको कई हज़ार रुपये घूस मिले। कुछ दिन बाद बादशाहने लाला साहबका हाल दरियाफ़्त किया तो मालूम हुआ कि इन्होंने पचासों हज़ार रुपये कमा लिये हैं। जब लाला साहबसे पूरा-पूरा हाल

सुना तो बड़ेही चकित हुए। दूसरेही दिन उन्हें यमुना-किनारे बैठकर लहर गिननेकी आज्ञा मिली। लाला साहब यमुना-किनारे जा बैठे। दिल्ली राजधानी रहनेकी वजहसे बहुतसी व्यापारकी नावें वहाँ आती-जाती थीं। लाला साहब सभीको रोक देते थे और कहते थे, 'अभी हम लहरें गिन रहे हैं। जब गिन लेंगे तब आगे जाने देंगे।" इससे साहूकार-महाजनोंका बड़ी हानि होती थी। वे इन्हे हज़ारों रुपये भेंट देने लगे। महीनेके अन्तमें जब लाला साहबसे पूछा गया तो उन्होंने अपनी आमदनी दो लाख रुपये बताई। बादशाहने इसबार उनको एक बहुतही छोटा काम दिया और एक सौ मन मोतीचूरके लड्डू बनवाकर एक कोठरीमें रखवा दिये और लाला साहबको उनके सम्हालनेका भार दिया। लाला साहब उन लड्डुओंको इस कोनेसे उस कोनेमें रोज़ रखवाते। जो चूरा निकलता, उसे घर भिजवा देते थे। इस हिसाबसे भी जब बादशाहने पता लगाया तो मालूम हुआ कि लाला साहबको इस महीनेमें दो सौ रुपयोंका लाभ हुआ। बादशाह लालाकी चतुरता जान बड़ेही प्रसन्न हुए और तबसे ही उन्हें अपनी मुसाहबतमें रखने लगे।

पौर्णिमा और द्वितीयाका चन्द्र।

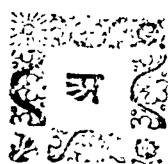
एक बार किसी कामसे वीरबलको काबुल जाना पड़ा। वीरबल वहाँ नया-नया गया था। लोग उसे बहुत कम जानते थे, इसलिये उसका परिचय जाननेकी सभोंको इच्छा हुई। धीरे-धीरे बात खुल गई और वीरबलका भेदिया बन कर आना, काबुलके बादशाहको भी मालूम हो गया। काबुलके बादशाहने वीरबलको पकड़वा मंगाया। उस दिन दरबार खूब भरा हुआ था। सभोंके सामनेही काबुलके बादशाहने वीरबलसे पूछा--"तुम कौन हो?" वीरबलने कहा—"मैं एक परदेशी हूं। सैरके ख़यालसे ही यहाँ आया हूँ।" काबुलके बादशाहने पूछा, "अच्छा, तुम देश-देशान्तरके घूमनेवाले हो—बताओ तो सही कि मुझ सरीखा कोई दूसरा बादशाह भी तुमने देखा है?" वीरबलने कहा—"हुज़ूर! आप पौर्णिमाके चन्द्र हैं, आपकी बराबरी कौन कर सकता है?" सुनकर काबुलके बादशाहने पूछा—"तुम्हारे देशका बादशाह कैसा है?" वीरबलने कहा—"वह द्वितीयाका चन्द्र है।" काबुलका बादशाह यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और वीरबलको उसने बहुत-कुछ इनाम देकर बिदा किया। वीरबल लौटकर दिल्ली आया। यह बात दिल्लीमें भी सभोंको मालूम हुई और वीरबलके दुश्मनोंने अकबरको जा सुनाई। सुनतेही बादशाह अकबर तो मतलब

समझ गये, मगर उन्होंने और लोगोंको बीरबलकी चतुरता दिखानेके ख़यालसे एक बड़ा दरबार किया और उसमें बीरबलको काबुलका हाल बयान करनेके लिये कहा। काबुलका हाल कहते-कहते जब बीरबलने चन्द्रमाका ज़िक्र किया, तो बादशाहने पूछा—"तुमने ऐसा क्यों कहा ?" बीरबलने कहा—"पौर्णिमा-का चन्द्र चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो, परन्तु वह फिर नहीं बढ़ सकता। दूसरे ही दिनसे उसे घटते-घटते पन्द्रह दिनोंमें ग़ायब हो जाना पड़ता है। मगर दूजका चाँद कैसा शुभ है, कि उसके दर्शनको हिन्दू-मुसलमान दोनों घबराये रहते हैं। मुसलमानी महीनेका आरम्भ दूजसे होता है, नौकर तनख्वाह पानेके लिये दूजके चाँदकी राह देखा करते हैं, वह रोज़-रोज़ बढ़ता है। अब आप समझ लीजिये कौन सा अच्छा है, और मैंने किसकी स्तुति की है।"

बादशाह तथा सभासद् बीरबलका चातुर्य्य देख चकरा गये। बादशाहने बीरबलको बहुतसा धन इनाम दिया।

मुर्शीख़ानेका ऊंट हूं।





अकबर बादशाहका क़ायदा था, कि वे बीरबलको साथ लेकर रातके वक्त गश्त लगाने जाया करते थे; जिससे प्रजाके सुख-दुःखका हाल उन्हें मालूम हो जाया करता था। एक दिन रातको अकबर बादशाह

वीरवलके साथ गश्त लगाने निकले और अहीरोंके मुहल्लेमें जा पहुंचे। वहाँ एक अहीरन अपने पतिसे कह रही थी—"फ़ारसी पढ़ा है। फिर सरकारमें नौकरी क्यों नहीं कर लेता?" अहीर वोला—"फ़ारसी पढ़ ली तो क्या हुआ? वह मेरी जातिका काम नहीं है। इसलिये मुझसे हो न सकेगा।"

वादशाहने वीरवलसे क़हा—"इसे कलसे नौकर रख, हल्का काम दे दो।" वीरवलने दूसरे ही दिन उसे वुला भेजा और ऊंटख़ानेका मुन्शी बनाकर भेज दिया। कुछ दिन बाद घूमते-फिरते वादशाह ऊंटख़ाना देखने गये और उसका काम देख वहुत ख़ुश हुए। उस समय अहीर किसी दूसरे काममें लगा था, जव वादशाहके आनेकी ख़वर सुन वह उनके पास गया तो वादशाहने पूछा—"तुम कौन हो?" वादशाहको देखते ही अहीर घवरा उठा। वह वोला—"मैं मुन्शीख़ानेका ऊंट हूं।" वादशाह उसका जवाव सुन हंस पड़े।

साहूकारका सांस।

—:o:—

दिल्लीमें केशवदास नामक एक साहूकारकी वड़ी भारी दूकान थी। उसका कारवार इतना वड़ा-चढ़ा था, कि उसके समान वहुत कम लोगोंका कारवार चलता था। केशवदासकी देश-परदेशमें वहुतसी आढ़तें थीं।

एक दिन यकायक उनके पास कई करोड़ रुपयोंकी हुण्डियाँ आ गईं। सभी हुण्डियाँ दर्शनी थीं, जिनका रुपया तुरतही देना चाहिये था। इन सब रुपयोंमें पाँच लाख रुपये उसको घटते थे। इधर मुनीमको हिसाब करनेकी आज्ञा देकर केशवदास रुपयेकी खोजमें बाहर निकले। पर इतने रुपये एक जगह मिलनेकी उन्हें आशा न थी। इतने रुपये उन्हें केवल एक साहूकारके पास मिल सकते थे, पर वह साहूकार बड़ा ही निर्दयी था और केशवदासकी बढ़ती देख-देखकर बराबर जलता था। केशवदासने बहुत कुछ चाहा कि उसके पास न जायं, परन्तु कहीं रुपया मिलनेकी आशा न देख, लाचार हो, उसे उसी साहूकारके पास जाना पड़ा।

उस साहूकारके पास जाकर केशवदासने दस दिनोंकी मुद्दतपर पाँच लाख रुपये माँगे।

वह साहूकार केशवदासको रुपये माँगते देख बड़ा खुश हुआ और मन-ही-मन विचारने लगा कि, इतने दिनों बाद यह सेठ मेरे चंगुलमें फंसा है। यह सोचकर उसने कहा—"सेठ जी! रुपये देनेको तो मैं तय्यार हूं, पर आप अपनी देनेकी मुद्दत ठीक कर लीजिये।"

केशवदासने कहा—"रुपये समयपर ही मिलेंगे, इसके अलावः आप जो चाहें व्याज ले लीजिये।"

साहूकारने कहा—"आप पहिले-पहल मेरी दूकान पर आये हैं, इसलिये मैं आपसे व्याज तो न लूंगा, पर रुपया इस

शर्तपर दूंगा, कि यदि आप दस दिनोंमें रुपये न दे जायंगे तो आपके शरीरके जिस स्थानपरसे मैं चाहूंगा ऐक सेर मांस काट लूंगा।"

केशवदासने लाचार हो यह शर्त मंजूर की और कागज़ लिख दिया। उस सांहूकारने रुपये दे दिये। केशवदासने उनसे अपना काम चलाया। दो दिन बाद संयोगवश केशवदासकी तबीयत और भी ख़राब हो गई। दस दिनोंमें रुपये जहाँसे आनेवाले थे न आये। केशवदास एक तो पहलेसे ही बीमार था, इन कारणोंसे उसका रोग और भी बढ़ गया। इधर मुद्दत बीतने पर वह साहूकार मांस काटनेके लिये ज़िद्द करने लगा। केशवदासने पाँच लाख रुपये मय सूदके उसके पास भिजवा दिये, लेकिन उसने रुपये न लिये, केवल एक सेर मांस माँगा।

इधर मांस मिलते न देख, उस साहूकारने नालिश कर दी। क़ाज़ीने केशवदासको बुलवा भेजा। बीमार रहनेपर भी केशवदासको जाना ही पड़ा। वहाँ पूछनेपर केशवदासने सभी बातें स्वीकार कर लीं। क़ाज़ीने कहा—"अब मैं क्या करूं, जब तुम सब बातें स्वीकार करते हो, तो अब इस साहूकारको अधिकार है, कि वह सेरभर मांस तुम्हारे शरीरमें से काट ले।" क़ाज़ीकी आज्ञा सुनकर केशवदास बहुत डरा। उसने कहा—"मुझे अभी बादशाहसे कुछ कहना है। आप अपना फ़ैसला रोक रखिये।" क़ाज़ीने यह बात मंजूर कर ली।

केशवदास दूसरे दिन बादशाहके पास गया। उसने अपना पूरा पूरा हाल उन्हें कह सुनाया। बादशाहको सब समाचार सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि केशवदास एक नामी साहूकार था। वह नगरसेठ हो रहा, था और बहुत दिनोंसे उसकी दूकान चली जा रही थी। बादशाहने न्यायपूर्वक उसे बचानेका वचन देकर केशवदासको वहाँसे विदा किया। दूसरे दिन जब बीरबल आया तो बादशाहने सब हाल उससे कह सुनाया और कहा कि न्यायपूर्वक उसको बचाना चाहिये। बीरबलने भी हामी भरी।

कुछ दिन बाद बादशाहके पास उस साहूकारने प्रार्थना की और एक सेर मांस दिलवा देनेके लिये कहा। उस समय बीरबल वहीं बैठा था।

बादशाहने बीरबलकी ओर देखकर कहा—"इस साहूकारका मुक़द्दमा फ़ैसल करो, देखो यह साहूकार क्या कहता है।" बीरबलने उस दूसरे साहूकारकी अर्ज़ी सुनकर केशवदासको बुला भेजा। जब दोनों साहूकार इकट्ठे हो गये, तो बीरबलने उस दुष्ट साहूकारसे पूछा—"तुम रुपया क्यों नहीं लेते?" उसने उत्तरमें सब बातें कहीं। फिर बीरबलने केशवदाससे पूछा। केशवदासने कहा—"जो यह कहता है, सब ठीक है। पर मैं रुपये देनेके लिये तय्यार हूँ।" फिर भी उस सेठने रुपये लेनेसे इन्कार किया। बीरबलने उसे दया दिखाकर केशवदासको क्षमा करने तथा

रुपये ले लेनेके लिये कहा, पर वह सेठ न माना। तब वीरबलने कहा—"अच्छा, जब तुम रुपया नहीं ही लेते हो, तब हम भी तुम्हारी राय और क़ाज़ीकी रायको ही मानते हैं, तुम केशवदासके शरीरका मांस जहाँसे चाहो काट लो, परन्तु ख़याल रहे, कि तुम्हारी शर्तमें सिर्फ़ मांस लिखा है, ख़ूनका ज़िक्र नहीं है, सो यदि इनके शरीरसे एक बूंद भी ख़ून गिरेगा तो तुम जानसे मारे जाओगे। दूसरी बात यह है, कि अगर मांस कुछ अधिक कट गया, तो बाल-बच्चे समेत तुम्हारा प्राण लिया जायगा और तुम्हारा घर सरकारमें ज़ब्त होगा।"

आज्ञा सुनतेही साहूकार घबरा उठा और बोला—"मुझको मांस नहीं चाहिये, मेरे पाँच लाख रुपये दिलवा दीजिये।" वीरबलने कहा—"केशवदासने जिस समय रुपये भेजे थे, उस समय तूने क्यों नहीं लिये? अब तुझे मांसही लेना पड़ेगा, यदि न लेगा तो दस लाख रुपये दण्डके देने पड़ेंगे।"

वह साहूकार बोला—"मुझे कुछ न चाहिये।"

वीरबलने कहा—"देख, राजाज्ञा न माननेके अपराधमें तुझे दस लाख रुपये देने पड़ेंगे। दूसरा अपराध यह है कि तूने एक नगरसेठकी जान लेनी चाही थी, इस अपराधमें तुझे छः महीनेके कारादण्डकी आज्ञा दी जाती है।"

तुरतही सरकारी आदमी उसे पकड़कर बाँध ले गये

और साहूकारसे दण्डके मिले हुए दस लाख रुपये वीरबलको दिये गये।

पानी किसका उत्तम है ?



एक दिन अकबरने वीरबलसे पूछा—"वीरबल ! पानी किस नदीका बढ़िया है ?" वीरबलने कहा—"हुजूर ! यमुनाका।" अकबरने कहा—"ऐसा क्यों ? तुम्हारे हिन्दू-धर्ममें तो गंगाका बड़ा महात्म्य है। फिर तुम यमुनाका जल क्यों उत्तम बताते हो ?" वीरबलने कहा—"पृथ्वीनाथ गंगाका जल तो जल नहीं, अमृत है।" बादशाह सुनकर चुप हो गये।

हूर, परी और चुड़ैल दिखाओ।

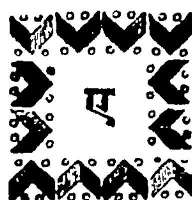
—:o:—

एक दिन अकबर बादशाह और वीरबल साथमें हवा खाने जा रहे थे कि राहमें उन्हें एक बहुतही बदसूरत औरत दिखाई दी। उसे देखतेही बादशाहने वीरबलसे कहा—"वीरबल ! हूर, परी और चुड़ैल मुझे दिखाओ।" वीरबलने कहा—"हुजूर ! आप यह इरादा छोड़ दें, क्योंकि इसमें सिवा दुःखके सुख नहीं है ; क्योंकि

इस दुनियामें हूर जल्द दिखाई नहीं देती। परी यदि दिखाई भी दी, तो आप उसे देखकर मोहित हो जायंगे और फिर आप को तकलीफ़ उठानी पड़ेगी और चुड़ैल बड़ी ख़राब चीज़ है। उसे देखकर कहीं आप डर गये तो बड़ी आफ़त होगी।" परन्तु बादशाहने अपनी हठ न छोड़ी, तब बीरबलने कहा—"अच्छा तो, बेगम साहिबाको भी साथ लीजिये, तब मैं ये तीनों औरतें दिखाऊं।" बादशाहने मंजूर किया। दूसरेही दिन बीरबलसे बादशाहने कहा, "जाओ, तुम हूर, परी और चुड़ैल ले आओ।" बीरबल वहाँसे उठा और अपनी स्त्री तथा एक रंडीको लेकर बादशाहके पास जा पहुंचा और बोला—"हुज़ूर! यह देखिये, यह मेरी स्त्री है। यह हूर है, इसके साथ रह कर सब तरहके सुख मैं भोगता हूं।" फिर रण्डीको दिखाकर कहा—"यह परी है, क्योंकि परियोंका काम गाना-बजाना और दूसरोंको रिझाना रहता है; मगर इनके फेरमें फंस जानेसे फिर दुःख उठाना पड़ता है। हुज़ूर! क़ुसूर माफ़ हो, आपकी बेगम साहिबा चुड़ैल हैं, क्योंकि जब कभी आप इनके पास जाते होंगे तब हमेशः गहने-कपड़ोंके लिये ये आपको तंग करती होंगी।" बादशाह सुनकर चुप हो रहे।

लकीर छोटी करो।

—:o:—



क दिन अकबर बादशाहने भरे दरबारमें एक बड़ी सी लकीर ज़मीनपर खींच दी और दरबारियोंसे कहा कि इसको बिना मिटाये छोटी कर दो। बादशाहकी यह आज्ञा सुन दरबारी बहुतही घबराये और उनको लकीर छोटी करनेकी कोई भी युक्ति दिखाई नहीं दी। घूमता-फिरता वीरबल भी वहाँ जा पहुँचा। उसके आतेही बादशाहने कहा—"वीरबल! इस खिंची हुई लकीरको बिना मिटाये छोटी कर दो। वीरबलने कहा—"यह क्या बड़ी बात है? मैं अभी इसे छोटी किये देता हूँ, पर इनाम क्या मिलेगा?" बादशाहने एक क़ीमती अँगूठी उँगलीसे उतारकर रख दी और कहा, जो कोई इस लकीरको बिना मिटाये छोटी कर देगा, उसे दस हज़ार रुपयोंकी यह अँगूठी दी जायगी। वीरबलने कहा, दरबारी लोग पहिले कोशिश करें, मैं पीछे चेष्टा कर लूँगा।" दरबारियोंको आधा घण्टा समय मिला, परन्तु वे किसी तरह उस लकीरको छोटी न कर सके, तब वीरबलने उठकर उसकी बगलमें एक बड़ीसी लकीर खींच दी। बादशाहकी खींची हुई लकीर छोटी होगई। बादशाह बहुतही खुश हुए और वीरबलकी बहुत कुछ प्रशंसा करने लगे। वीरबलने इनाममें वह अँगूठी भी

पाई। दरबारी सब बीरबलकी चतुराई देख अचरज करने लगे।

आईनेमें तस्वीर।



एक दिन एक धनवान् मनुष्यने एक चितेरेको बुला भेजा और उससे कहा, कि तू मेरी तस्वीर बना-ला। यह धनवान् मनुष्य ठग था और इसकी नीयत साफ़ न थी। इसने यह अभ्यास भी कर रखा था कि जब चाहे अपनी सूरत बदल ले। चितेरेने तस्वीर बनानेकी मज़दूरी ठीक कर ली और कुछही दिनोंमें तस्वीर बना लाया। चितेरा जब तस्वीर बना लाया, तो उस धनवान् ठगने अपनी सूरत बदल डाली और चितेरेसे कहा कि तू मेरी तस्वीर ठीक नहीं बना लाया है, अतएव फिरसे बना ला। चितेरा लाजवाब होकर चला गया और एक दूसरी तस्वीर बना कर ले आया। इस बार भी ठगने सूरत बदलकर उसे वापिस किया। ग़रीब चितेरा इसी तरह छः बार तस्वीर बना कर ले आया, परन्तु उस ठगने धोखा देकर उसे बिदा किया और मज़दूरीमेंसे एक पैसा भी न दिया। चितेरा उसकी धूर्त्तता समझ गया और रोता-कलपता बीरबलके पास पहुंचा। बीरबलने सब हाल सुनकर उससे कहा—"तू एक बड़ासा आईना लेकर उस ठगके पास जा और कह कि इस बार मैं

बहुत ठीक तस्वीर बना लाया हूं। मैं अपने दो सिपाही भी तेरे साथ कर देता हूँ।" वीरबलके कहे अनुसार चितेरा उस ठगके पास गया और बोला—"इस बार मैं आपकी ठीक ठीक तस्वीर बना लाया हूं। आप तस्वीर देखकर मेरी मज़दूरी दीजिये।"

ठग बोला—"तस्वीर दिखाओ।" चितेरेने आईना निकाल कर दिखा दिया। इस बार उसकी सूरत ठीक-ठीक मिली पर वह तुरत ही बोला—"तू मुझे आईना क्यों दिखाता है।" इसबार चितेरा बिगड़कर अपनी मज़दूरी माँगने लगा। ठगने साफ कह दिया, कि मैंने तुझे तस्वीर बनानेके लिये नहीं कहा था, मैं एक पैसा भी न दूँगा। दोनोंमें बहुत कुछ झगड़ा हुआ, परन्तु वह ठग पैसा देनेके लिये राज़ी न हुआ। यह देख वीरबलके दोनों सिपाही जो अपने वेष बदल कर आये थे बोले—"तुम इसकी मज़दूरी दे दो।" ठग बोला—"तुम दोनों कौन हो, जो मज़दूरी दिलवाने आये हो?" तुरतही सिपाहियोंने अपना नक़ली वेष उतार डाला और उसे पकड़कर ले जानेके लिये तय्यार हुए। ठग बहुत तरहसे उनसे प्रार्थना करने लगा; परन्तु सिपाही उसे पकड़कर अपने साथ लेही गये। वहाँ वीरबल उससे पूछने लगा, परन्तु उस ठगने ठीक-ठीक जवाब न दिया। वीरबलने अपने सिपाहियोंको कोड़ा लानेका हुक्म दिया। कोड़ा देखतेही उस ठगने अपराध स्वीकार कर लिया। वीरबलने

चितेरेको रुपये दिलवा कर ठगको छः महीनेकी क़ैदकी सज़ा दी।

आधा तेरा आधा मेरा।



एक दिन बीरबल बादशाहकी आज्ञासे किसी ज़रूरी कामके लिये गया था। काम बहुत ज़रूरी था, इसलिये बादशाहने बीरबलको भेजा और कहा—"तुम इसकी ख़बर तुरत मुझे देना।" जब बीरबल लौटकर आया, उस समय रात हो चुकी थी और बादशाह महलमें चले गये थे, पर बीरबलको महलमें चले आनेका हुक्म देगये थे। जब बीरबल काम करके लौटा और महलमें जाने लगा, तो लालची चोबदार और ख्वाजेसराओंने समझा कि बीरबल बड़ा काम कर आया है। ज़रूर इनाम पावेगा। इसलिये इसे रोककर कुछ हिस्सा बंटवा लेना चाहिये। इसलिये पहिली ड्योढ़ीपरही चोपदारने रोका। बीरबलने कहा—"मुझे ज़रूरी काम है, भीतर जाने दो, जो कुछ मुझे इनाम मिलेगा, आधा तुम्हें भी दूँगा।" चोपदारने छोड़ दिया। फिर ख्वाजेसराने रोका, बीरबल उसे भी आधे इनामका लालच दे भीतर चला गया। जब काम हो जानेका समाचार सुनकर बादशाह बीरबलको इनाम देने लगे, तो बीरबलने कहा कि आज मुझे पाँच सौ जूते इनाम दीजिये। बादशाहने

कहा—"बहुत अच्छा।" तुरतही वीरबलने चोपदार और ख़्वाजेसराको बुलाकर कहा—"आजका इनाम इन दोनोंमें बाँट दिया जाये।" बादशाहके हुक्मसे दोनोंको ढाई ढाई सौ जूते लगे और उन लोगोंने अपने अपराधकी क्षमा माँगी।

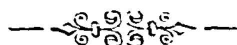
आकाशमें तारे कितने हैं ?



एक दिन अकबर बादशाहने वीरबलसे पूछा—"वीरबल! आकाशमें तारे कितने हैं?" वीरबलने कहा—"हुज़ूर! इस बातका जवाब अभी देना मुश्किल है। कल बता दूँगा।" बादशाहने वीरबलकी बात मान ली। वीरबलने मन-ही-मन सोचा कि इस सवालका जवाब देना असम्भव है; इसलिये कोई ऐसी तर्कीब करनी चाहिये, कि बादशाहको जवाब मिल जाये। अन्तमें उसने एक बड़ासा काग़ज़ निकाला और ख़ूब महीन सूईसे उसमें छेद करने लगा। देखा-देखी उसके घरवाले भी आकर उसी काग़ज़में छेद करने लगे। काग़ज़में बहुतसे छेद हो गये और वे छेद इस तरकीबसे बनाये गये कि उनका गिनना असम्भवसा हो गया। दूसरे दिन दरबारमें जातेही वीरबलसे बादशाहने वही प्रश्न किया। वीरबल अपनी जेबसे काग़ज़ निकालकर बादशाहसे बोला—"हुज़ूर! इस काग़ज़में जितने छेद हैं आकाशमें उतनेही तारे हैं।" बादशाहने वह काग़ज़ गिनने

को कितनेही मनुष्योंको दिया, पर कोई भी गिन न सका। लाचार बादशाह निरुत्तर हो चुप रह गया।

चौबेकी दिल्लगी।



एक दिन अकबर बादशाहको संयोगसे दरबारमें बैठे-बैठेही जम्हाई आ गई। जितने दरबारी बैठे थे, सब चुटकी बजाने लगे, परन्तु एक हँसोड़ चौबे जो वहाँ बैठा था, चुटकी बजानेवालोंको ओर अँगूठा दिखाने लगा। बादशाह जब जम्हाई ले चुके तब चौबेसे बोले,—"ये लोग तो चुटकी बजाते थे, पर तुम इन्हें अंगूठा क्यों दिखाते थे?" चौबे बोला—"पृथ्वीनाथ! आप समझे नहीं, ये आपको चुटकीमें उड़ा दिया चाहते थे। मैंने देखा यह बात असम्भव है, इसीलिये इन लोगोंको अँगूठा दिखा दिया।" बादशाह उत्तर सुन हँस पड़े और चौबेको बहुत कुछ इनाम दिया।

सोया सो खोया।



एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे कहा—"बीरबल! तुम एक दिन बहुरूपियेका स्वांग लाओ।" बीरबलने मंजूर किया। दूसरे दिन बीरबल एक कुंजड़ेका स्वाँग बना। लेकिन उसने टोकरीमें

तरकारीके साथ-साथ मिठाई और खोआ भी रख लिया तथा क़िलेके नीचे फेरी लगाने लगा। संयोगसे बादशाह उस समय खिड़कीमें आ बैठे और कुँजड़ेको मिठाई बेचते देख आश्चर्यसे बोले—"ओ कुँजड़े, क्या बेचता है?" बीरबल बोला—"साग, सोया, तरकारी, मिठाई, खोया।" बादशाहने कहा—"खोया क्या भाव?" बीरबल बोला—"टके सेर।" बादशाहने फिर पूछा—"सोया क्या भाव?" बीरबल बोला—"जो सोया सो खोया।" बादशाह जवाब सुनकर समझ गये कि यह बीरबल है। तुरतही उन्होंने बीरबलको बुला भेजा और बहुत कुछ इनाम दिया।

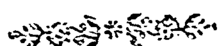
घुंघचियोंकी माला क्यों?



एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे कहा—"मालूम होता है कि तुम्हारे देवता श्रीकृष्णचन्द्रपर कुछ नासमझी सवार थी।" बीरबल बोला, "हुज़ूर! आपकी बातें मेरी समझमें नहीं आतीं।" बादशाहने कहा,—इसीलिये तो वे मोती छोड़कर घुँघचियोंकी माला पहिनते थे।" बीरबलने कहा, "नहीं पृथ्वीनाथ! वे इस दुनियाके आदमियोंसे कहीं बढ़कर समझदार थे। वे घुँघचियोंकी माला इसलिये पहिनते थे, कि वह सोनेसे भी बढ़कर है। सोना धर्मशास्त्रमें बहुत पवित्र माना गया है, परन्तु

सोना घुंघचीसे तौला जाता है, इसलिये घुंघची सोनेसे भी बढ़कर है। बस यही कारण है कि श्रीकृष्णचन्द्रने हीरा, मोती छोड़ कर घुँघचियोंकी माला पहिननी आरम्भ कर दी थी।" यह सटीक जवाब सुनकर बादशाह चुप हो गये।

बाजा बजाओ।



एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे पूछा—"बीरबल! तुम गाना-बजाना जानते हो?" बीरबलने कहा—"हुज़ूर! मौक़ा पड़नेपर बता दूंगा।" परन्तु असलमें बीरबल गाना-बजाना बिलकुल नहीं जानता था, न उसके पास कोई बाजाही था। दूसरेही दिन अकबर बादशाहने कई गवैये बजवैये बुलवाये। जब उन लोगोंका साज़ मिल गया, तब बीरबलसे बोले—"तुम भी बजाओ।" बीरबलने तुरत एक खटियेका पावा मंगवाया और उसमें कपड़ा लपेटकर एक लकड़ीसे बजाने लगा। सभोंके साथ बीरबलकी खटाखट भी तालमें अच्छी मालूम होने लगी। यह देख बादशाहने कहा—"सब कोई एक-एक करके बजाओ।" जब सब बजा चुके और बीरबलके बजानेकी बारी आई, तब बीरबल बोला—"हुज़ूर! यह बाजा अकेला नहीं बजता।" बादशाहने एक बीनकारको बजानेका हुक्म दिया। बीरबल तुरतही लयमें उसका साथ देने लगा। बादशाह यह

हाल देख दंग हो गये और उस दिनसे फिर वीरबलको गाने-बजानेसे अलग रखा ।

दो मुट्ठी जाड़ा ।



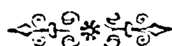
माघका महीना था। दिल्लीमें जाड़ा खूब पड़ रहा था। बहुतसे गर्म कपड़े पहिननेपर भी बादशाह अकबरको जाड़ा मालूम होता था। अतएव बादशाहने वीरबलसे पूछा—"वीरबल! आज जाड़ा कितना है।" वीरबलने कहा—"दो मुट्ठी!" बादशाहकी समझमें यह जवाब बिल्कुल बेहूदा मालूम हुआ। अतएव वे वीरबलसे बोले—"वीरबल! यह कोई जवाब नहीं है। सुबूत दो।" वीरबलने कहा—"बहुत अच्छा।" इसी समय एक ग़रीब भिखमंगा नंगे बदन दोनों मुट्ठियाँ बाँधकर उन्हें अपनी काँखमें दबाये जाता हुआ दिखाई दिया। वीरबलने बादशाहको बुलाकर वह भिखमंगा दिखा दिया। बादशाह सटीक जवाब पाकर चुप हो गये।

वीरबल धर्मगुरु ।

वीरबलके किसी जवाबको सुनकर एक दिन अकबर बादशाह बहुत नाराज़ हो गये। उन्होंने उसी समय वीरबलको दरबारसे निकल जानेकी आज्ञा दी। वीरबल निकलकर चला गया। दो-चार दिन बाद

बीरबलने अपनी शक्ल धर्मगुरु कीसी बनाई और दिल्लीमें लौट आया। साथ ही अपनेको बादशाहका धर्मगुरु कहकर प्रसिद्ध कर दिया। हज़ारों मनुष्य बीरबलके पैरों पड़े। बादशाहने भी अपने गुरुका आगमन सुना और नंगे पाँव उनसे मिलने आया। इसी समय बीरबल एक कोठरीमें जा छिपा। जब बादशाह उस कोठरीके पास आया और भीतर जानेकी आज्ञा माँगी, तो बीरबलने कहला भेजा कि बादशाहको भीतर न आने दो। जब बादशाहने कारण पुछवाया तो कहला दिया—"तूने बीरबलको नाहक़ निकाल दिया है, ऐसे बेइन्साफ़ मनुष्यसे मैं मिलना नहीं चाहता।" तुरत ही बादशाहने बीरबलको बुलानेका हुक्म दिया। जब बादशाह हुक्म दे चुके तो भीतर आनेकी इजाज़त मिली। ज्योंही बादशाहने भीतर पैर रखा त्योंही बीरबल उठ खड़ा हुआ। बादशाहने आश्चर्यसे बीरबलको देखकर कहा—"बीरबल!" बीरबल बोला—"आपका दासानुदास।" बादशाह प्रसन्न हो गया और बीरबलका हाथ पकड़ दरबारमें ले गया।

उज्ज्वल क्या है?



वसन्तके दिनोंका दिन, सन्ध्याका समय था। बादशाही बाग़में चारों ओर फव्वारे छूट रहे थे। फूलोंकी मीठी-मीठी खुशबू चारों ओर फैल रही थी। बाग़के ठीक बीचोंबीच एक चबूतरेपर अकबर बादशाह अपने

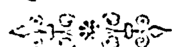
दरबारियोंके साथ बैठे हुए बातें कर रहे थे। इसी समय माली सफ़ेद सुगन्धित फूलोंके गजरे लिये हुए वहाँ आ पहुँचा। बादशाहने दरबारियोंको एक-एक गजरा दिया। सभी फूलोंकी तारीफ़ करने लगे। बात-ही-बातमें उज्ज्वलतापर बात चली। बादशाह पूछ उठे—"सबसे उज्ज्वल क्या है?" दरबारियोंमें किसीने दूध, किसीने धोये वस्त्र, किसीने रूई बताई, परन्तु जय रूई बतानेवालेकी ही हुई और सभीने रूईका उज्ज्वल होना माना। बीरबल भी वहीं बैठा था, जब यह बात समाप्त हुई तो बीरबलने कहा—"पृथ्वीनाथ! संसारमें दिनसे बढ़कर कोई पदार्थ उज्ज्वल नहीं है।" बादशाहने कहा—"प्रमाण दो।" बीरबलने कहा—"कल दूंगा।"

दूसरे दिन अकबर बादशाह अपने दीवानखानेमें दो पहर-को सो रहे थे। बीरबलने वहाँ जाकर एक कटोरा दूध और थोड़ी रूई ठीक दरवाज़ेपर रख दी और दरवाज़े सब बन्द कर दिये। दीवानख़ानेमें अँधेरा हो गया। बीरबल उसी अन्धकारमें पास ही छिप रहा। थोड़ी देरमें बादशाहकी नींद खुली और वे उठकर ज्योंही बाहर आने लगे, त्योंही दर-वाज़ेपर रखे हुए दूधके कटोरेमें ठोकर लगी और दूध गिर पड़ा। बादशाहने क्रोधमें आकर कहा—"दूध किसने यहाँ रखा है और किवाड़ किसने बन्द किये हैं?" तुरत ही दौड़कर बीरबल बादशाहके पास पहुँचा और बोला—"यह सब मैंने किये हैं। आपने कल दिनको उज्ज्वलताका प्रमाण माँगा था, देखिये

दूध और रूई आपके सामने हैं; किन्तु इनमें उतनी उज्ज्वलता न रहनेके कारण आप इन्हें न देख सके और कटोरेमें ठोकर लगनेके कारण दूध गिर पड़ा। अब यदि किवाड़ खोल दिये जायँ तो दिनकी इतनी उज्ज्वलता इस कमरेमें आजाय कि छोटीसे छोटी चीज़ भी अवश्य दिखाई दे।"

बादशाह बीरबलकी युक्ति सुन प्रसन्न हो गये और उसे बहुत कुछ इनाम दिया।

अद्भुत न्याय।



एक दिन सन्ध्याके समय अकबर बादशाह दरबार समाप्तकर प्रसन्नतासे बैठे हुए थे। उनके पास उस समय प्रसिद्ध-प्रसिद्ध गवैये बैठे थे, साज मिलाया जा चुका था और सभी शौकसे मियाँ तानसेनका मुँह देख रहे थे, कि वह कोई चीज़ अलापेंगे। कुछ ही क्षण बाद तानसेनने गाना आरम्भ किया। चारों ओरसे वाह-वाहकी ध्वनि सुन पड़ने लगी। अकबर बादशाह भी प्रसन्न होकर तानसेनकी प्रशंसा करने लगे। इसी समय दो मनुष्योंको साथ लिये हुए शहर कोतवाल वहाँ आ पहुंचा। इन दोनों मनुष्योंके शरीरसे खून बह रहा था। इन दोनोंको तथा कोतवालको इस समय आते देख, रंगमें भंग हुआ जान, अकबर बादशाह नाराज़ होकर बोले—"क्या तुम्हें मालूम नहीं

है, कि दरबारका वक्त बीत चुका? अब इस वक्त इन
लाना महज़ फ़िज़ूल है। रातभर इन्हें क़ैद कर रखना था
कोतवाल बड़ी नम्रतासे बोला—"मेरा कोई अपराध नहीं
यह अभियोग गम्भीर और विचारणीय है, इसीलिये इ
समय यहाँ आनेका साहस किया है।" बादशाहने कुछ न
होकर कहा—"अच्छा, कहो क्या बात है?" कोतवा
कहा—"धर्म्मावतार! आज मैं नगरमें गश्त लगाने गया थ
एक बाज़ारमें देखा कि ये दोनों मनुष्य आपसमें लड़ रहे
लड़नेवाले ये दोनों ही व्यापारी हैं। इनमेंसे एक तो हम
इस शहरका नामी सौदागर है और दूसरा एक अपरिचित
आदमी है। (एकको दिखाकर) यह हमारे शहरके सौदा-
गरका हाथ पकड़कर कह रहा था—"आज तू बड़ी मुश्किलसे
हाथ आया है, सात बरससे मैं तुझे खोज रहा हूँ। तूने
नौकर होकर नमकहरामी की है।" यह सुन उस शहरके
सौदागरने कहा—"नौकर तू है, मैं आप तेरी फ़िराकमें था,
आज तू मेरे पाले पड़ा है, अब क्या तुझे छोड़ूँगा?" इसी-
तरहकी बातें सुनकर ही मैं इन दोनोंको पकड़ लाया
ये दोनोंही मालिक बना चाहते हैं। अब हुज़ूर जैसा
न्याय करें।" बादशाहने दोनोंसे सबूत माँगे; पर कोई
ठीक-ठीक सबूत न दे सका। परिचित सौदागर बोला-
"यह मेरे पास पहिले नौकर था, पर जाने क्यों मेरा बहुतसा
माल लेकर चुपचाप भाग गया। आज पाँच वर्षसे मैं इ

ड़ियोंने तुरत उसे पकड़ लिया। यह दि
था। शेर अलीने अपना अपराध स
"मेरा नाम नसीवा है, मैं इनके
ा था और व्यापारका सब हाल ज
र यहाँका नामी सौदागर हो ग
माई थी, जो आज ख़ाकमें मिल ग
किया चाहता, बस जल्लादको हु
तनसे जुदा कर दे।" नसीवाकी वा
वादश उस नये सौदागरसे कहा—"तुम क्या
हो?" वह बोला—"मुझे कुछ नहीं चाहिये, मेरी
ा रह गई, यही बहुत है।"

नसीवा प्राण देनेके लिये खड़ा था पर गुजरातका किया
ा उपकार स्मरण कर बादशाहने उसे बिलकुल छोड़ दिया।
सीवा अपने मालिक शेरअलीको अपने घर ले गया और जो
कुछ धन उसके पास था, उसके आगे ला रखा। पर शेर-
लीने उतनेही रुपये जो उसके यहाँसे चोरी गये थे ले लिये
ाकी सब छोड़ कर चला गया।

रबलका अद्भुत न्याय देख सभी दंग हो गये।
हने प्रसन्न होकर बीरबलको बहुत कुछ इनाम दिया।

है, किं
लाना म
कोतवा

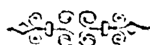
बैलका दूध।

—::*::—

यह ... क बार अकबर बादशाहने वीरबलसे कहा कि, समय ... बैलका दूध लाओ।' वीरबलने स्वीकार कर होक... लिया कि बहुत अच्छा ला दूँगा। परन्तु उसे कहा बातका पीछे बड़ा सोच हुआ कि, बादशाहको क्या जवाब ए...। इसी चिन्तामें दुखीसा होकर वह घरपर आकर खाटपर लेट रहा। वीरबल की स्त्री भी बड़ी चतुर थी। वह रंगढंग देखकर समझ गयी कि, आज बादशाहने इनसे किसी कठिन वस्तुके लिये कहा है। उसने पूछा, आज क्या बात है जो तुम इतने चिन्तित हो रहे हो? क्या बादशाहने कोई कठिन काम करनेको कहा है?" वीरबलने कहा,—"हाँ, उन्होंने बैलका दूध मांगा है और मैंने भी हामी भर दी है। अब मैं इसी सोचमें हूं कि, बादशाहको इसका क्या उत्तर दूँ।" वीरबलकी स्त्रीने कहा,—"इसका भार मेरे सिरपर रहा, मैंही इसका जवाब दे दूँगी।" दूसरे दिन बड़े सवेरे उठकर, वीरबलकी पत्नी नदी-किनारे चली गयी और कपड़े धोने लगी। नदीके ऊपर ही बादशाह नदीकी बहार देख रहे थे। उस स्त्रीका बड़े घरकी स्त्रियोंके समान पहिनाव पोशाक और रीत-व्यवहार देखकर बादशाहने कहा,—"हे सुन्दरी! देखनेसे तू किसी बड़े घर की जान

पड़ता है, फिर तूने अपनी किसी दासीको क्यों नहीं
धोनेके लिये भेज दिया और आपही नदी किनारे आ
दूसरे, इतने प्रातःकाल आनेकी क्या आवश्यकता थी?
आना था, तो दिन चढ़े आती।" उसने कहा,—"
कोई दासी काम करने नहीं आयी, जो उसे भेजती। इ
रातकोही मेरे पतिके बच्चा हुआ है, जिससे मुझे कप
धोनेके लिये आना पड़ा।" सुनकर बादशाहको हँसी आ
गयी और बोले,—"अरी बावली! कहीं पुरुषके भी बच्चा
पैदा होता है?" स्त्रीने कहा,—"जब पुरुषके बच्चा नहीं होता,
तब बैलके दूध कैसे होता है?" अकबर समझ गये कि, यह
बीरबलकी स्त्री है। उसकी बुद्धिमानी पर प्रसन्न होकर उन्होंने
उसे बहुतसा इनाम दिया और पालकीपर बिठला कर आदरके
साथ घर भिजवा दिया।

आपहीका है।



एक दिन किसी रंडीके लड़केका मुक़द्दमा पेश था। बादशाह दिल्लगीमें बारबार रंडीसे पूछता, "बतला, यह लड़का किसका है?" रंडी शर्मसे कट-कट जाती और चुपचाप खड़ी रह जाती थी। जब बादशाहने कईबार यही सवाल किया, तब बीरबलसे न रहा गया। उसने कहा,—"हुज़ूर! आप जगत्पिता हैं। समझ लीजिये

हीका लड़का है।" बादशाह बीरबलकी इस दिल्लगीसे गया और चुप हो रहा।

बड़े गधे हो।



एक बार बादशाह अकबर और बीरबल पास-पास बैठे हुए तरह-तरह की बातोंमें मशगूल थे। बहुत रोकने पर भी यकायक बीरबलकी अधोवायु निकल गयी। बादशाहने नाराज़ हो कर कहा,—"बीरबल! तुम बड़े गधे हो।" बीरबलने कहा,—"महाराज! परमात्माने तो मुझे आपसे हर सूरतमें छोटा बनाया है।" बादशाह बीरबलके इस जवाबसे शर्माकर चुप हो रहा।

आधा मेरा आधा आपका।



एक दिन अकबर बादशाह और बीरबल यमुना किनारे टहलते हुए हवाख़ोरी कर रहे थे। बीरबल बड़े ग़ौरसे नीचा सिर किये ज़मीनकी ओर देख रहा था। बादशाहने पूछा,—"क्या कुछ खो गया है जो इस तरह ग़ौरसे देख रहे हो?" बीरबलने कहा,—"मेरा बाप यहीं

ज़मीनमें खो गया है, उसे ही ढूढ़ता हूं ।" बादशाहने कहा,—"वेदारी अगर हम पैदा कर दें, तो क्या दोगे ?" वीरवलने कहा,—"। सास-क्या ? उसमें आधा आधा हिस्सा कर लेंगे । आधा अ कभी यश और आधा मेरा होगा ।" बादशाह लाजवाब हो कर श, कोई हो रहा ।

ो कृतघ्न
ने ही
ौर

मुंह-तोड़ जवाब ।

—:०:—

एक दिन किसी बेगमको देहमें दर्द हो रहा था। बादशाह भी इससे बड़े चिन्तित थे। उन्होंने वीरबलसे पूछा,—"यों एकाएक बेगम साहबाके दर्द क्यों पैदा हो गया, कुछ बतला सकते हो ?" वीरवलने कहा, "हुज़ूर ! कोई पट्ठा चढ़ गया होगा।" अकबर को हँसी आ गयी, पर मन-ही मन बहुत शर्मिन्दा हुआ ।

वीरबलकी दुआ ।



एक दिन बादशाहने वीरबलका जूता उठवा दिया । चलते समय वीरबल जूता ढूंढ़ने लगा, जब नहीं मिला तब बादशाहने अपने नौकरसे कहा,— "अच्छा, हमारी तरफ़से इन्हें जूते दो ।" वीरवलने जूता पहन

हे, किं —ादशाहको दुआ दी, "परमात्मा आपको ऐसे-ऐसे हज़ार
लाना म ।लवाये।" बादशाह लज्जित हो चुप हो गये।
ग।
कोतवा
यह अ

कुत्तोंका हाकिम।

समय



होकर

एक दिन मियाँ अबुल फ़ज़लने बादशाहके सामने ही वीरबलको लज्जित करनेके इरादेसे कहा,—"वीरबल! तुमको बादशाहने कलसे कुत्तोंका अफ़सर मुक़र्रर किया है।" वीरबलने कहा, "यह तो बहुत ही अच्छा हुआ, क्योंकि अब आपको भी मेरी आज्ञामें रहना पड़ेगा।" वीरबलका यह जवाब सुनकर बादशाहका हंसते-हँसते बुरा हाल हो गया और अबुल फ़ज़ल शर्मसे पानी पानी हो गया।

पूत, सपूत, कपूत।

—:o:—

एक दिन बादशाहने वीरबलसे कहा,—कि वीरबल! मुझे पूत, सपूत और कपूत दिखलाओ। वीरबलने कहा,—"धर्मावतार! तीनों यहीं हाज़िर हैं।" बादशाहने कहा,—"बतलाओ।" वीरबलने कहा,—"पूत तो आप हैं, जो आपके पिताने भी बादशाहत की और आप भी कर रहे हैं; सपूत मैं हूँ क्योंकि मेरा बाप झोंपड़ेमें रहता था,

उसे कोई न जानता था और मैं आपके यहाँ पूरी फर्माबर्दारी हूं ; और कपूत ये आपके साले साहब हैं, (बादशाह है। साले-तरफ़ उंगलीका इशारा कर) जो अपने बाप-दादा कभी यश डूबोकर आपकी दी हुई मुफ़्तकी रोटियाँ तोड़ रहा, कोई बादशाह यह उचित उत्तर सुनकर मन-ही-मन बहुत प्रसे कृतघ्न और बादशाहका साला जल भुनकर ख़ाक हो गया। नते ही और किया

माला दे।

—:०:—

एक दिन बादशाह अकबर बीरबलके साथ नदीकी सैर कर रहे थे। बादशाहने अपनी माला पानीमें फेंक कर कहा,—"बीरबल माला दे।" बीरबलने कहा,—"धर्मावतार! बहने दो।" बादशाह इस जवाबसे बहुत शर्मिन्दा हुआ और मनही मन बीरबल की बुद्धिमानी की तारीफ़ की।

कृतज्ञ और कृतघ्न।

—::*::—

एक दिन अकबर बादशाहने बीरबलसे कहा कि "बीरबल! तुम ऐसे दो प्राणी मेरे पास लाओ, जिनमेंसे एक तो कृतज्ञ (उपकारीका अहसान

है, कि —ादशाहको और दूसरा कृतघ्न (उपकार न माननेवाला
लाना म ालवाये। कहा, "जो आज्ञा। पर इसके लिये कुछ
कोतवा गा ।" बादशाहने उसे पन्द्रह दिनकी मुहलत दी।
यह अ तदिन सिर मारा किया, पर ऐसे दो प्राणी उसके
समय नहीं आये। वीरबलकी लड़की बड़ी बुद्धिमती
हो अपने पिताके समान ही चतुरा थी। उसने एकदिन
क पितासे कहा,—"पिताजी! आजकल आप बड़े चिन्तितसे
ाई पड़ते हैं, इसका क्या कारण है? क्या आपको कोई
बीमारी हो गई है या बादशाहकी कुछ नाराज़ी है?" वीर-
बलने पहले तो बड़ा टालमटोल किया, पर अन्तमें उसको
सारा हाल बतलानाही पड़ा। लड़कीने कहा,—"आप नाहक
क्यों चिन्तित होते हैं? मैं कल आपको इसका जवाब दूंगी।"
दूसरे दिन जब दरबारका समय हुआ और वीरबल वहाँ
जानेके लिये कपड़े पहन कर तैयार हुआ, तब उसकी लड़-
कीने आकर कहा,—"आप अपने साथ मेरे पति और
एक कुत्तेको लेते जाइये।" वीरबल मतलब समझ गया
और अपने दामादको साथ ले चला। अपने घरके पालतू
कुत्तेको भी संग ले लिया। जाते ही बादशाहने पूछा,—"क्यों
वीरबल! आज तुम अपने साथ किसको ले आये हो?"
वीरबलने कहा,—"आपके मंगाये हुए दोनों प्राणियोंको
लाया हूँ। देखिये, यह कुत्ता बड़ाही कृतज्ञ जानवर है।
अपने उपकारीका सदा साथ देता है। कभी उसके उपकार

को नहीं भूलता। अपने मालिककी पूरी पूरी फर्मांबर्दारी करता है। दूसरा अकृतज्ञ जीव यह मेरा दामाद है। सास-ससुर इसके लिये चाहे प्राण भी देदें, पर यह कभी यश न मानेगा।" अकबरने कहा,—"सच है। अच्छा, कोई है? अभी इस अकृतज्ञको फाँसी लटका दो। ऐसे कृतघ्न से दुनियाँ ख़ाली हो जाय, यही ठीक है।" सुनते ही बीरबल चकराया, पर उसे झटपट एक युक्ति सूझ गयी और बोला,—धर्मावतार! इस मेरे दामादने क्या क़सूर किया है, जो फाँसी लटकाया जाता है? दुनियाँ भरके दामादोंका यही हाल है। हम और आप भी तो किसीके दामाद हैं?" सुनकर अकबर हँसा, और उसके दामादको बहुत कुछ इनाम दिया तथा बीरबलकी बुद्धिमानीकी बार-बार बड़ाई की।

———

दौलतको देश निकाला।



एक दिन बादशाहकी भरी महफ़िलमें किसी दौलत नामक वेश्याने बड़ी भारी गुस्ताख़ी की। बादशाह ने उसे महफ़िलसे निकलवा दिया और दूसरे ही दिन उसके देशनिकाले की आज्ञा जारी कर दी। उसने घबरा कर बीरबलके पाँव पकड़े और विनती की, कि मेरे बचाव की कोई सूरत निकालिये। बीरबलको उसकी दशापर दया आ

गयी । उसने कहा,—"कल सवेरे दरबारमें जाकर अर्ज़ करना, कि दौलत फिर एकबार दरबारमें हाज़िर हुई है और जानना चाहती है, कि क्या वह सदाके लिये आपके देश और दरबार को छोड़ ही दे?" बादशाह उसके ये युक्ति-भरे वाक्य सुनकर प्रसन्न हुआ और बोला,—"नहीं, दौलत सदा हमारे दरबारमें रहे।" देश-निकालेकी आज्ञा रद्द हो गयी और दौलत बीरबलको मन-ही-मन असीसें देते हुई चली गयी।

थोड़ा बहुत ।

—:o:—

एकदिन बीरबल अपनी पाँच-छः सालकी लड़कीको लेकर दरबारमें गया। बादशाहने उससे पूछा, "बेटी! तू पढ़ना-लिखना जानती है?" लड़कीने जवाब दिया,—"हाँ, थोड़ा बहुत।" बादशाहने पूछा,—"इसका क्या मतलब? लड़कीने कहा,—"जो मुझसे बड़े हैं, उनसे थोड़ा और जो छोटे हैं उनसे बहुत जानती हूँ।" बादशाह इस छोटीसी लड़की की ऐसी बुद्धिमानी-भरी बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और समझ लिया कि, बीरबलका ख़ानदान ही बुद्धिमान और हाज़िरजवाब है।

बीरबलकी दासी। है? यह सुनकर सब

—:o:—

एक बार वीरबल बादशाहको अपने दिखलानेके लिये ले गया। बाद पहले ऊपरहीको गये। दिखलानेके लिीर देनेका वीरबल और उसकी एक दासी थी। बादशाहने ाया; तब ओर देख दिल्लगीसे कहा,—“तुम्हारा ऊपरका मकान बादशाह सजा हुआ है, पर ज़रा नीचेवाला भी तो दिखलाओ।” में एक भी परले सिरे की हाज़िरजवाब थी। उसने कहा,—“आप उसी रास्तेसे तो आये हैं।” बादशाह सुनते ही झेंप गया और फिर कोई छेड़-छाड़ नहीं की। उसी दिनसे बादशाहके जीमें यह ठन गयी कि, इस लौंडीको छकाना चाहिये। कुछ दिनों बाद बादशाह फिर वीरबलके घर गये और कहा कि ज़रा उस लौंडीको तो बुलाओ। जब वह बादशाहके पास आयी, तब बादशाहने देखा कि उसकी कमरमें कुंजियोंका गुच्छा लटक रहा है। बादशाहने हँसकर पूछा,—“ये कुंजियाँ किस कोठरीकी हैं?” लौंडीने कहा,—“उसीकी जिसमें आप नौ महीने क़ैद थे।” यह उत्तर सुनकर बादशाह बहुतही लज्जित हुआ और वीरबल या उसके घरवालोंसे दिल्लगीमें जीतनेका इरादा छोड़ दिया।

गयी। उसने कहा,— ...स्त और पाद।

कि दौलत फिर प...

—:o:—

चाहती है, कि य... अकबर बादशाहने बीरबलसे कहा,—
को छोड़ दी ...म्हारी संस्कृत भी कैसी वाहियात भाषा है
प्रसन्न हुआ ...जसमें पैरोंको 'पाद' कहते हैं। कैसी भद्दी भाषा
रहे।" ...लने कहा,—"और आपकी फारसीसे तो बढ़कर
बलको ... भाषा ही न होगी; जिसमें हाथोंको 'दस्त' कहते
...स हाथसे आदमी खाना खाता है, पूजापाठ करता है,
उसे 'दस्त' कहना चाहिये?" बादशाह यह मुँहतोड़ जवाब पा
चुप हो गया।

कुछ नहीं।

—:o:—

एक बार अकबर बादशाहने अपने दरबारियोंसे पूछा कि, सत्ताईसमेंसे नौ गये तो बाक़ी कितने बचे? सब लोगोंने उत्तर दिया, "अट्ठारह।" बादशाहको इस उत्तरसे सन्तोष नहीं हुआ। उसने बीरबलके आनेपर यही प्रश्न उससे भी किया। बीरबलने कहा,—"कुछ भी नहीं।" इस बातसे सब लोगोंको बड़ा आश्चर्य हुआ। बीरबलने कहा—देखो वर्षमें सत्ताइस नक्षत्र होते हैं। उनमें ... वल नौ हैं। यदि वर्षाके ये नौ नक्षत्र निकाल लिये

जावें, तो बाक़ीके अट्ठारह किस कामके हैं? यह सुनकर सब सभासदोंने बीरबलकी बड़ाई की।

ऊंटकी गर्दन।

—::o::—

एक बार बादशाहने बीरबलको जागीर देनेका वादा किया; पर जब देनेका समय आया; तब मुँह फेर लिया। इसके कुछ दिन बाद बादशाह जब बीरबलके साथ घूमने को निकले हुए थे, तब रास्तेमें एक ऊँटको देख बादशाहने पूछा,—"बीरबल ऊँट की गर्दन टेढ़ी क्यों है?" बीरबलने कहा,—"कभी इसने भी किसीको जागीर देनेका वादा करके पीछे गर्दन टेढ़ी कर ली होगी।" सुनतेही बादशाह को जागीरवाली बात याद हो आयी और उसने उसी दम बीरबलको एक अच्छीसी जागीर दे दी।

बादशाहका सपना।

—:o:—

एक दिन दो पहरीमें बीरबलके साथ बातें करते-करते बादशाह को नींद आ गयी। नींदमेंही ज़ोरसे उनकी अधोवायु निकल गयी और वे तुरतही जग पड़े। आँखे मींचते-मींचते बादशाहने कहा,— आज मैंने सपनेमें अपने बापको देखा और खूब ...

वीरबलने कहा,—"हाँ धर्मावतार! मैंने भी आपके बापकी आवाज़ सुनी थी। वे बहुत ज़ोरसे बातचीत कर रहे थे।" यह सुनकर बादशाह बहुत शर्मिन्दा हुआ।

बे ढब दिल्लगी।

—:*:—

एक दिन बादशाहने वीरबलसे पूछा,—"वीरबल! तुम्हारी शादी हुए कितने दिन हुए?" वीरबलने कहा,—"पाँच बरस।" बादशाहने फिर पूछा,—"बच्चे कितने हैं?" वीरबलने कहा,—"एक।" अकबरने कहा,—"बड़े आश्चर्य्य की बात है। खान-खाना की शादी हुए तीनही साल हुए और उनके तीन बच्चे हुए और तुम्हारे पाँच बरसमें एकही बच्चा हुआ।" वीरबलने कहा—"हुजूर! ताज्जुब की तो कोई बात नहीं है—उनके पास सिपाही बहुत हैं।" बादशाहको इस दिल्लगी पर बड़ी हँसी आयी, पर खान-खाना तो जल कर खाक हो गया।

सूर्य पश्चिममें क्यों छिपता है?

एक दिन वीरबलने बादशाहसे कहा,—"पृथ्वीनाथ! क्या आप बतला सकते हैं कि, सूर्य पश्चिममें क्यों छिपता है?" बादशाहने कहा,—"यह सवाल

तो किसी बेवकूफ़से करते।" वीरबलने चटपट उत्तर दिया, "इसीलिये तो आपसे पूछा है।" बादशाह सुनकर मुस्करा दिये।

तोरमें मोर।

—:०:—

एक समय बादशाह वीरबलको साथ लेकर हवा खाने निकले थे। बादशाहने देखा कि एक मोर अरहरके खेतमें धंसा जा रहा है। देखते ही बादशाहको दिल्लगी सूझी और बोले, "वीरबल! तोरमें मोर धंसा जाता है।" वीरबलने कहा,—"हाँ, धर्मावतार! तोर फटा जाता है, मोर धंसा जाता है।" यह जवाब पाकर बादशाह की बोलती बन्द हो गयी।

वीरबलका धोवी।

—:o:—

एक दिन वीरवलने वादशाहसे कहा कि, हुज़ूर! मेरे घरके नाई-धोवी भी हाज़िरजवावीमें पूरे हैं। वादशाहने कहा कि, अच्छा अपने धोवीको बुलवाओ, मैं उसकी परीक्षा लूँगा। धोवी जब आया, तब वादशाहने पूछा, "तुम स्त्री भी रखते हो!" धोवी वोला, "कुन्दा कराती हो तो कपड़े मुझे दे दीजिये।" सुनकर वादशाह वहुत प्रसन्न हुआ और उसने वीरवलकी वातको सच समझा।

———

सपने की दिल्लगी।

—:*:—

एक दिन वादशाहने कहा कि वीरवल! मैंने रातको एक अजीव सपना देखा है। मैने देखा कि मैं तो शहदके कुण्डमें गिर पड़ा हूं और तुम
ाखानेमें। सुनतेही वीरवलने कहा,—"धर्मावतार! ठाक
ही सपना मैंने भी रातको देखा था, फ़र्क इतनाही है कि
ने इतना और देखा कि, आप मेरा वदन चाट रहे थे और
आपका वदन चाट रहा था।" यह सुन वादशाह लज्जित
गया।

———

शरावी की वड़।

—:*:—

एक दिन वादशाह हाथी पर सवार हो, दिल्लीकी सड़कोंपर गश्त लगा रहे थे। उन्हें देखकर किसी शरावी वनियेके लड़केने कहा,—"ओ हाथी-वाले! हाथी वेचेगा?" उसका यह कथन सुनकर वादशाहको वड़ा क्रोध आया और उसने उसे पकड़वा मँगाया। वह रातभर हवालातमें कैद रहा। दूसरे दिन जब वह वादशाहके रूवरू पेश किया गया, तव वादशाहने पूछा,—"क्यों वे! हाथी नहीं लेगा?" वीरवलने देखा कि यह तो कल शरावके नशेमें था, अपने हवासमें था नहीं, इस लिये इसे वादशाहके कोपसे वचाना चाहिये। यह विचारकर वह वीचमेंही वोल उठा,—"हुजूर! इसकी क्या ताकत है जो हाथी मोल ले? जो खरीदार था, वह तो रात वीततेही चल दिया।" वादशाहको वीरवलकी वात पसन्द आगयी और उसने वनियेके लड़केको छोड़ दिया।

हमारा नाम लिखो।

—:*:—

एकवार वादशाहने वीरवलसे कहा,—"हिन्दूलोग चिट्ठीपत्री लिखते समय सिरेपर रामनाम लिखते हैं। उसकी जगह हमारा नाम लिखा जाय

तो अच्छा हो।" वीरवलने कहा,—"क्यों न हो, तव तो आपके नामसे भी पानी पर पत्थर तैरने लगेंगे।" सुनकर वादशाह झेंप गया।

असलका कमअसल, कमअसलका असल, गद्दीका गधा और बाज़ारका कुत्ता।

—:※:—

किसी समय की वात है कि मलयके राजाने दिल्लीके शाहनशाह अकवरको लिख भेजा कि, हमारे पास शीघ्रहो कमअसलका असल, असलका कमअसल, गद्दीका गधा और वाज़ारका कुत्ता, ये चार चीजें भेज दीजिये, वरना लड़ाई की तैयारी कीजिये। पत्र पढ़कर वादशाहको कुछ चिन्ता हुई कि यह वैठे विठाये व्यर्थकी लड़ाई छिड़ा चाहती है। इसी समय वीरवल वहाँ आ पहुँचा और वादशाहसे चिन्ताका कारण पूछा। वादशाहने वीरवलको सव हाल कह सुनाया और कहा कि या तो ये चारों चीजें उसके पास भेज दी जानी चाहियें, नहीं तो लड़ाई करनी पड़ेगी। मैं इसी सोचमें हूं कि, इसको ये चीजें कहाँसे भेजी जायँ। वीरवलने कहा कि ये चीज़ें मिल तो सकती हैं, पर ज़रा मुश्किलसे। इसलिये आप उस राजासे एक वर्षकी मुहलत माँगें। वीरवलके कहे मुताविक़ चिट्ठी लिख दी गयी। इसके अनन्तर वीरवलने एक लाख रुपया वादशाहसे इन चीज़ोंके प्राप्त करनेके लिये माँगा।

रुपये लेकर बीरबल मलयके राजाकी राजधानीमें चला गया और वहाँ कोतवालीके पास एक ख़ूबसूरत मकान भाड़ेपर लेकर व्यापार करना आरम्भ किया। थोड़े ही दिनोंमें इसकी कोतवालसे ख़ूब जानपहचान हो गयी। नाचना-गाना, पान-तमाखू और इत्रफुलेलकी धुँआधार होने लगी। ख़ूब गुलछर्रे उड़ने लगे। शहरमें जहाँ कोई नई रण्डी या गवैयेके आनेकी ख़बर मिलती कि, कोतवाल साहब साहूकारके पास पहुंचते और कहते कि उसका नाच या गाना अवश्य होना चाहिये। इसी तरह चारयारीका रंग दिन-दिन गहरा होता गया। एकबार कोतवालको समाचार मिला कि एक बड़ी ही ख़ूब-सूरत सोलह वर्षकी रण्डो शहरमें आयी है, जो नाचने और गानेमें अपना सानी नहीं रखती। ख़ूबसूरतीमें तो गोया हूरही है। कोतवालने साहूकारके पास आकर नाच करवानेकी फ़र्मायश की, साहूकारने स्वीकार कर लिया। वह रण्डी जब महफ़िलमें आकर गाने लगी, तब सुननेवालोंका दिल हाथसे निकल गया। साहूकारने उसे दो सौ रुपये इनाम दिये। रण्डीने आजतक ऐसा बेढब दानी कहीं नहीं पाया था। साहूकारको उस रण्डीने अपने घर बुलाया और वह रातभर उसके पास रहा। आनन्द सम्भोग कर प्रातःकाल वह लौट आया। रोज़ योंही मज़े उड़ने लगे। कुछ दिन बीतनेपर कोतवालने साहूकारसे व्याह करनेको कहा और एक अच्छे कुलीन घरमें उसकी शादी करा दी।

जवसे वह वहू उसके घर आयी, तवसे उसने यह नियम सा कर लिया कि, जव वाहर जाता तव उसकी पीठपर कोड़ा मारता। एकदिन साहूकार एक पका हुआ तरवूज़ वाज़ारसे ले आया और उसे काट-कर रूमालमें वाँध लिया। उसमेंसे लाल-लाल जल गिरकर रूमालसे वाहर छनने लगा। इसके वाद उसे सन्दूक़में वन्द कर ताला लगा दिया और अपनी स्त्रीको दो कोड़े जमा कर वोला,—"देखना, किसीसे न कहना, मैंने राजाके लड़केका सिर काटकर इसमें वन्दकर दिया है।" यह कह और दो कोड़े जमा कर वह तो वाहर चला गया और स्त्री ज़ोर-ज़ोरसे रोने लगी। कुछही देरमें साहूकारका मित्र कोतवाल उससे मिलनेके लिये आया। उसकी स्त्रीको रोते देख वोला "क्यों ? आज तुम इस प्रकार ज़ोर-ज़ोर क्यों रोरही हो ? तुम्हारे पति कहाँ गये ?" उसने कहा,—"मेरा पति आज राजाके लड़केका सिर काटकर सन्दूकमें वन्दकर गया है। मैं एक तो उस वच्चेके तर्सके मारे और दूसरे अपने पतिके फाँसी लटकाये जानेके डरसे रो रही हूँ।" इतना कह उसने तो रोना वन्द किया और इधर कोतवालने साहूकारको पकड़नेके लिये सिपाही छोड़े। साहूकार रास्तेमें ही पकड़ा गया। उसने कहा,—"क्यों, कोतवाल साहव ! आपने मेरे मित्र होकर नाहक़ इन सिपाहियोंकी मार और गाली क्यों खिलवायी ?" कोतवालने कहा,—"तुम इस समय मेरे मित्र नहीं हो, तुमने वहुत वड़ा अपराध किया है।" इसके वाद

वह साहूकारको राजाके सामने ले गया और कहा कि महा-राज! इसने राजकुमारका सिर काटकर सन्दूकमें बन्द किया है और अपनी स्त्रीको बहुत मारा कूटा है। राजाने बिना विचारे उसे झटपट फाँसीका हुक्म दे दिया। साहूकारने अपने नौकरसे यह संवाद अपनी स्त्रीके पास भिजवाया। उसने कहा, "वह तो मुझे नित्य मारता था, उसे फाँसी लगे यही अच्छा है।" नौकरने आकर ज्योंका त्यों वह संवाद साहूकारको कह सुनाया। इसके बाद उसने वेश्याके पास आदमी भेजकर कह-लाया, कि मैं तेरेही घरके आगेसे जाऊंगा। कोतवाल उसे वध्यभूमिको ले जाते समय वेश्याके घर क तरफ़से ले चला। वेश्याने उसे देख उदासीके साथ कहा,—"कोतवाल साहब! आप इसे दो घड़ीतक फाँसी न देना, मैं इसकी सिफ़ारिश करनेके लिये राजाके पास जाती हूँ।" यह कह उसने २००) घूसके कोत-वालको दिये। कोतवालने उसकी फाँसी दो घड़ीके लिये रोक दी।

इधर वह रण्डी ख़ूब सजधजकर राजाके पास गयी और अपने हावभावकटाक्ष और मधुर गानसे राजाको प्रसन्न किया। राजाने उससे कहा कि मैं तुझसे बहुत प्रसन्न हूँ, जो इच्छा हो मांग। उसने कहा कि जिस साहूकारको आज फाँसीकी आज्ञा हुई है, उसकी जांबख़शी कर दीजिये। राजाके दूतोंने जाकर कोतवालके पंजेसे साहूकारको छुड़वा दिया। वेश्या साहूकारको अपने घर ले गयी और बोली कि अब तुम मुझे छोड़कर कहीं न जाओ।

उसने कहा कि अब तो मैं देश जाता हूं, पर जल्दीह लौटकर आऊँगा और तुमको साथ ले जाउँगा।

वीरवलने वहांका कारवार उठा दिया और दिल्ली जाकर वादशाहसे निवेदन किया, कि मलयके राजाकी मँगायी हुई कुल चीज़ें तैयार हैं, आप वहाँके राजाके नाम पत्र लिख दें, कि आपकी माँगी हुई चारों चीजें तैयार हैं। वे इस आदमीके हाथ भेजी जाती हैं, रसीद भेज देना। इसी मज़मूनकी वादशाही मुहर लगी हुई चिट्ठी लेकर वीरवल मलयके राजाके पास पहुंचा और दरवारमें पहुंचकर वादशाह की चिट्ठी दिखलायी। राजाने जब चीज़ें मांगीं तब उसने कहा,—"आप पहले अमुक स्त्री (जिसे उसने साहूकार वन कर व्याहा था) और अमुक वेश्याको वुलवाले', तव मैं चीज़ें दूंगा।" वे दोनों हाज़िर की गयीं। वीरवलने अपने साहूकार वनकर आनेका सारा क़िस्सा सुनाकर कहा,—"महाराज! देखिये यह मेरी व्याहता स्त्री थी, जब इसे मेरे फाँसी लटकाये जानेका हाल मालूम हुआ तब इसने मेरी रक्षा तो की नहीं, उलटे मेरे मरनेमें आनन्द माना। इसीके फ़सादसे मेरी गिरफ्तारी भी हुई थी। यह तो आपकी माँगी हुई पहली चीज़—असलका कम असल है; क्योंकि इसने कुलीनकी वेटी होकर पतिको मारना चाहा। यह वेश्या कम-असलका असल है; क्योंकि एक नीच रण्डी होकर इसने मेरी जान वचायी। और ये कोतवाल साहव वाजारके कुत्ते हैं। इन्होंने मेरे लाखों ही खापीकर उड़ा दिये तो भी मुझे

गिरफ़तार किया और ज़रा भी मुरौव्वत न की। राजाने पूछा, "सब तो हुआ पर गद्दीका गधा कहाँ है ?" बीरबलने कहा,— "हुज़ूर ! यह ख़िताब आपको ही ज़ेबा देगा, क्योंकि आपके पास जब कोतवालने मुझे पेश किया, तब आपने जाँचपड़ताल भी न करायी और फाँसीकी हुक्म दे दिया। आपके राजकुमार तो सहीसलामत आपकी बगलमें आजतक बैठे हैं, फिर आप व्यर्थ में एक आदमीकी जान लेनेको तैयार थे। भलाहो इस रण्डीका जिसने मुझे मरनेसे बचाया।" राजा यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और चारों चीज़ोंकी रसीद लिखकर बीरबलके हवाले की। इसके बाद वह उस स्त्री और वेश्याको साथ लेकर दिल्ली चला आया।

बादशाहने जब यह सारा हाल सुना, तब बड़ा ही प्रसन्न हुआ और बीरबलको बहुतसा इनाम दिया।



विराट् आयोजन !

हर क़िस्म, हर पेशे और हर जातिके आदमी के
सदा-सर्वदा काम में आनेवाले अपूर्व ग्रन्थरत्न।

बिना उस्तादके वैद्य-विद्या सिखानेवाले ग्रन्थ।

१ स्वास्थ्यरक्षा।

भारतमें ऐसे हिन्दी-पढ़े-लिखे मनुष्य बहुत कम होंगे, जिन्होंने बाबू हरिदास वैद्य-लिखित "स्वास्थ्यरक्षा" की कम-से-कम तारीफ न सुनी हो। आज तक इस ग्रन्थके पाँच-पाँच और तीन-तीन हज़ारके सात संस्करण हो चुके। राजा महाराजा, सेठ-साहूकार, जज-वकील, प्रोफेसर-माष्टर और विद्यार्थी, स्त्री और पुरुष, बालक, जवान और बूढ़े, अमीर-उमरा और ग़रीब किसान तकके यहाँ यह अमूल्य ग्रन्थ जा पहुंचा है। देशका इस ग्रन्थने कितना उपकार किया है, कितने जीवोंकी प्राणरक्षा की है, कितने नौजवान उठती उमरके पट्ठोंको इसने कुराहसे हटाकर सुराह पर लगाया है, इसको हम अपनी क़लमसे लिखना अच्छा नहीं समझते। आप जिस हिन्दी-पढ़े-लिखेसे पूछियेगा, वही कहेगा कि, "स्वास्थ्यरक्षा" वास्तवमें "स्वास्थ्य-रक्षा"ही है। जैसा उसका नाम है, वैसेही उसमें गुण हैं।

अगर आप सदा निरोग रहना चाहते हैं, अगर आप पूर्ण आयु भोगते हुए सुखसे ज़िन्दगीका बेड़ा पार करना चाहते हैं, अगर आप स्त्रियों को अपनी सच्ची चाहनेवाली बनाया चाहते हैं, अगर आप सुन्दर और बलवान सन्तान चाहते हैं, अगर